फिरोजशाह मेहता

आधुनिक भारत के निर्माता

फिरोजशाह मेहता

होमी मोदी

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

आषाढ 1895 जुलाई 1973

यह पुस्तक होमी मोदी लिखित सर फिरोजशाह मेहता ए पालिटिकल बायग्राफी का संक्षिप्त संस्करण है और एशिया पब्लिशिंग हाउस बम्बई की अनुमति से प्रकाशित की गई है।

मूल्य 4 25

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
पटियाला हाउस, नई दिल्ली 1 द्वारा प्रकाशित।

क्षेत्रीय कार्यालय
बोटावाला चैम्बर्स, सर फिरोजशाह मेहता रोड, बम्बई 1
8, एस्पलेनेड ईस्ट, कलकत्ता 1
शास्त्री भवन, 35 हडडोस रोड, मद्रास 6
तथा इंडियन आर्ट प्रेस, कैलाश कालोनी, नई दिल्ली, द्वारा मुद्रित।

पुस्तकमाला के सम्बन्ध मे

इस पुस्तकमाला का उद्देश्य भारत के उन महान पुरुषो और नारी रत्ना की जीवनिया प्रकाशित करना है, जिन्हाने देश के पुनर्जागरण मे तथा आजादी की लडाई मे प्रशसनीय यागदान किया है।

वतमान तथा आने वाली पीढ़िया को इन महान नेताओ के बारे में जानना बडा जरूरी है। परन्तु बहुत से जननायको की जीवनियो का पूरा-पूरा ब्यौरा उपलब्ध नहीं है। इसी कमी को पूरा करने के लिए इस पुस्तकमाला के अन्तगत, विद्वान लेखको द्वारा लिखित महान नेताओ की सक्षिप्त तथा सरल जीवनियाँ प्रकाशित की जाएगी।

इस पुस्तकमाला के प्रधान सपादक प्रमुख पत्रकार व लेखक श्री आर०आर० दिवाकर हैं।

विषय सूची

		पृष्ठ संख्या
1	प्रारम्भिक काल	1
2	इग्लैंड मे जीवन	6
3	वकालत के प्रारम्भिक वर्ष	12
4	राजनीतिक शिक्षुता	18
5	म्युनिसिपल आन्दोलन के क्षेत्र मे	25
6	लार्ड लिटन का प्रयास	40
7	इलबर्ट बिल	46
8	नागरिक क्षेत्र मे सम्मान	53
9	कांग्रेस का जन्म	60
10	1888 का म्युनिसिपल विधान	65
11	सफल वकील के रूप मे	70
12	कांग्रेस के नेता के रूप मे	75
13	सरकार और नगरपालिका	86
14	बम्बई कौंसिल मे	91
15	इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे कार्य	96
16	कौंसिल से त्याग पत्र	115
17	इग्लैंड की यात्रा	122
18	फिरोजशाह और गोखले	127
19	फिरोजशाह और कांग्रेस	134
20	विश्वविद्यालय सुधार	142
21	सरकार द्वारा उपाधि	147
22	फिरोजशाह के विरुद्ध षडयन्त्र	154
23	सूरत कांग्रेस	160
24	मोर्ले मिण्टो सुधार योजना	176
25	लार्ड साइडन्हैम और बम्बई विश्वविद्यालय	180
26	यूरोप की यात्रा	185
27	अंतिम वर्ष	189
28	उपसंहार	212

प्रारम्भिक-काल

1845 1864

भारत के बडे लोगो के बचपन के बारे म प्राय कम ही जानकारी मिलती है। इसलिए चरितनायक के बाल्यकाल पर हम केवल सरसरी नजर डालेंगे।

फिरोजशाह मेहता का जन्म 4 अगस्त सन 1845 को बम्बई नगर मे हुआ। इनके पिता व्यापारी थे। उन्होन अपन जीवन का अधिकाश भाग कलकत्ते म बिताया। एक समय वह प्रसिद्ध पी० एड सी० एन० कामा एड कम्पनी मे साझीदार थे। सन 1865 म शेयरो के उतार चढाव म इस कपनी का दीवाला निकल गया। वह धनी व्यक्ति थे तथा उन्होन अपने बाल बच्चो का पालन पोषण अच्छी तरह से किया। वह शिक्षा तो नाममात्र को ही पा सके, परन्तु उनकी रुचि साहित्य मे थी। उन्होन भूगोल की एक पाठय पुस्तक लिखी और रसायन शास्त्र के एक ग्रन्थ का गुजराती मे अनुवाद किया। उनके भाई सोराबजी बडे योग्य व्यक्ति थे। वह बैंक मे बडे ओहदे पर थे, सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी समस्याओ मे उनकी अत्यधिक दिलचस्पी थी।

उनका परिवार फोर्ट के पास की एक बस्ती म रहता था, जहां बहुत ही धनाढय लोग रहते थ। आजकल ये बस्तिया बहुत ही गदी है।

फिरोजशाह जब सात वष के थे, तो वह एक दु साध्य ज्वर से पीडित हुए। कई दिन तक अचेत पडे रह तथा उनके बचने की भी आशा न रही। विख्यात डाक्टर भाऊदाजी ने उन्ह देखकर कहा कि उनकी बीमारी का कारण उनका

तेज दिमाग है जो कभी शांत नही रहता। उन्होंने यह भी कहा कि यदि फिरोजशाह बच गए, तो बड़े आदमी बनेंगे। ऐसी ही भविष्यवाणी इनके चाचा सोराबजी ने भी, जब यह शिशु ही थे, इनका माथा देखकर की थी। कई दिन आशा निराशा में बीते। एक दिन अचानक ही, फिरोजशाह ने आंख खोली और जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया। जब उनसे रोने का कारण पूछा गया, तब उन्होंने सिसकते हुए कहा, "मैंने दादी को फुलवारी में देखा और उन्होंने मुझे धकेल कर बाग में से निकाल दिया।" घर के बड़े बूढ़ों ने इस स्वप्न को शुभ शकुन माना, उसी दिन से यह धीरे धीरे स्वस्थ होते गए।

फिरोजशाह की शिक्षा आयरटन स्कूल में आरम्भ हुई। इस संस्था की स्थापना श्री धनजीभाई कामा ने की, जो उनके पिता के साझीदार थे। स्कूल का नाम कामा परिवार के वकील आयरटन के नाम पर रखा गया, जिन्हें लड़कों की शिक्षा में विशेष रुचि थी।

सन 1855 में फिरोजशाह प्रसिद्ध 'ग्राव स्कूल' में गए। बंबई के बहुत से विख्यात व्यक्ति इसी संस्था से पढ़कर निकले थे।

उन्होंने छह वर्ष स्कूल में बड़ी मौज मस्ती से बिताए। इसके बाद उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की, जो नई ही शुरू हुई थी। इसके बाद वह ऐलफिन्स्टन कालेज में भरती हुए। यह कालेज उन दिनों गोवालिया टैंक रोड पर 'टैंकरविल' नामक इमारत में था।

फिरोजशाह उत्साही और परिश्रमी थे। इतिहास व अंग्रेजी साहित्य में उन्हें विशेष रुचि थी। उन्होंने असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया। उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली था। उनका कद ज्यादा ऊंचा न था पर उनके कंधे चौड़े, नैन-नक्श तीखे और बदन सुगठित था। उनका बातचीत का ढंग बहुत आकर्षक था, जिसके कारण उनके मित्रों का दायरा बहुत बड़ा था। इनमें से अनेक बाद के जीवन में भी उनके साथ रहे।

फिरोजशाह प्रसिद्ध शिक्षा विशारद सर अलक्जैंडर ग्रांट के कृपापात्र बन

गए, जो कालेज के प्रधानाचार्य थे। फिरोजशाह का लिखा एक लेख उन्हें इतना पसन्द आया कि उन्होंने उसे कालेज के लेखागार में सुरक्षित रखने की आज्ञा दी।

सर अलक्जेंडर ग्राट के हस्ताक्षर से फिरोजशाह की पढाई की जो वार्षिक रिपोर्ट उनके पिता को भेजी जाती थी उसमें उनके आचरण को उत्तम तथा पढाई की प्रगति को बहुत ही अच्छा बताया जाता था। अक्सर देखने में आता है कि कुशाग्र बुद्धि लोग पढने में अधिक परिश्रम नहीं करते। परन्तु फिरोजशाह परिश्रम से नहीं घबराते थे। वह उन विरले पुरुषों में थे, जिनमें स्वाभाविक प्रतिभा के साथ मेहनत करने की क्षमता भी होती है।

फिरोजशाह पढाई के साथ साथ स्वास्थ्य पर भी ध्यान देते थे। क्रिकेट खेलने का उन्हें बहुत शौक था। उस समय इस खेल को कम ही लोग खेलते थे। सर अलक्जेंडर को भी इस खेल का शौक था तथा वह अपने शिष्यों को भी खेलने के लिए प्रोत्साहित करते थे। एक बार वह अपने साथ क्रिकेट की एक टीम लेकर दक्खिन गए जिसमें फिरोजशाह भी थे।

फिरोजशाह ने कालेज में ईमानदारी और स्वतन्त्रता का पाठ पढा। उनकी बुद्धि का विकास हुआ और उन्होंने खेलकूद में रुचि ली। उन दिनों कालेजों में संस्कृति और ज्ञान का अच्छा वातावरण था। संख्या थोडी होने के कारण हर विद्यार्थी पर विशेष ध्यान देना सम्भव था और छात्रों व शिक्षकों में घनिष्ठ संबंध थे। इन बातों के कारण छात्र की प्रतिभा का सर्वतोमुखी विकास सम्भव था। ऐसे वातावरण में फिरोजशाह की बुद्धि का तेजी से विकास हुआ। उन्हें सर अलक्जेंडर ग्राट के प्रेरक व्यक्तित्व से प्रभावित होने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। बाद के वर्षों में उन्होंने सदा इस प्रभाव को स्वीकार किया।

सन 1864 में फिरोजशाह ने बी० ए० परीक्षा पास की। सर अलक्जेंडर ग्राट ने उन्हें 'दक्षिणा' शिक्षावृत्ति दिलाई। इसी समय इन्हें एक दुर्लभ सम्मान भी मिला। गवर्नर सर बार्टल फ्रेर ने फिरोजशाह के बारे में सुना तथा उनसे मिलने के लिए उन्हें गवर्नमेंट हाउस बुलाया।

कुछ महीनों बाद एक घटना घटी, जिसका फिरोजशाह के जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा। स्वर्गीय श्री रुस्तम जी जमशेद जी जीजीभाई, जिनके पिता 'सर' की उपाधि पाने वाले पहले पारसी थे, बहुत ही प्रगतिशील विचारों के और बड़े दाना आदमी थे। उन्होंने दिसम्बर 1863 में 1,50,000 रुपये की राशि से एक ट्रस्ट बनाया, जिसका उद्देश्य था कि पांच भारतीयों को इंग्लैंड में जाकर वकालत का इम्तिहान पास करने के लिए आर्थिक सहायता दी जाए। सर अलेक्जेंडर के कहने से इस छात्रवृत्ति के लिए, फिरोजशाह ने भी आवेदन पत्र भेजा। उनके पिता को दान का धन ग्रहण करने में हिचक थी। वे चाहते थे कि फिरोजशाह व्यापार शुरू करें। सर अलेक्जेंडर ने उन्हें समझाया कि इस छात्रवृत्ति के लिए चुना जाना सम्मान की बात होगी, इसमें उनके पिता सहमत हो गए।

अपने प्रतिभाशाली शिष्य का आवेदन पत्र भेजते हुए, इस महान शिक्षा विशारद ने उनके चरित्र और योग्यता की प्रशंसा करते हुए लिखा

"यह कहते हुए मुझे अत्यधिक हर्ष हो रहा है कि श्री फिरोजशाह मेहता जी सब प्रकार से यह छात्रवृत्ति पाने के योग्य हैं। एलफिन्स्टन कालेज के जितने भी विद्यार्थियों से मेरा सम्पर्क रहा है, उनमें यह सबसे श्रेष्ठ हैं। इनमें बहुत से गुण हैं। यह परिश्रमी, चरित्रवान शिष्ट, और विनम्र हैं। खेल के मैदान में और पढ़ाई की कक्षा दोनों में वह मेरे सम्पर्क में आए हैं और मैं उनके पौरुष तथा साहस की गवाही देता हूं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि कृपया यह पत्र कमेटी के सामने रखें तथा उनसे आदर सहित कहें कि यदि वह फिरोजशाह मेहता को इस छात्रवृत्ति के लिए चुनेंगे तो वह अपना और पारसी समाज का नाम बढ़ाएंगे।"

सौभाग्यवश कमेटी ने फिरोजशाह को चुन लिया। कलकत्ते से स्वर्गीय डब्ल्यू० सी० बनर्जी चुने गए। सर अलेक्जेंडर दिसम्बर 1864 में इंग्लैंड जा रहे थे। उनकी इच्छा थी कि वह अपने शिष्य को भी साथ ले जाएं। इसलिए विशेष रियायत के तौर पर बी० ए० की परीक्षा के केवल छः माह बाद ही उन्हें एम० ए० की परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल गई। यह काम सरल न था परन्तु

जो फिरोजशाह को जानते थे, उन्हें उनके
विश्वास ठीक ही निकला और फिरोजशाह
पास करने वाले सबसे पहले विद्यार्थियों में

उन दिनों यूरोप जाना बड़ी भारी
के बाद फिरोजशाह ने दिसम्बर 1864 में

2

इग्लैंड मे

1865 1869

उन दिनो लदन म अधिक भारतीय नहीं थे, परन्तु जो थे, उनमे परस्पर मेल-मिलाप काफी था। परिस्थितया एसी थी कि उनका उठना बठना अधिकतर आपस मे ही होता था। फिर भी व इस नए देश और ससार को समझने का कोशिश करत।

फिरोजशाह और उनक साथिया की वेशभूषा पश्चिमी और पूर्वी वेशभूषा का मिश्रण थी। फिरोजशाह के एक मित्र ने एक दिन उन्ह कुछ साथियो के साथ आक्सफोड स्ट्रीट पर जात हुए देखा। मित्र के शब्दो म—' वे सब नए फशन के कपडे पहन हुए थ किंतु सिर पर वे छोटी छोटी मखमल की टोपिया पहने थे, जिनसे रेशम के झब्बे लटक रह थे।"

इस प्रकार की टोपी दादाभाइ नौरोजी पहनत थे। दादाभाई न भारतीय नवयुवको के हृदय पर गहरा प्रभाव डाला था। व नौरोजी को अपना पथप्रदशक और नेता समझते थे। इग्लैंड की पालमेट के सदस्य बनने से पहले, नौरोजी लदन मे जब कही जाते आते, तो वे बद गले का लम्बा काले रग का कोट और सिर पर काली मखमल की टोपी पहनते, जिस पर एक नीला रेशमी फुदना लगा होता था।

फिरोजशाह और उनके साथियो ने पहले तो इसी वेशभूषा को अपनाया, परन्तु बाद मे उनकी वेशभूषा उस समय के फशन तथा रिवाज के अनुरूप हो गई।

परन्तु अपने गुरु के सम्मानार्थ उन्होंने टोपी नहीं छोडा। विदेशी वेशभूषा के साथ यह टोपी मैल न खाती थी। टोपी के कारण लोगों की दृष्टि अवश्य ही इन पर पडती परन्तु इन बाके नौजवानो को इसकी परवाह न थी।

लदन मे फिरोजशाह की श्री और श्रीमती डी० डी० कामा के साथ बहुत मित्रता थी। उनके घर इनका अत्यधिक आना जाना था। कामा का घर शहर के बाहर बहुत ही रमणीक स्थान म था। लदन म रहने वाले बहुत से पारसी रविवार के दिन उनके घर एकत्रित होते। ये लोग खूब मजे उडाते और पारसी भोजन का रसास्वादन करते। इस साप्ताहिक महफिल मे मनबहलाव का मुख्य साधन ठेठ भारतीय खेल चौपड था। फिरोजशाह इस खेल म बहुत ही निपुण थे। यह खेल ज्यो ज्यो जमता है त्यो त्यो खेलने वालो का जोश बढता जाता है। खेलने वाले जोर जोर से गोटिया चौपड पर पटकते, और खूब शोर मचता था। यह शोर ऐसा होता जसे कोई दीवाल म कील ठोक रहा हो। एक दिन श्री कामा के पडोसी ने उनसे पूछा कि, क्या वह हर रविवार तस्वीरें ही टागते रहते है।

इन साप्ताहिक और दूसरी बठको म फिरोजशाह सदव बडे उत्साह से भाग लेते। हर काम मे वह अगुआ रहते और उनके साथी उनसे पथ प्रदशन की आशा रखते। मानो वह जन्मजात नेता हो। उचित अनुचित के प्रश्न पर उनके विचार सवमान्य थे और सभी लोग उनके निणय को बिना आपत्ति के स्वीकार कर लेते। उनका साथ सबको भाता था। अपनी सवतोमुखी प्रतिभा, शिष्टता, मनमोहक व्यवहार तथा कई खेलो म निपुणता के कारण वे सबके प्रेमभाजन बन गए थे।

कानून के अध्ययन के अतिरिक्त, उन्होंने कुछ समय फ्रासीसी भाषा सीखने मे लगाया और शीघ्र ही उन्हे इस भाषा की अच्छी जानकारी हो गई। उन्होंने क्रातिकालीन फ्रासीसी साहित्य पढा। वह मिराबो और उस महान क्राति के नेताओ के भारी प्रशसक थे।

ऊपर जिन लोगो का उल्लेख है उनके अलावा उन दिनो लदन मे

ऐसे भारतीय भी थे, जि होने आगे चक्कर देश पर अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोडी। य बहुत ही प्रतिभासम्पन्न युवक थे और उन्होंने अवसर का पूरा-पूरा सदुपयोग किया।

भाग्यचक्र के अनेक उतार चढ़ावो के बाद जमशेद जी टाटा न भारत की औद्योगिक चेतना का नेतत्व किया और देश के एक महान सफल औद्योगिक नता बन। मनमोहन घोष न अपनी छोटी सी जीवन यात्रा म ही एक महान राजनीतिज्ञ और नामी वकील के रूप मे प्रसिद्धि पाई।

बदरुद्दीन तयबजी की वकालत बहुत चमकी। फिर वह न्यायाधीश बनाए गए। अपन गुणो के कारण जन नता ा म उन्ह सम्मानित स्थान प्राप्त था, और अपने इन्ही गुणो के साथ वह न्यायाधीश क पद पर सुशोभित रहे। डब्ल्यू०सी० बनर्जी एक वकील तथा चोटी के नता हुए। इनके महान व्यक्तित्व न बगाल के सावजनिक जीवन पर अपनी अमिट छाप लगा दी।

ये सभी नवयुवक दादाभाई के निवास स्थान पर मिला करत थे और वही फिरोजशाह का इनसे सम्पक हुआ। यह सम्बन्ध आगे चलकर बहुत मूल्यवान सिद्ध हुआ। बनर्जी के साथ फिरोजशाह की राजनतिक मित्रता की नीव भी तभी पडी। फिरोजशाह और दूसरे निष्ठावान देशभक्त उन दिनो भारत म नए विचारो के बीज बोने, तथा जनता को उन्नत जीवन जीने की प्रेरणा द रहे थे। ऐसी स्थिति म दोनो की मित्रता से भारत को अत्यधिक लाभ हुआ।

इग्लैंड और ससार के इतिहास म वह एक स्मरणीय युग था। कारलाइल, रस्किन मिल डार्विन और हबट स्पेन्सर उस समय के कुछ महान उल्लेखनीय विचारक थे। इनके सन्देशो ने मानवजाति के विचारो मान्यताओ और विश्वासो को झकझोर दिया। मजिनी और विक्टर ह्यूगो के विचारो से इग्लैंड म कर्मनिष्ठा और व्यापक तथा उदात्त दृष्टिकोण का उदय हुआ।"

राजनतिक क्षत्र मे इग्लैंड म उदारवाद ने ज म लिया, जो उस देश की उन्नति का प्रेरक व सशक्त साधन बना। कावडन और ब्राइट तथा ग्लडस्टन न उस

समय के राजनतिक विवादा मे एक नई भावना जागृत की। अटलाटिक महासागर के पार अमरीका मे 'मानव जाति ने एक शानदार लडाई लडी', और दासता के अभिशाप को समाप्त कर दिया। उस समय मानव जाति के विचारो म क्राति आ रही थी। लाड मार्ले के शब्दो मे— उन लोगो के अलावा जो यह मानकर चलते है कि सब युग प्राय एक स ही रहे है तथा सभी स्त्री और पुरुष उन्नीस-बीस होते है कोई व्यक्ति इस बात से इकार नही कर सकेगा कि इस पीढी न निर्भीकता से आगे की ओर कदम बढाया।

यह था उस समय का वातावरण। इस वातावरण मे फिरोजशाह ने कुछ ऐसे सिद्धात अपनाए जो आग चलकर उनके राजनतिक जीवन का आधार बने। पाश्चात्य सभ्यता व विचारधारा के स्वस्थ तत्वो के सम्पक मे आकर उनका दृष्टिकोण व्यापक बना। उनके मन म साहस विचार-स्वातत्र्य तथा सुव्यवस्थित उन्नति के प्रति प्रेम जागृत हुआ। साथ ही साथ किंचित रूढिवाद भी उन्होने ग्रहण किया जो अग्रेजो के चरित्र के मूल मे विद्यमान है।

उनम शीघ्र ही उन गुणो का विकास हुआ जिनके फलस्वरूप वह दूसरे भारतीयो से बहुत ऊचे उठ गए। उनके विचारो म कुछ ऐसी परिपक्वता थी कि जो भी व्यक्ति उनके सम्पक मे आता, उनसे प्रभावित हुए बिना न रहता। सामयिक समस्याओ म उनकी विशेष रुचि थी, विशेषकर उन प्रश्नो मे, जिनका भारत पर प्रभाव पडता हो। वह ईस्ट इडिया एसोसियशन के बहुत सक्रिय सदस्यो मे से थ। ईस्ट इडिया एसोसियशन की स्थापना दादाभाई नौरोजी ने अक्तूबर 1866 म की थी। इस सस्था का लक्ष्य था 'स्वतत्र और निस्वाथ ढग से और वध उपायो स भारत के हितो और भलाई का समथन तथा सवधन करना।"

यह सस्था दादाभाई नौरोजी ने कुछ प्रबुद्ध भारतीय राजाओ की सहायता से स्थापित की थी। यह उस समय की बात है जब वह व्यापारिक मदी के पश्चात कुछ दिनो के लिए भारत आए थे। मदी से उस फम को भी घाटा हुआ जिसमे दादाभाई नौरोजी साझेदार थे। बाद मे यह सस्था रिटायर हुए एग्लो-इडियन अफसरो के हाथ पड गई। शुरू मे इस सस्था ने भारतीयो मे राजनतिक

चेतना जगाने और इग्लैड के लोगो को, भारत की समस्याओ से अवगत कराने म बहुत काम किया। इसकी वार्षिक रिपार्टो मे भिन्न भिन्न विषयो पर अमूल्य जानकारी है जो आज भी अत्यधिक उपयोगी है।

इस सस्था के सम्मुख फिरोजशाह ने एक निबध पढा जिसका शीर्षक था "बम्बई प्रेसीडेन्सी की शिक्षा प्रणाली।" इस सभा मे इस निबन्ध की बहुत प्रशसा हुइ। श्रोताओ ने इसे प्रतिभासम्पन्न, चतुराईपूर्ण तथा विस्तत निबध बताया। फिरोजशाह को कहा गया कि वह अपने विचार प्रस्तावो के रूप मे सस्था के सम्मुख पुन रखें।

इस निबध मे फिरोजशाह ने भारतीय शिक्षा के सच्चे उद्देश्य की व्याख्या की और यह विश्वास प्रकट किया कि अभी काफी समय तक जनसाधारण के लिए प्राथमिक शिक्षा की बजाय उच्च व उदार शिक्षा की ओर ध्यान देना होगा। यह सच है कि उच्च शिक्षा केवल मुठठी भर लोगो को ही मिल पायेगी परन्तु उनका कहना था कि सभ्यता की प्रगति के आन्दोलनो सुधार आन्दोलनो और क्रान्तियो का इतिहास यह बताता है कि जनता का उद्धार करने वाले लोग थोडे ही हुआ करते है। ऐसे लोग अपने सच्ची लगन गहन चिन्तन और व्यापक अन्त-र्दृष्टि से नए विचारो को जन्म देते और ढालते है और उन्हें सरल और सवग्राह्य रूप मे तयार करके जनता के सामने रखते हैं ताकि जनता उन्ही को प्रमाण और उदाहरण मानकर इसे स्वीकार कर ले।

फिरोजशाह जीवन भर अपने उक्त विचार पर दृढ रहे। उनकी यह दृढ धारणा थी कि देश की भाषाओ के माध्यम से उच्चतर शिक्षा नही दी जा सकती इसलिये ज्ञान के प्रसार का वाहन अग्रेजी ही होना चाहिए। कहना न होगा कि उच्च शिक्षा के माध्यम के प्रश्न पर उस समय जो विवाद था उसमे आज भी लोगों की दिलचस्पी कम नही है।

केवल शिक्षा सबधी विवाद म ही फिरोजशाह का हाथ नही था बल्कि उन्होंने उस समय की अनेको सावजनिक समस्याओ मे सक्रिय दिलचस्पी ली, जिसके

फलस्वरूप उनके सम्पर्क में आने वाले न उनके प्रतिभाशाली व्यक्तित्व को समझा और वे उससे प्रभावित हुए।

प्रोफेसर 'की' उन लोगों में से थे जिनकी फिरोजशाह की योग्यता के बारे में बहुत ऊंची राय थी। सन 1869 में जब फिरोजशाह इंग्लैंड से वापस चले तो प्रोफेसर 'की' ने उनकी भूरि भूरि प्रशंसा की। लटिन भाषा के इस महान विद्वान ने लिखा 'पारसियों के बारे में पहले ही मेरी धारणा बहुत अच्छी थी परन्तु बिना चापलूसी के मैं कहूंगा कि आप में जो गुण मैंने देखे मेरी आशा से बढ़कर थे। मैं आशा करता हूं कि आप भारत में विशेषत पारसियों और हिन्दुओं तथा अन्य जातियों को भी समाज में उनके योग्य और ऊंचा स्थान दिलाने का भरसक प्रयत्न करेंगे। इस महान लक्ष्य का ध्यान में रखिए और बम्बई में चोटी का वकील बनने का प्रयत्न कीजिए। मुझे पक्का विश्वास है कि आपमें स्वाभाविक और अपने प्रयत्नों से अर्जित दोनों प्रकार के गुण हैं जिनसे आप बम्बई में वकालत में नाम पैदा कर सकेंगे।'

प्रो० 'की' ने यह चिट्ठी 1868 में फिरोजशाह के ब्रिटेन से लौटने से पूर्व लिखी थी। उन्हें उसी वर्ष बरिस्टर की डिग्री मिली।

अपने शुभचिन्तकों की शुभकामनाएं लिए फिरोजशाह सितम्बर 1868 में समुद्री जहाज द्वारा भारत के लिए रवाना हुए। उनके घनिष्ठ साथियों को उनका जाना बहुत अखरा, क्योंकि उन्हें लगता था कि फिरोजशाह के साथ जीवन का आनन्द भी बहुत कुछ चला गया। इंगलैंड में बिताए चार वर्ष फिरोजशाह के जीवन के सबसे अधिक आनन्दमय वर्ष थे। इस समय में फिरोजशाह ने जो कुछ सीखा उसी के आधार पर उनके शानदार सार्वजनिक जीवन की नींव पड़ी।

3
वकालत के प्रारम्भिक वर्ष

1868 1876

भारत आते समय फिरोजशाह का परिचय श्री विलियम वेडरबन से हुआ। श्री विलियम वेडरबन भारत में उच्चपद पर नियुक्त थे तथा भारत के सबसे निस्वार्थ और सच्चे हितैषियों में गिने जाते थे। भारत लौटने पर उन्होंने फिरोजशाह को जस्टिस आफ पीस के पद पर नियुक्त करवा दिया जिससे फिरोजशाह बम्बई की म्युनिसिपल्टी के कार्यों से शीघ्र ही परिचित हो गए। उन दिनों बम्बई की म्युनिसिपल्टी का काम इसी बैंच आफ जस्टिसिज के हाथों में था।

फिरोजशाह आते ही वकालत में जुट गए। इन्होंने अपोलो स्ट्रीट में स्थित पुराने से मकान में दफ्तर खोल लिया। वकालत चलने में समय तो लगता ही है, परन्तु फिरोजशाह का बेकार बैठना अखरता नहीं था, क्योंकि दिन भर का काम खतम करके हर शाम मित्रगण उनके दफ्तर में इकट्ठे हो जाते और समय अच्छी तरह बिताते।

उन दिनों उच्च न्यायालय जिस भवन में था बाद में उसी में वहीं ग्रेट वस्टर्न होटल खुला। अपील अदालत और दूसरे दफ्तर मजगाव में थे। उस समय न्याय पालिका में सर रिचर्ड काउच शीर्षपद पर थे जो कि एक विख्यात जज थे। न्यायालय में उनके अन्य साथी जज भी बहुत योग्य थे। उच्च न्यायालय में वकालत करने वाले वकील भी योग्य तथा प्रतिभाशाली थे। उन्हीं वकीलों में एक श्री टी० सी० ऐंस्टे भी थे जो अत्यन्त मेधावी होने के साथ साथ सनकी भी समझे जाते थे।

फिरोजशाह और उनके साथी छोटे वकीलो को अपने धंधे मे काफी कठिनाइया उठानी पडती थी। ये अधिकाश समय वकीलो के कमरे के बाहर वरामदे मे घूमकर बिताते। उन दिनो वकीलो की सख्या अधिक न थी और न ही आज की तरह इस व्यवसाय मे अधिक होड ही थी, फिर भी वकालत जमाना इनके लिए टेढी खीर थी। प्राय सारी वकालत ऐंस्ट, स्कोबल, ग्रीन, लथम व्हाइट, मरियो तथा ऐसे ही एक दो और विख्यात वकीलो के हाथ म थी। इन लोगो की बराबरी तो क्या इनके हाथो से छोटा मोटा केस निकाल पाना भी फिरोजशाह व उनके साथियो के लिए असम्भव था।

एक ओर न्यायवादी नए वकीलो की उपेक्षा करते थे और दूसरी ओर पुराने वकीलो के अहकार का ही ठिकाना न था। फिर भी फिरोजशाह व उनके साथी इससे निरुत्साहित नही होते थे। वे उत्साही और प्रफुल्ल नवयुवक थे तथा जीवन का पूर्ण आनन्द लेने म विश्वास रखते थे। मित्रमडली प्रतिदिन फिरोजशाह के दफ्तर मे इकट्ठी होती, वहा हसी मजाक होते, राजनीतिक वाद विवाद होता और चाय के दौर चलते।

इस गोष्ठी (मित्रमडली) म एक अलिखित नियम यह था कि जब भी कोई नया वकील आए तो वह सब साथियो को एडल्फी नामक होटल म दावत दे। यह होटल भायखला मे था जो कि एक फैशनेबल इलाका था। उन दिनो बम्बई म यही एक नाम का होटल था। इसके मालिक वृद्ध पलनजी थे। इनके व्यक्तित्व के कारण इन्हे बम्बई प्रेसीडेंसी के अग्रेज व भारतीय सब अच्छी तरह जानते थे। इससे यह होटल भी एक तरह की सस्था ही मानी जाती थी। फिरोजशाह और उनके साथियो की दावतें सर्वप्रिय थी। एक तो इससे मनोरजन होता, दूसरे आपस मे मेल मिलाप बढता था। एक नए वकील होमीवनेट ने दावत देने से कन्नी काटने की कोशिश की। फिरोजशाह मेहता और उनके मित्रो ने शरिफ के दफ्तर से छपा हुआ फार्म मगवाकर उस पर कठोर कानूनी भाषा म होमीवनेट का समन जारी किया कि वह फिरोजशाह मेहता के "भोजन न्यायाधिकरण' म उपस्थित हो और कारण बताए कि क्यो न उन्हे बिरादरी से बहिष्कृत किया जाए।

अदालत के चपरासी के हाथों अभियोगपत्र होमीबनेट का भेज दिया गया और मित्रमडली अपनी शरारत के परिणाम की प्रतीक्षा करने लगी। शाम का समय था। अदालत का चपरासी जब 'अभियोगपत्र' लेकर पहुचा होमीबनट कचहरी म था। वह चिडचिडे स्वभाव का व्यक्ति था, और उसे हसी मजाक बिलकुल पसन्द नही था। 'अभियोग पत्र' पाकर वह आप स बाहर हो गया। दौडे-दौडे आया और फौरन फिरोजशाह को आ पकडा, और उन्हें खिडकी से नीच फेंक देने की धमकी देने लगा। खिडकी के नीचे उन दिनो एक प्रसिद्ध व पुराना बकखाना था, जिसका आजकल नामोनिशान भी नही है। फिरोजशाह क मित्रों न तुरन्त बीच बचाव करा दिया और लडाई नही होन दी। होमीबनट न हरजाने के रूप मे इन लोगो को साधारण सा भोजन खिलाया तथा थाडी सी शराब भी पिलाई और इस तरह सुलह सफाई हो गई।

हसी खुशी के दिन थ। यौवन की आशाओ, और आकाक्षाओं स युक्त नवयुवक मित्रो के सग म फिरोजशाह म जो कल्पनाशक्ति व हाजिरजवाबी प्रगट होती थी वह बाद म नही रही। उन्होन उन्नति की। वह रिपन क्लब और प्रेसिडेन्सी एसोसियेशन म जात व एस्प्लेनड रोड पर स्थित उनके दफ्तर मे बैठक जमती। बातचीत करन मे वह अब भी मिलनसार विनम्र, हँसमुख तथा विनोदप्रिय थे परन्तु जवानी वाली बात नही रही।

वकालत के पहले वर्षों म फिरोजशाह बेकार जरूर रहे, परन्तु उन्होने समय व्यर्थ नही गवाया। वह नियमित रूप से कचहरी जाते, कानून की किताबो, न्याय ग्रन्थो और रिपोर्टो का बडे परिश्रम व लगन से अध्ययन करते। वह जस्टिस वेस्टरोफ और बेली की नजरो मे चढ गए। जस्टिस बेली भारतीय बरिस्टरो की छोटी सी टोली के प्रति बडी सहानुभूति रखते तथा उनकी आवभगत करते थे।

फिरोजशाह को पत्रिकाओं मे लेख लिखने का शौक था। वह इंडियन स्टेटसमेन मे भी लिखा करते थे। यह पत्रिका रोबर्टनाइट द्वारा चलाई गई थी जो न्याय पक्ष का समर्थन करने के लिए प्रसिद्ध पत्रकार थे। फिरोजशाह को रगमच

का शौक तो था ही, वह पत्रिकाओं में नाटकों की आलोचना करते। एक बार उनकी तीव्र आलोचना से चिढ़कर एक नाटककार ने इनके विरुद्ध बहुत ही जहर उगला। उनके एक साथी दाजी पटेल बहुत उच्च व शरीफ घराने के लड़के थे। उनपर नाटकों का भूत हमेशा सवार रहता था। फिरोजशाह व दाजी पटेल ने मिलकर संस्थाओं के सहायतार्थ कई नाटक खेले। इसमें जो धन एकत्रित हुआ वह दान में दे दिया।

धीरे धीरे फिरोजशाह और उनके साथियों के पास भी मुकद्दमे आने लगे। ऐंस्टे मरियो, मक्फरसन ढकीब्रल तथा अन्य बड़े वकील भी इन नवयुवक वकीलों के प्रति मित्रतापूर्वक व्यवहार करने लगे।

वकालत का काम करने की गति धीमी थी। फिरोजशाह के कई निकटतम साथियों ने छोटे मोटे प्रलोभनों में पड़कर, वकालत का धंधा छोड़ दिया तथा फिरोजशाह से बिछुड़ गए। परंतु फिरोजशाह को प्रारम्भ से ही अपनी योग्यता पर पूर्ण विश्वास था और उन्होंने निश्चय किया था कि किसी भी कारणवश वकालत नहीं छोड़ेंगे। उनका यह आत्मविश्वास ठीक ही निकला। लोग उनकी योग्यता, वक्तृत्व शक्ति और जिरह करने की कुशलता का लोहा मानने लगे।

पहला मुकद्दमा जिससे फिरोजशाह को ख्याति मिली, वह था पारसी टावर्स आफ सायलेंस केस (Parsi Towers of Silence case)। लोग इस मुकद्दमे के बारे में कई सप्ताह तक चर्चा करते रहे। इस मुकद्दमे में फिरोजशाह को ऐंस्टे के साथ काम करने का अवसर मिला। ऐंस्टे साहब पहले तो इस बात से प्रसन्न नहीं हुए कि एक अनुभवहीन भारतीय सहायक को साथ लगाया जाए किन्तु शीघ्र ही वह फिरोजशाह की योग्यता के कायल हो गए। हां, उन्हें फिरोजशाह की भारी भरकम पगड़ी कभी पसन्द न आई। ऐंस्टे साहब ने उनसे प्रभावित होकर खुले आम कहा था कि यह बहुत ही प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं और उनमें बड़प्पन के बीज मौजूद हैं।

यह तो रही बम्बई न्यायालय की बात। वास्तव में फिरोजशाह को मुख्य सफलता मुफस्सिल अदालतों में मिली। शुरू से ही गुजरात व काठियावाड़ से लोग अपने मुकदमों में उन्हें बुलाने लगे। यह प्रसिद्ध हो गया था कि वह अपने

प्रतिद्वन्द्वी वकील का मुश्किल म डाल देत हैं तथा बडे से बडे निरकुश जज व मजिस्ट्रेट से भी नही दबत।

सन् 1870 के लगभग सरकार न लाइसेंस टक्स लागू किया। इससे सूरत म दगा हो गया और मुकदमा चला। इस मुकद्मे म फिरोजशाह न बहुत नाम कमाया और उनकी धाक जम गई। वह मुफस्सिल क चोटी के वकाला म गिने जान लगे। इस मुकद्मे म उन्होन जसी चतुरता दिखाई और तगडी बहस की उसम वह गुजरात भर मे प्रसिद्ध हो गए तथा उनके पास चारा तरफ स मुकदम आने लगे।

इसके बाद उनकी वकालत खूब चल निकली। उनकी अधिकतर प्रेक्टिस मुफस्सिल अदालता म थी। यदि वह चाहत ता उन्ह बम्बई मे भी बहुत सा काम मिल सकता था क्याकि वहा भी उनके लिए मवक्किलो की कमी नहीं थी। किन्तु क्योकि उनका राजनीतिक काम दिन प्रतिदिन बढता जाता था इससे उन्ह मुफस्सिल अदालत म वकालत करना ही ठीक बठता था। मुफस्सिल अदालत म आमदनी प्राय हाईकोट जितनी ही थी और काम भी हाईकोर्ट स कम करना पडता था।

वकालत के सिलसिल म उन्ह बम्बई प्रेसीडेंसी के सब भागा से जाना पडता था। इसस उन्ह वहा के लोगो के रहन सहन और आचार विचार से घनिष्ठ परिचय हो गया। उन दिनो सफर करने का तथा बाहर ठहरने का इन्तजाम अच्छा नही था। उन दिना रेलगाडिया सब जगह नही फली थी। सफर करना कष्टदायक होता था, परन्तु फिरोजशाह सब कठिनाइया सह लेते। उन दिनो उनम वह नाजुक मिजाजी नही आई थी जो कि उनम बाद के जीवन म आ गई।

कभी-कभी उन्ह चीफ कमिश्नर की अदालत मे जाना पडता था, जो कि आबू पवत थी। वहा अहमदाबाद से दीसा होकर बलगाडी (दुमनी) मे जाना पडता था। गर्मी के मौसम मे राजपूताने के मदाना म आग बरसती है। भीषण गर्मी म दिन के समय सफर करना असम्भव था। रातभर वह बलगाडी म सफर करत तथा दिन के समय किसी छोटे मोटे डाक बगले या विश्राम घर (रेस्टहाउस) म आराम करत।

असुविधा व थकावट होते हुए भी उनकी दिनचर्या बधी हुई थी। वह नियमित रूप से सुबह उठकर स्नान करते, इससे सफर का कष्ट और गर्मी के होते हुए भी उन्हें खूब भूख लगती और वह डटकर नाश्ता करते। उन्हें शारीरिक श्रम पसन्द नहीं था और कालेज के दिनों के बाद, उन्होंने हमेशा ही इससे बचने की कोशिश की।

फिरोजशाह के चरित्र व मनोवृति पर उस समय के वातावरण का बडा प्रभाव पडा। उस समय के वकील बडे तेजस्वी थे। वे अपने अधिकारों की रक्षा के लिए हमेशा तत्पर रहते। सन् 1871 में, इंडियन एवीडेंस ऐक्ट सरकार के विचाराधीन था। इस बिल में कुछ धाराएं थी, जो अप्रत्यक्ष रूप से भारतीय वकीलों की ईमानदारी और स्वतंत्रता पर आक्षेपकारक थी। वकीलों ने इन धाराओं के विरुद्ध भारत के वाइसराय लार्ड मेयो के पास कडा विरोधपत्र भेजा।

उस समय के उच्चकोटि के न्यायज्ञ सर जेम्स फिटसजेम्स स्टिफेन ने इस अधिनियम का मसौदा तैयार किया था। यद्यपि उन्होंने इसकी शिकायत की, कि बम्बई के वकील वर्ग ने जो विरोधपत्र भेजा है, उसमें बहुत ही कटुभाषा का प्रयोग किया है, फिर भी उन्होंने आपत्तिजनक धाराओं को बिल से निकाल देने में ही भलाई समझी।

4

राजनीतिक भिक्षुता

फिरोजशाह की परिस्थितियाँ और उनकी आदतें ऐसी थीं कि उन्हें जीवन यापन के लिए पर्याप्त धन कमाना आवश्यक था, फिर भी उन्होंने अपनी युवावस्था से ही स्वयं को सार्वजनिक कार्यों में लगाने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। इंग्लैंड से लौटने के कुछ समय बाद ही, वह उन व्यक्तियों के साथ हो गए जो वाणिज्य व व्यापार में और पैसा कमाने में ही लिप्त बम्बई जैसे नगर में राजनीतिक सरगर्मी लाने का प्रयत्न कर रहे थे।

बम्बई में सर जमशेद जी जीजी भाई की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई। इसी नाम के एक और व्यक्ति भी सर की उपाधि ले चुके थे। जनता में बहुत उत्साह था और इसी सभा में ईस्ट इण्डिया एसोसियेशन की बम्बई शाखा की स्थापना की गई। बम्बई शाखा के मंत्री नौरोजी फरदूनजी बनाए गए। वह बहुत रूखे व कठोर स्वभाव के स्वतन्त्र प्रचारक थे तथा भारतीय हितों के अत्यधिक समर्थक थे। लोग इन्हें जनता की अदालत कहते थे, परन्तु कुछ समय से इन्होंने राजनीतिक कार्यकलापों में भाग लेना छोड़ दिया था।

नई संस्था के उद्देश्य कुछ भिन्न थे। दादाभाई नौरोजी ने बम्बई शाखा की नींव रखी। इनका कहना था कि इस नई संस्था का काम केवल मूल संस्था का प्रतिनिधित्व और संदेशवाहन करना ही है। आगे चलकर जब मूलसंस्था अपने संस्थापकों के लक्ष्यों व महत्वाकांक्षाओं की द्योतक नहीं रही तो बम्बई शाखा के कोष का अधिकार किसके पास हो, इस प्रश्न को लेकर बहुत कटु विवाद हुआ। वाद विवाद

का कारण यह था कि, बम्बई शाखा का निर्माण होते ही, उस पर मूलसंस्था की एजेंसीमात्र होने की मोहर लग गई थी। इस नई संस्था के प्रथम मन्त्री फिरोजशाह चाल्मगश वागले नियुक्त किए गए।

राजनीतिक कार्यकर्ताओं की पंक्ति में शामिल होने वाले, नये रगरूट फिरोजशाह का सर्वप्रथम सार्वजनिक कार्य था, दादाभाई नौरोजी की विशिष्ट दशसेवाओं के सम्मानार्थ थैली इकट्ठी करना। उन दिनों दादाभाई नौरोजी जिन्हें भारत का वृद्ध कहा जाता था, राजनीतिक जीवन की पहली मंजिल पर थे। उनके महान आदर्शों ने असंख्य लोगों को प्रेरित किया और यही आदर्श आधी शताब्दी से अधिक उनकी राजनीतिक चेतना के आधार रहे। भारतीय जनता नौरोजी को पहले से ही लोकहित का निर्भीक समर्थक मानती थी। बम्बई के नागरिक जो थैली उन्हें भेंट करने के लिए एकत्रित कर रहे थे, वह उनके प्रति विश्वास व आदर का प्रमाण था।

फिरोजशाह इस सुखद कार्य में पूरे उत्साह से जुट गए। फिरोजशाह की लगन, उनके साथियों के परिश्रम तथा बम्बई की जनता के उत्साह स्वरूप अच्छी खासी रकम इकट्ठी हो गई। जुलाई 1869 में एक सभा हुई, जिसमें दादाभाई को थैली भेंट की गई। इस सभा में सभी समुदायों के लोग आए थे। यह कहा जाता है कि यह बम्बई के नागरिकों की सर्वप्रथम प्रतिनिधि सभा थी। दादाभाई नौरोजी की महानता देखिये। यद्यपि वह स्वयं निर्धन थे और उन्हें भी पैसे की आवश्यकता थी, किन्तु उन्होंने बाद में यह थैली भी उन उद्देश्यों के लिए ही खर्च कर दी जो उन्हें प्रिय थे।

उस समय लोगों का ध्यान एक ऐसे वाद विवाद की ओर आकर्षित हुआ जो कि आधी शताब्दी से अधिक समय तक चलता रहा। वाद विवाद का विषय था, भारतीयों का सरकारी नौकरियों में लिया जाना। यह उस समय देश की सर्वप्रमुख राजनीतिक समस्याओं में से थी।

1833 के ऐक्ट में समानता के सिद्धान्त को जोरदार शब्दों में व्यक्त किया

गया था। उसम घोपणा की गई थी कि "उक्त देश के किसी भी निवासी को अथवा "अग्रेजी सम्राट" की उन देशो मे रहने वाली और वही की जन्मी प्रजा को धर्म, ज मस्थान, वश अथवा वर्ण के आधार पर, ईस्ट इडिया कम्पनी के अधीन किसी पद, स्थान अथवा नौकरी के लिए अयोग्य नही ठहराया जाएगा।

घोपणा के समय इस प्रश्न पर बहुत सोच विचार हुआ था। सर राबर्ट पील, लार्ड लण्डसडाउन और दूसरे ब्रिटिश राजनेताओ ने भारतीयो की वैध अभिलाषाओ और आकाक्षाओ के प्रति सहानुभूति प्रकट की थी। 1853 म यह प्रश्न फिर सामने आया तथा प्रशासन मे और अधिक भारतीयो की नियुक्ति के लिए, यह सुझाव रखा गया कि इग्लैड के साथ-साथ भारत मे भी एक ही समय इडियन सिविल सर्विस (Indian Civil Service) की परीक्षा ली जाए।

तदनुसार 1860 मे इडिया आफिस की एक विभागीय समिति ने इस प्रश्न का अध्ययन किया। यह कमेटी इस निष्कर्ष पर पहुँची कि अधिक से अधिक सख्या म भारतवासियो का प्रशासन मे लाना न केवल न्यायसगत ही है बल्कि आवश्यक भी है। हाँ इस नीति से अग्रेजो की प्रभुता को आँच नही आनी चाहिए। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट म यह मानते हुए कि इस समय भी भारतीयो के सरकारी नौकरी म प्रवेश पर कोई प्रतिबध नही है, आगे कहा

"वास्तव म व इसस वचित हैं। कानून की दृष्टि म व्यावहारिक रूप से व सरकारी नौकरियो के पात्र हैं परन्तु भारत म बसे अथवा कुछ समय इग्लैंड मे आकर रहने वाले भारतवासियो के माग मे इतना अधिक कठिनाइयाँ हैं कि, इग्लैंड मे होने वाली सिविल सर्विस की परीक्षा मे उत्तीर्ण होना उनके लिए प्राय असम्भव ही है। यदि इस भेद भाव को दूर कर दिया जाए तो लोग हम पर यह दोष न लगा सकेंगे कि हम कहते कुछ है और करते कुछ और ही है।"

यह आन्दोलन कई वर्षों तक चलता रहा। इसे समाप्त करने के लिए, सर स्टफोर्ड नार्थकोट ईस्ट इडिया बिल लाए। इस बिल की छठी धारा के अनुसार भारत के अधिकारियों को यह अधिकार दिया गया कि भारतीयो को, चाहे वे

इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य हो या न हो किसी भी पद, स्थान या नौकरी पर नियुक्त किया जा सकता है। दूसरे शब्दो मे इस बिल का अर्थ यह था कि समान शर्तों पर खुली प्रतियोगिता के सिद्धान्त के स्थान पर, जिसकी लोग माँग कर रहे थे, चुनाव के सिद्धान्त को ठूस दिया गया। सरकारी नौकरी मे नियुक्ति के इस सिद्धान्त मे और त्रुटियो के अतिरिक्त सबसे आपत्तिजनक बात यह थी कि इससे सरकार को मनमानी करने की छूट भी मिलती थी।

इस बिल का मिला जुला स्वागत हुआ। 27 अप्रैल 1870 को ईस्ट इण्डिया एसोसियेशन की बम्बई शाखा की एक सभा हुई। इस सभा म फिरोजशाह ने अपना निबध पढा, जिसमें उन्होने प्रतियोगता के सिद्धान्त का जोरदार समथन किया। निबध के अन्त मे, तर्क वितर्क के बाद, उन्होने मैकाले के एक भाषण का बहुत ही प्रभावशाली अश उद्धृत किया। यह भाषण मकाले ने इग्लड के हाउस औफ कामस (House of Commons) मे दिया था जबकि 1853 का ऐक्ट विचाराधीन था। उस समय पहली बार सिविल सर्विस की प्रतियोगिता परीक्षा हुई थी। इस अश का निष्कर्ष यह था कि, जो युवक पढाई की प्रतियागिता मे अपनी विशिष्टता दिखलाते हैं आगे चलकर जीवन की होड मे भी वही अगुआ रहते हैं।

फिरोजशाह सरकारी नौकरी के लिए योग्यता की जाच के हेतु खुली प्रतियोगिता के तरीके को चुनाव के सिद्धान्त से बेहतर मानते थे। उनका विचार था कि चुनाव के सिद्धान्त से नौकरियो के लिए निकृष्टतम लोलुपता आरम्भ हो जायगी और यह सिद्धान्त अनुचित व निरुत्साहजनक होगा। इससे भारतीयो का कोई भला नही होगा बल्कि उल्टे वे हतोत्साह हो जाएगे। किसी भी व्यक्ति के लिए इन दोनों प्रणालियो के गुणावगुण समझना कठिन नही। उनका विचार था कि जिन लोगो ने यह प्रणाली बनाई उनके मन म कुछ ऐसी धारणाएँ थी, जिन्हे वे बताना नही चाहते थे। फिरोजशाह का कहना था कि मैं यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि वे इस विचार मे बह गए कि बौद्धिक विकास से नैतिक विकास नहीं होता। उन्होने अपने निबध म "साहित्यिक" शिक्षा पर होने वाले कटु आक्षेपो का खण्डन किया। उधर कुछ वर्षों से ऐसे आक्षेप करना एक रिवाज सा बन गया था। उनके निबध का एक

विस्तृत अश हम नीचे दे रहे है।

"यदि हम किसी समाज के विकास के ऐसे समय की बात करें, जबकि नतिकता का अपना अलग अस्तित्व नही था, बल्कि वह धम मे ही विलीन थी, तब तो यह कहना बिल्कुल ठीक होगा कि, बौद्धिक सस्कृति नतिकता नही सिखाती।

"उदाहरणाथ ईसाइयत की प्रारम्भिक अवस्था मे जो बौद्धिक शिक्षण लोगो को उपलब्ध था वह उसके अनुयाइयो के नतिक पथ प्रदशन के लिए सवथा अपर्याप्त था। उन दिनो गहराई से और जितने सुचारु रूप से जितनी धार्मिक शिक्षा नतिक पथ प्रदशन कर सकती थी उतनी और कोई वस्तु नही। इतिहास ऐसे कालो के उदाहरणो से भरा पडा है।

'एक समय था जबकि यहूदी धम की एक ही सबसे बडी सस्कृति थी और वह थी उनके धम ग्रथ। यूनानियो के लिए होमर और हेसियोड की धार्मिक कविताए तथा मुसलमानो के लिए एक कुरान ही सभ्यता का आधार था।

"इन समाजो के विकास का अगला पडाव तब आया, जबकि नैतिकता धम की बडियो स मुक्त हो गई और दूसरे ही रूपो मे प्रकट हुई। इसका उदाहरण है अग्रेजी और पश्चिमी सभ्यता, जहाँ कवियो इतिहासकारो, दाशनिको ने ईसा के धमगुरुओ और पादरियो का स्थान ले लिया।

'यह बात नही कि इन कवियो इतिहासकारो, दाशनिको न बाइबिल और उसकी टीकाओ म दिए हुए नतिक निर्देशो का प्रचार शुरु कर दिया है। यह परिवतन कम उजागर और कम दिखावे के साथ होता है। धार्मिक शिक्षा नतिक नियम सयम और विचारो क रूप म धीरे धीरे फलती है। फिर समय के साथ लोगो मे एक पीढी से दूसरी पीढी म पहुँचती है और इस प्रकार उनके मन मे यह नियम-सयम प्रथम या मूल सिद्धान्त बनकर पठ जाते हैं। बाद के जीवन म व्यवहार म कम और वचन इन्ही सिद्धान्तो के ढाचो म ढल जाते हैं।

'कवि इतिहासकार अथवा दाशनिक अपनी इस विरासत का बहिष्कार करके रचना नहीं कर सकता। यदि किसी युग के साहित्य म, उस समय की श्रेष्ठ

तिक शिक्षाएं समाविष्ट कर दी जाएँ, तो यही समझना चाहिए कि धर्म का काम हो चुका है। ऐसी स्थिति में बौद्धिक शिक्षा और नैतिक शिक्षा में कोई अन्तर नहीं रह जाता।"

भाषण के अन्त में बहुत से प्रस्ताव पास किए गए, जिनमें इस बिल की निन्दा की गई थी। कहा गया है कि इस बिल से राजनैतिक पद लिप्सा बनी रहेगी और भारतीयों के लिए सिविल सर्विस के दरवाजे नहीं खुलेंगे। मकाले के शब्दों में उनके लिए सरकारी नौकरी विजय या अधिकार न होकर, केवल दिखावा बन कर रह जाएगी।

इस आन्दोलन के बावजूद यह बिल बिना किसी संशोधन के कानून बन गया। यह ठीक है कि इस कानून के अन्तर्गत 1879 तक कोई कार्यवाई नहीं की गई। 1879 में इस कानून के अधीन नियम बनाए गए, जिनमें ऊँचे पदों का छठा हिस्सा भारतीयों के लिए निश्चित कर दिया गया। साथ ही इस निर्णय के परिणाम स्वरूप 1880 में, इंग्लैंड में होने वाली सिविल सर्विस की प्रतियोगिता में, पदों की संख्या उतने ही अनुपात में घटा दी गई।

इससे तुरन्त ही पता चल जाता है कि, भारतीयों की जो आकांक्षाएँ जागृत हो चुकी थीं वे इस योजना से कहाँ पूरी हो सकती थीं। 1870 में जब यह कानून पास हुआ तो केवल नौ भारतीय ही ऊँचे ओहदों पर नियुक्त थे। इन नियमों के अनुसार अगले 20 वर्षों में केवल 60 और भारतीय स्टैचुटरी सिविलियन के रूप में नियुक्त किए गए। उस समय भारतीयों से जो वायदे किए गए थे उनका केवल इतना सा परिणाम निकला। लार्ड लिटन ने जो उस समय वायसराय थे, इंग्लैंड के अधिकारियों को एक गुप्त रिपोर्ट भेजी, जिसमें उन्होंने यह स्वीकार किया कि भारतीयों के साथ धोखा किया गया है।

जिन भारतीयों को स्टैचुटरी सिविलियन के रूप में नियुक्त किया भी गया, उनका हाल भी अच्छा न था और उनका व्यवहार भी कष्ट और अपमानजनक सा रहा। इस आन्दोलन ने यह सिद्ध कर दिया कि, इस प्रकार के आन्दोलन कुछ

सच ही कहते थे। सरकार से पुन माँग की गई, कि वह इस प्रणाली को खतम करे। 1886 मे एक कमीशन बिठाया गया इसका कार्य था कि वह 'ऐसी योजना बनाए जिससे यह प्रगट होता हो कि जो कुछ निणय किए जाएग वे आवश्यक रूप स अतिम होगे और भारतीयो की उच्च सरकारी पदो पर नियुक्ति की माग के साथ पूरा पूरा न्याय होगा।" इसके बार म हम बाद म लिखेंग।

श्री आयर क्राफोर्ड नए विधान के अन्तर्गत म्युनिसिपल कमिश्नर नियुक्त हुए। नगर की दशा उस समय हर दृष्टि से बहुत ही शोचनीय थी, फिर भी श्री क्राफोर्ड तथा उनके उद्यमी सहायक डा० हैवलट न जो कि स्वास्थ्य अधिकारी थे, सुधार का काय हाथ मे लिया। आगे के कुछ वर्षों मे हर क्षेत्र म काफी जोरदार काम हुआ। जो नगर एक दुगध फलानेवाला गदा तालाब सा बन गया था, जिस शहर की गलियो का पानी रेत पर बहता था वह अब एक स्वच्छ और स्वस्थ नगर बन गया था।

जब तक काम ठीक ढग से चलता रहा तब तक यही मालूम पडता था कि, नगर पालिका के प्रशासन की बागडोर एक ही व्यक्ति के हाथ म रखन की प्रणाली आपत्तिजनक नही है भले ही जस्टिस ऑफ पीस म से जो आलोचना करने वाले थ उनमे और कमिश्नर मे बहुत बार नोक झोक और झडपें होती रहती थी। किन्तु जब शीघ्र ही म्युनिसिपल्टी का दीवाला पिटने की नौबत आ गई तो कमिश्नर और कानून दोनों के विरुद्ध कई वर्षों से जो असतोष दबा हुआ था वह फूट निकला और दोनो को ही आपत्तिजनक मानकर, उन्हे हटाने के लिए जोरदार आवाज उठाई गई क्योकि कानून ही कमिश्नर की निरकुशता के लिए उत्तरदायी था। जिस तरीके से नगरपालिका कर इकट्ठा करती थी उससे तो जनता का क्रोध बहुत ही भडका। उस समय के एक निर्भीक सज्जन ने जनता के इस रोष का बहुत ही सजीव शली मे वणन किया है। वह लिखते हैं 'नगरपालिका के करो को एकत्रित करने का जो वतमान ढग है उसका वणन करने मे मानो भत्सना के शब्दो का कोष ही खाली हो गया था और उस तरीके को ससार का सबसे बडा अन्याय बतलाया गया था।

म्युनिसिपल्टी की दशा पर विचार करने के लिए समय समय पर कई कमेटिया बिठाई गई। कमेटी बिठाकर समस्या को टालने का रिवाज उस पुराने जमाने मे भी उतना ही था जितना आज के हमारे इस तीव्रगामी युग म। किन्तु इन कमटियो की नियुक्ति से बहुत सतोषजनक परिणाम नही निकला। अत म जनता ने तग आकर मामला अपने हाथ म ले लिया और नवम्बर 1870 मे एक करदाता सस्था का निर्माण हुआ। इस सस्था ने शीघ्र ही एक लम्बी चौडी अर्जी लिखी जिसम जनता की कठिनाइयो का वणन किया तथा उन्हे दूर करा की जस्टिस आफ

पीस की न्यायपीठ से माग की परन्तु जस्टिसो ने इस मामले म कुछ भी करने मे असहायता प्रकट की। फिर तो करदाता सस्था सीधे सरकार के पास पहुचने के लिए विवश हो गई।

जस्टिस ऑफ पीस की न्यायपीठ म कुछ ऐसे लोग थे जो बहुत उद्यमी थे। चुप बठने वाले नही थे। इस गुट का नतत्व, जिसे विरोधी दल कहना चाहिए शहर के बडे व्यापारी श्री जेम्स फोरब्स ने सभाला। उन्होने बैंच के सामने एक प्रस्ताव का नोटिस दिया कि वह नगरपालिका के सविधान मे परिवतन करना चाहते हैं, जिससे नगरपालिका क ऊपर न्यायपीठ का अधिक नियत्रण हो, ताकि प्रशासन मे ज्यादा कुशलता लाई जाए तथा व्यय म भी कमी हो सके।

इस प्रस्ताव पर विचार करने के लिए, 30 जून 1871 को बम्बई टाउनहाल के दरबार कक्ष मे, जस्टिसो की एक असाधारण सभा बुलाई गई। यह सभा कई बातो के लिए स्मरणीय थी। लोगो मे असाधारण उत्साह की लहर दौड गई। नगरपालिका मे सुधार के प्रयत्न करने वाले लोगो का उत्साह बढाने के लिए एक बडा जलूस शहर से होता हुआ टाउनहाल के सामने से निकला। जलूस के आगे आगे बाजा बज रहा था। कमिश्नर क्राफोड की व्यवस्था के समथको और उनके विरोधियो के बीच सघष देखने के लिए सारा शहर उमड पडा।

'मीटिंग (सभा) तीन बजे होनी थी पर तु समय से बहुत पहले ही लोग आने शुरू हो गए। चचगेट स्ट्रीट और एल्फिन्स्टन सकिल म भाति भाति की गाडियो का ताता लग गया। लोग इन मे बटकर टाउनहाल की ओर चले जा रहे थे। जिस कमरे मे मीटिंग होने वाली थी वह बहुत बडा था परन्तु यह शीघ्र ही खचाखच भर गया, लोग फिर भी आते जा रहे थे। भीड दरवाजे तक पहुचती, परन्तु वहा खडे हुए सिपाही उन्हे यह कहकर वापस कर देते कि कमरे म जगह नही है। बम्बई शहर के एक सबसे पुराने निवासी ने कहा कि उनकी स्मृति म ऐसी सभा अभी तक कभी नही हुई। कमरे के बीच मे बहुत बडी मेज लगी हुई थी। इस मेज के चारो तरफ लगभग आधी दजन कुर्सियो की कतार लगी हुइ थी, जिनपर जस्टिस लोग विराजमान थे। बाकी सब जगह लोगो से ठसाठस भरी हुई थी। यूरोपियन गोरे

कि उस संस्था के विधान का था, जिसके ऊपर निगम का कार्यभार था। उन्होंने कहा 'बम्बई मे तब तक कुशल नागरिक प्रशासन नही हो सकता जब तक कि यहा चुनी हुई न्यायपीठ न हो जो कि जनता के प्रति उत्तरदायी हो। इसका चुनाव नियमित रूप से निश्चित अंतराल के बाद होना चाहिए। इस न्यायपीठ म से एक सलाहकार नगर समिति बनाई जाए। इस समिति का अध्यक्ष एक कार्यकारी अफसर हो जिसकी नियुक्ति सरकार द्वारा की जाए। कमिश्नर पर नियन्त्रण रखने के लिए न्यायपीठ एक कन्ट्रोलर ऑफ एकाउन्टस की नियुक्ति करे।"

फिरोजशाह यह भलीभांति जानते थे कि, अधिकतर लोग उनके सुझावो को असगत तथा अव्यावहारिक समझते हैं तथा सरकार इन्हें किसी भी हालत म स्वीकार नही करेगी। इस आपत्ति का उत्तर उनके पास यह था कि, अब वह समय नही रहा जबकि सरकार किसी विषय पर जनता की माग को ज्यादा देर तक ठुकरा सके। लोगो का विश्वास नही था कि जिस निर्वाचित संस्था का सुझाव फिरोजशाह ने दिया था वह सम्भव होगी। इसके उत्तर मे फिरोजशाह ने श्री ऐंसटे के एक प्रसिद्ध भाषण का उद्धरण दिया जो उन्होंने ईस्ट इण्डिया एसोसियेशन की एक सभा म दिया था। श्री ऐंसटे सनकी तो थे परन्तु बहुत ही प्रतिभाशाली व्यक्ति भी थे। इस भाषण म श्री ऐंसटे ने कहा था कि, सही अर्थ म नागरिक स्वशासन उतना ही पुराना है जितनी पुरानी पूर्वी सभ्यता है।

भाषण के अन्त म श्री फिरोजशाह ने कहा कि आज की अवस्था मे सुधार व कार्यपटुता लाने के लिए मेरे निर्भीक व निर्णयात्मक उपायो को अपनाने के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नही है। इस कारण मि० फारब्स और न्यायपीठ के दूसरे सदस्यो की ओर से प्रस्तुत किए हुए, उपशामक सुझावो स सहमत होने म वह असमर्थ हैं। उनका भाषण बहुत ही प्रभावशाली था, परन्तु लोग इसके प्रति उदासीन रहे। कारण यह था कि लोग किसी मौलिक सुझाव को सुनने के लिए तैयार नही थे। वह सब तो कमिश्नर और 1865 के विधान की, जिसके अन्तर्गत उनके विचार म कमिश्नर को आर्थिक मनमानी करने की छूट दी गई थी निन्दा करने के लिए एकत्रित हुए थे।

नगरपालिका सुधार पर यह स्मरणीय वाद विवाद चौथे दिन समाप्त हुआ। जनता के उत्साह का दृश्य देखते ही बनता था। चार दिन की बहस म छह प्रस्ताव रखे गए 26 भाषण दिए गए और इसके फलस्वरूप सरकार को एक आवेदन पत्र मे यह माँग की गई कि समय समय पर बम्बई नगरपालिका के बारे म जो रिपोर्टें दी गई हैं और जो प्रस्ताव स्वीकार किए गए उन पर आवश्यक कारवाई करने के लिए एक जाच कमीशन बठाया जाए।

सरकार न नगरपालिका की दशा की जानकारी क लिए सर थ्योडार की अध्यक्षता म एक कमेटी स्थापित की। इस कमेटी की रिपोट स कई गम्भीर आर्थिक अविनियमितताए सामन आई, जिसके परिणामस्वरूप फिर आन्दोलन चला। एक बार फिर मि० फारब्स आगे बढे उन्होने सरकार का आन्दोलन पत्र दिया। जिसम कहा कि सरकार नगरपालिका को कठिनाइयो से निकाले और इस कायप्रणाली को निर्दोष और प्रगतिशील ढग से स्थापित करे।

इस प्रकार आदोलन जोर शार स चलता रहा। दोनो पक्ष एक दूसरे पर कटु और विद्वेषी प्रहार करत रहे। फिरोजशाह ने एस हा समय एक बार फिर म्युनिसिपल प्रशासन पर अपने सुझावो को जनता के सामन रखने का निश्चय किया। उनका विचार था कि इस विषय मे जनसाधारण की रुचि है। पिछली बार तो उन्होने अपने सुझाव थोडे ही लोगो के सामने रखे थे, परन्तु इस बार उनकी तीव्र इच्छा थी कि इन पर बडी सभा मे विचार किया जाए। ईस्ट इडिया एसोसियशन की बम्बई शाखा की एक सभा बुलाई गई। यह सभा फ्रामजी कावसजी इस्टीटयूट मे 29 नवम्बर 1871 को हुई। इस सभा म बहुत से लोग इकट्ठे हुए। सभा के अध्यक्ष दोसाभाई फ्रामजी थे। सभा का उद्घाटन करते हुए अध्यक्ष महोदय ने कहा इसम कोई सदेह नही कि आज की शाम आनन्दमय होगी, तथा विचार विमर्श के लिए उपयोगी और शिक्षाप्रद सिद्ध होगी। अध्यक्ष महोदय को शीघ्र ही पता चल गया कि शाम कितनी सुहावनी थी।

सभा में फिरोजशाह ने अपना निबन्ध पढा, जिसका शीर्षक था नगर सुधार का प्रश्न'। यह निबध काफी परिष्कृत था। टाउनहाल म हुई सभा म फिरोजशाह

ने जो विचार प्रस्तुत किए थे, उनकी इस निबंध में, विस्तृत व्याख्या की गई। फिरोजशाह बोले

"श्री फारबस और उनके समर्थक अपने उत्साह में मगन होकर अपना विवेक खो बैठे हैं।" उन दिनों फिरोजशाह जवान थे। युवावस्था में मनुष्य में आत्मविश्वास आवश्यकता से अधिक ही रहता है। जनसाधारण के नेता का क्या कर्त्तव्य होता है, इस विषय पर वह श्रोताओं को उपदेश देने लगे।

वह बोले "जन आंदोलनों के स्वयंभू नेताओं के दो प्रमुख कर्त्तव्य हैं। उनके लिए यही पर्याप्त नहीं है कि वे जनता की हां में हां मिलाएं और उनके पीछे लगकर गला फाड़ें। उन्हें यह भी नहीं चाहिए कि लोगों की प्रायः बिना सोचे समझे उठाई गई मांगों का परखे बिना उनका समर्थन करना आरम्भ कर दें।'

'नेताओं पर एक बड़ा उत्तरदायित्व है। वह है आंदोलन का पथ प्रदर्शन करना और उसे सही रास्ते पर चलाना। ऐसे आंदोलन प्रायः शब्दों और विचारों के भंवर में फंस जाते हैं। नेतागणों का काम है आंदोलन के मुख्य व यथार्थ कारण खोजना, उन पर सोच विचार करना तथा लक्ष्य की पूर्ति के लिए सुझाव रखना।'

सुधार आंदोलन के नेताओं की तीव्र आलोचना करने के पश्चात फिरोजशाह ने कमिश्नर श्री क्राफोर्ड का जोरदार समर्थन किया। यह भी बताया कि कमिश्नर साहब के प्रशासन में बम्बई नगरपालिका ने किस प्रकार तथा कितनी उन्नति की। 1865 से पहले बम्बई नगर की दुर्व्यवस्था का चित्र, उन्होंने श्रोतागणों के सामने खींचा। उन्होंने यह भी कहा कि समय केवल सोच विचार करने का नहीं बल्कि तात्कालिक जोरदार कारवाई करने का है। वह बोले "मनुष्यमात्र के जीवन में कई संकट भी आते हैं ऐसे उदाहरण छोटी मोटी संस्थाओं और अनेक राष्ट्रों के इतिहास में बहुत मिलेंगे जबकि साधारण युक्तियां असफल हो गई हैं। ऐसे संकट के समय हमें कड़ी और कारगर कारवाई करने से पीछे नहीं हटना चाहिए। चाहे ऐसे समय मनुष्य को अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता को भी बलि देना पड़े।

फिरोजशाह ने कहा "कमिश्नर क्राफोर्ड से अधिक उपयुक्त व्यक्ति दूसरा नही है। यह सच है कि नि सदेह वह कुछ आर्थिक अनियमितताओ के दोषी हैं परन्तु बम्बई नगर के लिए जो महान काय उन्होने किए हैं उन्हे भुला देना बड़ा अन्याय होगा। बम्बई नगर की दुर्व्यवस्था की जिम्मेदारी 1865 के एक्ट पर लादना भी नासमझी की बात है।

"इस दुर्व्यवस्था का एक ही इलाज है वह यह कि नगरपालिका के सस्थापन म स्वतन्त्र प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को लागू किया जाए। यदि हम भारतीय इतिहास का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो हमें पता चलेगा कि भारतीय लोग प्रतिनिधि सस्थाओ के पूर्णत योग्य है। भारत म प्राचीन काल से गाँव-बिरादरी की सस्था चली आ रही है अपने क्षेत्र म इन सस्थाओ को बहुत विस्तृत अधिकार थे। इतिहास म ऐसे बहुत से प्रमाण मिलते हैं कि इन सस्थाओ ने अपना उत्तरदायित्व बडी कुशलता से निभाया है। इसलिए यह कहना हास्यास्पद होगा कि भारतीय लोग प्रतिनिधि सस्थाओ स अनभिज्ञ हैं। वतमा शासनप्रणाली माई बाप सरकार' के सिद्धान्त पर आधारित है परन्तु यह कहना गलत होगा कि प्रतिनिधि सस्थाए इस प्रणाली मे ठीक नहीं बठेंगी कारण कि इतिहास हम कुछ और ही सिखाता है।"

फिरोजशाह का कहना था कि इन सब बातो का ध्यान म रखत हुए देश म, विशेषत बम्बई नगर म जहा के नागरिक अपनी दक्षता और [illegible] भावना का प्रमाण दे चुके हैं नागरिक स्वशासन की बिना किसी [illegible] के, [illegible] की जा सकती है। उनका कहना था कि जब तक ऐसा वधानिक सुधार [illegible] तब तक नागरिक कार्यों म उन्नति की आशा करना बेकार है। [illegible] दूसरे लोगो ने जिन परिवतनो की सिफारिश की है व सब [illegible] और [illegible] तक के अनुभवो के विरुद्ध है। इन सुझावो का मतलब [illegible] कि बुरी तरह असफल रहे हैं एक दूसरे रूप म फिर से [illegible]।

फिरोजशाह ने अपने [illegible] म जिस दृष्टिकोण [illegible] अध्ययन वतमान समय म भी उपयोगी है। इस [illegible]

सिद्धान्तो का बहुत ही प्रभावी प्रतिपादन किया। इससे यह भी पता चलता है कि छोटी अवस्था मे फिरोजशाह के विचारो म कितनी प्रौढ़ता, परिपक्वता तथा राजनीतिक दूरदर्शिता थी।

श्रोताओ का मन फिरोजशाह के दृष्टिकोण को समझने का नही था। जिस योग्यता से उन्होने अपने भाषण मे तथ्य और तक दिए थे उसका भी श्रोतागण मूल्याकन न कर पाए। वे लोग तो क्रोध व पक्षपात से अन्धे थे। मि० क्राफोड के प्रशासन के बारे म फिरोजशाह न जो विचार प्रकट किए थे वे सच्चे थे परन्तु यह सत्य श्रोताओ को बहुत बुरा लगा। वे नही चाहते थे कि कोई कमिश्नर की हिमायत करे, क्योकि वह बहुत अप्रिय थे। श्रोताओ न अपनी अप्रसन्नता बलात प्रकट की। भाषण के बीच म हुल्लड मचता रहा तथा इसकी समाप्ति के समय बहुत हगामा देखने म आया। सभा मे जो हगामा हुआ उसका विवरण निम्नलिखित है।

"श्री फिरोजशाह मच पर आए और उन्होने अपना निबन्ध पढ़ना आरम्भ किया। वह अभी भूमिका ही बाध रहे थे कि उनके हिमायती लोगो ने उन्हें वाह वाह करके प्रोत्साहन देना शुरू कर दिया, इसके विपरीत कुछ मनचलो ने सिसकारिया भरनी शुरू कर दी। निबन्ध पढते समय, हर पूण विराम व अद्ध विराम की जगह सिसकारी सुनाई पडती। शीघ्र ही फिरोजशाह के हिमायती उठ खड़े हुए और उन्होने शम करो, शम करो की आवाजें लगाई, जिससे सिसकारिया बन्द हो गई।

"अन्त मे जब भाषण समाप्त हुआ तो बहुत से लोगों ने हल्ला मचाकर अपना असतोष प्रकट किया, कुछ लोग ऐसे भी थे जो कार्रवाई को शान्तिपूर्वक चलाना चाहते थे। उन्होने अध्यक्ष महोदय से याचना की कि वह सभा को शान्त करें परन्तु वह असफल रहे। गर्मागर्मी अब इतनी बढ चुकी थी कि विस्फोट को रोकने के लिए दबाव को कम करना बहुत ही आवश्यक था।

"श्री सोराबजी रुस्तम जी बुनशा उठ खडे हुए और उन्होने कुछ शब्द

कहने की चेष्टा की। अध्यक्ष महोदय भी कुछ कहने के लिए उठे और उनकी देखादेखी दूसरे लोगो ने भी उठना आरम्भ कर दिया। श्री सोराबजी एक कोने म खडे ऊचे बोल रहे थे। यह देखते हुए कि जब तक सोराबजी बोल रहे हैं, उनकी दाल न गलेगी, अध्यक्ष महोदय ने उन्ह बटने का आदेश दिया परन्तु सोराबजी ने अध्यक्ष महोदय का कहा अनसुना कर दिया।

"सोराबजी अध्यक्ष महोदय को कुछ कहने के लिए मुडे, ज्योही उन्होने बोलना बद किया उसी क्षण का लाभ उठाते हुए श्री दोसाभाई न सभा को स्थगित करने का प्रस्ताव रख दिया।

"अध्यक्ष महोदय के बाई ओर बठे लोग इस प्रस्ताव का समथन करन लगे। जो लोग दाहिनी ओर थे उनका आग्रह था कि सोराबजी को बोलने दिया जाए। अध्यक्ष महोदय ने एक बार फिर लोगो को सम्बोधित करने की चेष्टा की परन्तु तब तक सोराबजी ने फिर स बोलना आरम्भ कर दिया था। उनका भाषण पूरे जोरो पर था। वह इतने क्रोध म थे कि उनके शब्द भी ठीक तरह समझ मे नही आ रहे थे। प्रतिक्षण गडबड बढती ही जा रही थी। अन्त म सभी लोग एक ही साथ उठ खडे हुए, जसे कि उन्होने इस बात की परस्पर साठ गाठ कर ली हो। हर एक व्यक्ति न अपने पक्ष की हिमायत म बोलना शुरू कर दिया। कुछ महानुभावो ने मेजो पर जोर-जोर से अपनी-अपनी छडिया मारनी शुरू कर दी। इसका परिणाम यह हुआ कि कान पडी आवाज सुनाई नही देती थी। श्री दोसाभाई, जो कि सह अध्यक्ष थे, सभा स्थगन की घोषणा करके बाहर चले गए, उस समय कोलाहल मच रहा था। जब वह वापस आकर कुर्सी पर बठ तब लोगो ने शोर मचाना बद कर दिया। उन सबको अपनी मूखता का आभास हुआ नही तो पता नही कितन घट यह हगामा चलता रहता।"

सभा के आरम्भ मे अध्यक्ष महोदय ने आनन्दमय शाम की कामना की थी उसका परिणाम यह निकला। फिरोजशाह के निर्भीक भाषण और अप्रिय तथा स्वच्छन्द उक्तियो के परिणाम स्वरूप जो उपद्रव उठ खडा था वह इतनी जल्दी दबने वाला नही था। 'टाइम्स आफ इडिया' कमिश्नर क्राफाड के प्रशासन का

बहुत बड़ा आलोचक था। इस समाचार पत्र ने यह लिखा कि यह कहना कि बम्बई नगरपालिका में 1865 के बाद जो उन्नति हुई है उसका श्रेय भूतपूर्व कमिश्नर को जाता है भयंकर भूल है। खेद है कि सभा में गड़बड़ी हो जाने से इस झूठ का खण्डन नहीं हो पाया। फिरोजशाह के भाषण के बारे में इस समाचार पत्र ने लिखा कि कुछ अनुच्छेदों को छोड़कर, फिरोजशाह का निबंध बहुत ही भोंडा, गलत और खुशामदी है। पत्र ने आश्चर्य और खेद प्रकट किया कि एसोसियेशन की कमेटी ने ऐसा भाषण आम सभा में पढ़ने की अनुमति क्या दी।

कमेटी के बाद की सभाओं में भी सदस्यों का बहुमत निबंध के विरुद्ध था। तीस सदस्यों ने एक अभियाचन पर हस्ताक्षर करके अध्यक्ष को भेजा और उनसे मांग की कि वह एक विशेष सार्वजनिक सभा का आयोजन करें और सभा इस बात पर विचार करे कि फिरोजशाह के निबंध को एसोसियेशन के कार्यवृत्त से निकाला जाए।

तदनुसार 18 दिसम्बर को फ्रामजी कावसजी इंस्टिट्यूट में सभा बुलाई गई जिसके अध्यक्ष डा० भाउदाजी थे। इस सभा में बड़ी संख्या में लोग आए। सभा में फिरोजशाह भी उपस्थित थे परन्तु कारवाई आरम्भ होने के थोड़े समय बाद ही वह एक दो मित्रों के साथ उठकर चल दिए। जब वह उठकर जा रहे थे तो फिर से सीटियों सिसकारियों का तूफान सा उठ खड़ा हुआ। लोगों ने हर्षध्वनि की और 'शांति, शांति,' की आवाजें आने लगीं। फिरोजशाह के भाषण को सभा के कार्यवृत्त से निकाल देने का प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया। सभा की कार्यवाही का समाप्त करते हुए अध्यक्ष महोदय ने घोषणा की कि समझा जाएगा फिरोजशाह ने कोई भी निबंध नहीं पढ़ा और न ही निबंध विचार के योग्य ही है। पहली बार में जो हुल्लडबाजी हुई थी उसके लिए अध्यक्ष ने लोगों से क्षमा मांगी तथा यह आश्वासन दिया कि भविष्य में ऐसी गड़बड़ नहीं होने दी जाएगी।

फिरोजशाह के जीवन में यह सबसे बड़ी और विशेष घटना थी। इससे उनके चरित्र की दृढ़ता और राजनीतिक विदग्धता का पता लगता है। उनकी आयु का बिरला ही कोई होगा जो कि ऐसे दृष्टिकोण का समर्थन करने का साहस रखता हो क्योंकि यह दृष्टिकोण न केवल अलोकप्रिय ही था बल्कि समकालीन

विचारधारा से बहुत आगे बढ़ा हुआ था। फिरोजशाह बहुत ही निर्भीक थे। एक बार जब किसी विषय पर उनकी धारणा बन जाती, उस विषय पर पूरी पूरी स्वतन्त्रता के साथ अपने विचार प्रकट करते। ऐसा करते समय न तो वह जनसाधारण की सम्मति ही चाहते और न उन्हें सरकारी रोष का ही डर होता।

यह तो मानना पड़ेगा कि श्री क्राफोर्ड की हिमायत उन्होंने कुछ प्रचड रूप से ही की थी। जिस समय श्री क्राफोर्ड ने बम्बई नगरपालिका का सुधार किया उन दिनों फिरोजशाह बाहर गए हुए थे। लौटने पर उन्होंने नगरपालिका की दशा में जो परिवर्तन देखे उससे वह बहुत ही प्रभावित हुए। फिरोजशाह द्वारा कमिश्नर की उत्साहपूर्ण प्रशंसा का यही कारण था—परन्तु लोग कमिश्नर की मनमानी व फिजूलखर्ची के कारण उनके विरुद्ध हो गए थे तथा जो शानदार कार्य कमिश्नर ने बम्बई नगर के लिए किए उन्हें भी भुला बैठे थे। मि० क्राफोर्ड के विचार अपने समय से बहुत आगे थे और उनकी गिनती महान नगर निर्माताओं में ही सकती थी।

इस घटना के बाद नगरपालिका के सुधार आन्दोलन के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन किया जाएगा। नगरपालिका की सहायता के लिए सरकार को कई बार गम्भीरतापूर्ण आवेदनपत्र दिए गए। सरकार ने नगरपालिका को 15 लाख का ऋण देना मंजूर कर लिया, परन्तु इस स्वीकृति पर ऐसी शर्तें रखी जो कि नगरपालिका के लिए बहुत ही अपमानजनक थीं। इसके पश्चात नगरपालिका के सुधार का कार्य आरम्भ हुआ। औनरेबल श्री ठक्कर ने लजिस्लेटिव कौंसिल में 27 मार्च 1872 को एक बिल पेश किया। इस बिल की धाराएं, विशेषतः जो नगरपालिका के संविधान से सम्बन्धित थीं, बहुत ही अनुदार थीं। इस बिल के अनुसार नगरपालिका के 80 सदस्य होने चाहिए थे। इनमें से 32 का निर्वाचन जस्टिस औफ पीस के द्वारा होना था और 32 सरकार द्वारा नामजद किए जाने थे बाकी 16 स्थान करदाताओं के लिए थे। परन्तु इनमें से केवल आधे स्थान निर्वाचन द्वारा भरे जाने थे और आधे स्थानों के लिए सदस्य सरकार द्वारा नामजद किए जाने थे। सत्ता कमिश्नर के हाथ में थी और अर्थव्यवस्था टाउन कौंसिल को सौंपी गई थी।

इसमे कोई आश्चय नही है कि नगरपालिका के सविधान से सम्बधित धाराओ की सब ओर से निन्दा हुई। मि० व्हाइट ने, जो कि ऐडवोकेट जनरल थ, कहा कि बिल म लोक-प्रतिनिधित्व तो नही के बराबर है और सरकारी नियत्रण जितना ठूसा जा सकता है उतना ठूस दिया गया है ? बल्कि यो कहा जाए कि लोकप्रिय चुनाव सिद्धान्त की नन्ही सी होम्योपथी की पुडिया के मुकाबले सरकारी नियत्रण की बहुत भारी खुराक दी गई है।

टाइम्स आफ इण्डिया ने टिप्पणी की कि 80 मे से केवल 8 सीटें करदाताओ का निर्वाचन के आधार पर देना वसे ही है जसे ऊट के मुह मे जीरा। बिल की बडी आलोचना हुई, कई ओर से इसमे सशोधन के लिए सरकार का आवेदन पत्र भी दिए गए, जिसके परिणामस्वरूप इसमे भारी अदला-बदली की गई। अन्तिम रूपरेखा म यह बिल कुछ उदार हो गया। सदस्यो की सख्या 80 से घटाकर 64 कर दी गई, जिसम से 32 सदस्य करदाताओ द्वारा निर्वाचित होने थे शेष सरकार द्वारा नामजद किए जाने थे। एक स्थाई कमेटी का गठन हुआ जिसका काम था निगम की आय व्यय पर नजर रखना। कमिश्नर की नियुक्ति का अधिकार सरकार ने अपने हाथ मे रखा पर तु स्वास्थ्य अधिकारी की नियुक्ति निगम के हाथ म थी। इस प्रकार बम्बई नगरपालिका सुधार का आन्दोलन कई बार अपने लक्ष्य से भटक कर अन्त मे सफल हुआ। फलस्वरूप नगर मे जो स्वशासन स्थापित हुआ वह माडे से परिवतन के अलावा आज भी उसी तरह चल रहा है।

फिरोजशाह न नगर प्रशासन क जिन सिद्धान्तो का व्याख्या की थी, नेता लोगो ने उन कारणो की निन्दा की था, उपहास किया था। परन्तु 1872 के विधान म अधिकतर वही सिद्धान्त दखन म आए। कई अन्य व्यक्तियो ने विशेषत श्री मक्लीन ने, जिन्होने काफी ख्याति पाई थी, इस विजय के श्रेय का दावा किया। कई व्यक्ति मि०क्राफोर्ड के काय का श्रेय हथियाना चाहते थे परन्तु न्याय की बात तो यह है कि फिरोजशाह अपन समकालीन व्यक्तियो मे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होने उस समय की अव्यवस्था का कारण ढूढा तथा उसे दूर करने का इलाज भी बताया।

दूसरे लोग ऐसी प्रशासन प्रणाली लागू करने का प्रचार कर रहे थे जो प्राय असफल हो चुकी थी। उस समय फिरोजशाह ही थे जिन्होने बडी निर्भीकता से म्युनिसिपल प्रशासन मे सुधार के लिए सुझाव रखे। नगरपालिका के सविधान की जो रूपरेखा उन्होने प्रस्तुत की, उस समय उसे कम ही लोग समझ पाए थे। परन्तु 1872 के कानून मे इसी रूपरेखा का समायोजन था। 1888 मे इस सविधान मे कुछ सशोधन हुआ। मुख्यत यही सविधान लगभग 80 वर्षों से चला आ रहा है। इस सविधान के कारण ही बम्बई नगरपालिका सबसे श्रेष्ठ गिनी जाती है।

अध्याय 6

लार्ड लिटन का प्रशासन

1877 1880

लार्ड लिटन के प्रशासन से पहले देश (भारत) में राजनीतिक सरगर्मी नहीं के बराबर थी। इस वाइसराय की प्रतिक्रियात्मक नीति ने काफी देर से सोई पड़ी शक्तियों को जगा दिया। सरकार ने एक के बाद एक कई अलोकप्रिय कारवाइयां कीं जिनसे बहुत असंतोष फैला। इस असंतोष के कारण राष्ट्रवाद का प्रवाह, जो अभी तक मंद गति से चल रहा था, तेजी पकड़ गया। सरकार जैसे-जैसे लोगों पर एक के बाद एक अन्याय लादती गई, वैसे-वैसे लोकमत सरकार के विरुद्ध होता गया। यह राजनीतिक चेतना का प्रारंभ था। कुछ वर्षों बाद ऐसी घटना घटी जिसने देश भर को झकझोर दिया। देश की राजनीतिक चेतना संगठित रूप में प्रकट हुई। लार्ड लिटन के शासनकाल का सबसे प्रथम और सबसे निंदनीय काम था 'वरनाकुलर प्रेस एक्ट'। इस कानून के विरोध में जो वादविवाद उठा और इससे देश में जैसा क्रोध उत्पन्न हुआ, वैसा अभी तक देखने में नहीं आया था।

यह कठोर कानून अधिकतर 1870 के इंग्लैंड के 'आयरिश कोअर्शन एक्ट' पर आधारित था, जिसे अंग्रेजों ने आयरलैंड वालों की राष्ट्रीय भावना को कुचलने के लिए बनाया था। कई विषयों में तो यह कानून उक्त ऐक्ट से भी अधिक कठोर था।

प्रेस ऐक्ट से सरकार को यह अधिकार मिल गया कि वह देशीय भाषाओं के समाचारपत्रों के मालिकों से जमानत मांग सकती थी, जिससे वे ऐसे लेख प्रकाशित

न करें जिनसे लोगो मे राजद्रोह की भावना उपजे। यदि कोई समाचारपत्र ऐसा लेख छापता तो सरकार उसे एक बार चेतावनी देकर उसकी जमानत जब्त कर सकती थी तथा पत्र के प्रेस पर भी कब्जा कर सकती थी। इस कानून मे एक ऐसी धारा थी जिसके अनुसार यदि कोई समाचारपत्र नियमित सैंसर व्यवस्था स्वीकार कर लेता तो यह कानून उस पर लागू नही होता था । सर असकिन पैरी के कथनानुसार "कोई साम्राज्यवादी विधिकर्त्ता भी राष्ट्रवादी प्रेस का गला दवाने के लिए इससे अधिक शक्तिशाली हथियार नही सोच सकता था।"

इस कानून मे सबसे आपत्तिजनक बात कदाचित यह थी कि यह अंग्रेजी समाचारपत्रो पर लागू नही होता था। प्राय यही समाचारपत्र भडकीले लेखों के छापने के लिए अपराधी होते थे । उस समय के विख्यात वकील मि० आथर हाब हाउस (जिन्हे बाद मे सरकार ने सर की उपाधि दी) का कहना था कि अंग्रेज लोग ही सरकार की सबसे अधिक और निरन्तर बुराई करते रहते हैं। उन्होंने अंग्रेजी भाषा के पत्रो और भारतीय भाषा के पत्रो के बीच मे भेदभाव की बहुत निन्दा की और कहा

"ऐसे भेदभाव बहुत ही द्वेषजनक हैं तथा हमारी नीति के विरुद्ध हैं। भारतीय भाषा के समाचारपत्रो के प्रति यह भेदभाव तभी न्यायसगत माना जा सकता है जबकि हमारे पास इस बात का ठोस प्रमाण हो कि इन समाचारपत्रो से सरकार को खतरा है ।"

इस विषय को लेकर समाचार पत्रो मे जो लेख इत्यादि छपे उनसे एक अच्छा खासा साहित्य बन गया। इन आलोचनात्मक लेखों म फिरोजशाह का एक लेख बहुत ही प्रमुख है। यह ऐक्ट बने हुए अभी एक सप्ताह भी नही हुआ था कि उन्होंने टाइम्स आफ इडिया के सम्पादक को पत्र के रूप में एक लेख भेजा। इस लेख म ऐक्ट के विषय म सरकारी नीति पर बहुत ही प्रबल और कुशल आक्रमण किया था। उन्होने लिखा

"मैं दावे के साथ कह सकता हू कि भारतीय भाषाओ के समाचारपत्र

अंग्रेजी शासन के प्रति द्रोह के अपराधी नहीं हैं। अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि कई अवसरों पर क्रोधवश उन्होंने सरकार पर दोषारोपण किया है बढ़ा-चढ़ाकर सामान्यीकरण किया है अथवा अशिष्टता दिखलाई है। इन समाचार पत्रों को पढ़ने वाले भारतीय देशज विचार प्रणाली तथा शैली से भलाभांति परिचित हैं। आलोचनात्मक लेख पढ़कर उनमें राजद्रोह के विचार उत्पन्न नहीं होते।"

अंग्रेजी सम्राट के नौकरों के हाथ में इतने विस्तृत अधिकारों के दिए जाने की आलोचना करते हुए फिरोजशाह ने लिखा

'इसमें सबसे बड़ी जोखिम की बात यह है कि सरकार और उसकी कारवाई की तीव्र परन्तु न्यायसंगत आलोचना तथा राजद्रोह के प्रचार और असंतोष फैलाने के प्रयत्नों के बीच अन्तर समझना हर समय संभव नहीं है। कोई लेख केवल आलोचनात्मक होता है अथवा राजद्रोह का प्रचार करता है यह निर्णय करने वाले मनुष्य है देवता नहीं। प्रायः यही लोग उस आलोचना का निशाना बनते हैं। इनसे यह आशा रखनी व्यर्थ है कि ये इस आलोचना से प्रभावित नहीं होंगे। धीरे धीरे ऐसा समय भी आ सकता है कि सब आलोचना का गला घोंट दिया जाएगा।' फिरोजशाह ने कहा कि यदि देशी भाषा के समाचारपत्र स्वच्छाचारी और अश्लील हैं तो उन्हें लाइसेंस प्रणाली के अधीन लाने से अनिष्टकारी प्रवृत्तियां और भी उभार हो जाएंगी। परिणामस्वरूप रचनात्मक आलोचना का ही साधन समाप्त हो जाएगा और विशेष रूप से जबकि अभी प्रेस अपनी शैशवावस्था में ही है।

फिरोजशाह ने कहा 'प्रतिष्ठित पत्रकार जिनका दृष्टिकोण संतुलित है कानून के साथ झगड़ों के पचड़े में पड़ने के बजाय, पत्रकारिता को ही छोड़ जाएंगे। यह धंधा हिंसक और अनैतिक आंदोलनकारियों के हाथ में चला जाएगा। सरकार यदि इन लोगों का दमन करेगी तो जनता की सहानुभूति इन लोगों के साथ हो जाएगी। इस प्रकार जनता के राजनीतिक विकास की प्रगति अनिश्चित समय तक रुक जाएगी। लोगों की आंतरिक भावनाएं जानने के लिए सरकार के पास कोई विश्वसनीय आधार नहीं रह जाएगा। स्वतंत्र और निष्कपट आलोचना से वंचित

होकर सरकार भूलभुलयो मे पड जाएगी । ऐसी स्थिति म दो प्रकार के समाचार-पत्र ही बचगे । एक वे जो निरतर सरकार को गालिया देगे, दूसरे वे जो उसकी चापलूसी करेंगे ।"

वरनाकुलर प्रेस ऐक्ट के लागू होन क एक वप पश्चात सरकार ने एक और अलोकप्रिय कारवाई की । यह काम ऐसा था कि जनता तो क्या वित्त सदस्य को छोडकर लेजिस्लटिव कौंसिल के सारे सदस्य भी कवि' वाइसराय के विरुद्ध हो गए ।

1879 के प्रारभ मे सूती कपडे पर से आयात कर हटा दिया गया । इस प्रकार सरकार ने स्वतत्र व्यापार के नाम पर अच्छी खासी आमदनी को भेंट चढा दिया । सारे भारत न इस काय का कडा विरोध किया गया । लाग विशेषत इस बात पर नाराज हुए कि ल्काशायर के धनी व शक्तिशाली कपडा मिल मालिको क दबाव मे आकर सरकार ने बडी निदयता से भारतीयो के हितो की बलि दे दी । मजे की बात यह थी कि सरकार के हिमायती न्याय और बराबरी का राग अलापते थे और अपने स्वाथ के लिए स्वतत्र व्यापार की दुहाई दते थे ।

भारतीय जनता को यह पाखड समझने मे देर न लगी । देश भर मे लोगो ने इस काय क विरुद्ध आवाज उठाई । 3 मई 187) को बम्बई म एक भारी सभा हुई जिसमे बहुत प्रभावशाली व्यक्तियो ने भाग लिया । यह सभा फ्रामजी कावसजी इस्टीटयूट मे हुई क्योकि टाउन हाल म सभा करन की अनुमति नही दी गई थी । सभा ने इग्लड के हाउस आफ कामन्स को एक निवेदन पत्र भेजना स्वीकार कर लिया । यह निवेदन पत्र सभा म श्री फिरोजशाह ने पढा । यह निवेदन पत्र बहुत योग्यता से बनाया गया था । ऐसा मालूम होता है कि इसके लेखक फिरोजशाह ही थे परन्तु इस बात का कोई पक्का प्रमाण नही । इस निवेदन पत्र का साराश यह था कि कपडे पर आयात कर लगाने का तात्पय था सरकारी आमदनी बढाना । इससे पिछले वप मे मोटे कपडे से तो कर हटा ही दिया गया था इसलिए यह कहना कि आयात कर भारतीय कपडा उद्योग को अनुचित सरक्षण देना है

असगत था। ऐसे समय जबकि युद्ध दुर्भिक्ष और सरकारी कर्ज के कारण सरकार की आर्थिक दशा डावाडाल थी, कर को हटा देना सरासर बेबुनियाद था।

इंग्लैंड के हाउस आफ कामन्स ने करीब एक माह पूर्व ही इस कर की स्वीकृति दी थी क्योंकि उनके विचार मे लार्ड लिटन का यह काम अंग्रेजी सरकार की नीति का सहायक था। आश्चर्य नहीं कि इंग्लैंड की पार्लियामेंट ने सुनी अनसुनी कर दी तथा आवेदन पत्र नामजूर कर दिया। अंग्रेज राजनीतिज्ञ कहा करते थे कि भारत के प्रशासन का भार उनका एक पवित्र उत्तरदायित्व है, परन्तु इस उत्तरदायित्व की जगह पर उन्होंने भारत से विश्वासघात किया। निर्लज्जता से उन्होंने भारत की दो लाख पौंड वार्षिक आय से अपने देश मे पार्टी हित के लिए लंकाशायर के वोटो का सौदा कर दिया।

मि० क्राफोर्ड के प्रशासन के समर्थन मे स्मरणीय सघर्ष करने के पश्चात फिरोजशाह ने बम्बई नगरपालिका के मामलो मे भाग नहीं लिया। उन्होंने मुफस्सिल अदालतो मे वकालत आरम्भ कर दी। उनकी कुशाग्र बुद्धि हाजिरजवाबी और जिरह करने की कुशलता के कारण फौजदारी मुकदमा मे लोग इनके पीछे पीछे घूमते। नगरपालिका सुधार के प्रारम्भिक वर्षों मे जो वादविवाद हुआ उसमे उन्होंने कम ही भाग लिया परन्तु जब भी कभी उन्हे बोलने का अवसर मिला तो उनके बोलने का ढग पहले जैसा ही निर्भीक व स्वतन्त्र होता था।

ऐसा ही एक अवसर बम्बई नगरपालिका के अध्यक्ष के चुनाव के समय उपस्थित हुआ। श्री दोसाभाई फ्रामजी इस पद के लिए खडे हुए। प्रिंस आफ वेल्स (जो आगे चलकर सम्राट एडवर्ड सप्तम बने) भारत पधार रहे थे, जिस से नगरपालिका के अध्यक्ष का पद विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो गया था। फ्रामजी का नाम इस पद के लिए प्रस्तावित किया गया। मि० मकलीन, जो कि जातीय पक्षपात और घमड के कारण बदनाम थे, उठे और उन्होंने दोसाभाई की उम्मीदवारी का तीव्र विरोध किया। इन महाशय का विचार था कि भारतीयों के लिए नगरपालिका का अध्यक्ष बनने का समय अभी नही आया है। इनका कहना था कि कोई भी भारतीय निगम के अध्यक्ष का काय यूरोपियन की तरह निष्पक्षता से नहीं कर सकता।

इसके अतिरिक्त इनका यह भी दावा था कि बम्बई नगर की सम्पन्नता का श्रेय नगर के अंग्रेज व्यापारियों को है तथा बम्बई नगर एक तरह से अंग्रेज शहर ही है। प्रिंस आफ वेल्स के स्वागत का सम्मान भी किसी अंग्रेज को ही दिया जाना चाहिए।

मि० मैक्लीन के इस भाषण से सभा में शोर मच गया और सब तरफ से लोगों ने इसकी निन्दा की। फिरोजशाह ने मि० मैक्लीन के भाषण का जो उत्तर दिया वह बहुत ही गौरवपूर्ण और प्रासंगिक था। अपने भाषण में उन्होंने आशा प्रकट की कि नगरपालिका जातीय तथा राजनीतिक पक्षपात में न पड़कर, औचित्य तथा न्याय की नीति पर चलती रहेगी। उन्होंने कहा कि निगम के सदस्य होने के नाते उनका यह कर्तव्य है कि किसी भी पद पर नियुक्ति के समय वह केवल गुण और योग्यता को ही देखें। उन्होंने कहा यदि किसी अंग्रेज में आवश्यक योग्यता है तो सदस्यगण उसे मान्यता देने के लिए हर समय तत्पर हैं। मुझे कोई संदेह नहीं कि यदि किसी भारतीय में भी ऐसी ही योग्यता है तो अंग्रेज भी उदारता से काम लेंगे तथा बिना किसी हिचकिचाहट के इस योग्यता को मान्यता देंगे।

अध्याय 7

इलबर्ट बिल

1883

लार्ड रिपन के वाइसराय बनने पर सरकारी प्रशासन की मनोवृत्ति में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ। लार्ड लिटन की विभ्रान्त तथा प्रतिक्रियात्मक नीति ने जनता में राजनीतिक चेतना जगा दी थी। इनके उत्तराधिकारी लार्ड रिपन ने इस राजनीतिक चेतना को सही मार्ग पर ले जाने का कार्य हाथ में लिया। भारत शताब्दियों से सोया हुआ था परन्तु अब कुछ ऐसी शक्तियां उत्पन्न हो गई थीं जिन्होंने देश को इस लम्बी निद्रा से जगाया। इन शक्तियों ने स्वतन्त्रता की धुंधली सी अभिलाषा को शक्ति और वास्तविकता प्रदान की जो देश की अन्तरात्मा को झकझोर रही थी।

समाचारपत्रों और सार्वजनिक सभाओं द्वारा स्वतन्त्रता की नई भावना को बराबर प्रोत्साहन दिया जा रहा था। चारों ओर जागृति के चिन्ह दिखाई दे रहे थे परन्तु ये शक्तियां बिखरी हुई थीं। प्रगतिशील शक्तियों में एकसूत्रता और बल का अभाव था, इनको प्रभावी बनाने के लिए और इनको संगठित करने के लिए एक प्रेरणा की आवश्यकता थी। यह प्रेरणा आकस्मिक ही अनोखे ढंग से इलबर्ट बिल के रूप में प्राप्त हो गई। अनायास ही यह बिल ऐसे विस्फोट का कारण बना जिसने देश को एक छोर से दूसरे छोर तक हिला दिया था।

इस बिल का उद्देश्य एक साधारण सी असामान्यता दूर करना था और इसका इतिहास बहुत ही रोचक है। उस समय के फौजदारी कानून के अन्तर्गत किसी यूरोपियन व्यक्ति के विरुद्ध मुकदमा या तो प्रसीडेंसी मजिस्ट्रेट या कोई

यूरोपियन मजिस्ट्रेट ही सुन सकता था। किसी भारतीय मजिस्ट्रेट या जज को, चाहे वह कितने भी ऊंचे पद पर क्यो न हो, यह अधिकार नही था कि वह किसी यूरोपियन के विरुद्ध मुकदमा सुन सके, यूरोपियन चाहे कितना ही गिरा हुआ अथवा लुच्चा लफंगा क्यो न हो, जबकि भारतीय मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश के मातहत गोरे जज या मजिस्ट्रेट को यह अधिकार प्राप्त था।

1882 म फौजदारी कानून म सशोधन विचाराधीन था। श्री बिहारीलाल गुप्त ने, जो बगाल सिविल सर्विस के सदस्य थे, मि० ऐश्ले ईडन को एक पत्र लिखा जिसमे उन्होने कानून के इस बेतुकेपन की ओर ध्यान आकर्षित किया। श्री गुप्त ने लिखा कि जब तक वह कलकत्ता के प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट थे तब तक तो उन्हे गोरो के विरुद्ध मुकदमा सुनने का पूरा अधिकार था परन्तु जब तरक्की पाकर उनकी नियुक्ति कलकत्ता के बाहर महत्वपूण पद पर हो गई तब उनके पास यूरोपियन नागरिको से सम्बन्धित मामूली मुकदमे सुनने का भी अधिकार नही रहा।

सर ऐश्ले ईडन ने श्री गुप्त के सुझाव का समथन किया और उनकी चिट्ठी भारत सरकार को भेज दी। परन्तु 1882 का बिल पहली मजिल से निकल चुका था। श्री गुप्त के सुझावो को बिल म निगमित करना उस समय सम्भव नही था, फिर भी भारत सरकार ने प्रादेशिक सरकारो से इस सुझाव के बारे मे राय मागी। प्रादेशिक सरकारे भी एकमत थीं कि फौजदारी कानून मे सशोधन किया जाए। सन् 1883 मे मि० कोर्ट न इलबट ने (जिन्हे बाद मे 'सर' की उपाधि दी गई) एक अलग बिल पेश किया, जिसमे श्री गुप्त के सुझाव शामिल किए गए। इस बिल मे यह व्यवस्था की गई कि भारतीय जिला मजिस्ट्रेटो व सेशन जजो को अग्रेज नागरिको के विरुद्ध फौजदारी मुकदमे सुनने का अधिकार होगा। प्रादेशिक सरकारो को यह अधिकार दे दिया गया कि यदि वे चाहें तो यही अधिकार, जिनका बिल म उल्लेख किया गया था, निश्चित श्रेणियो के दूसरे अफसरो को भी दे सकती है।

बिल का पेश होना एक प्रकार से एग्लोइण्डियन समुदाय के क्रोध के विस्फोट का सकेत था। इस समुदाय ने देश भर से लार्ड रिपन की सरकार पर गुस्से और विरोध की बौछार की। देश भर मे सभाए हुई, उनमे उत्तेजक भाषण दिए

गए। भारतीय लोगा तथा सरकार की खूब गाली-गलौज की गई।

कलकत्ता में टाउन हाल म होने वाली सभा बिल की आलोचना की ताक्ना म सबम बढ़ चढकर थी। जब भी किसी भाषण म वाइसराय या मि० इलबर्ट का नाम आता तो उपस्थित श्रोता चिल्लाते, पुकारते या हाय हाय करते। इस सभा के मुख्य वक्ताओं म मि० ब्र मन थे जो विख्यात वकील थे। इस बिल को लेकर जो वादविवाद उठा उसम इन महाशय ने खूब कुख्याति पाई। इस सभा म उनका आचरण बहुत ही निन्दनीय था। अग्रेजो म भी एस सन्तुलित व्यक्तियो का अभाव नही था, जिन्होंने इस असौजन्य के प्रदर्शन का खुला विरोध किया। एक ऐस सज्जन न समाचारपत्रों को पत्र लिखा, जिसम उन्होंन मि० ब्रन्सन को खूब डाटा। इस डाट के कारण मि० ब्रन्सन विवश हो गए कि उन लोगा स क्षमा याचना करें जिनको कि उन्होंने सभा म खुलकर गालिया सुनाइ थी।

लार्ड रिपन न अग्रेज सम्राट की प्रजा की विभिन्न श्रेणियो म कानून के सामने समानता लाने का जो प्रयत्न किया था उसके विरुद्ध भारत के अग्रेज नागरिको ने उपरोक्त सभा के अलावा और भी रोष प्रकट किए। कई सावजनिक सभाओ म इन लोगो ने वाइसराय का अपमान किया और हुल्लड मचाया। जब वाइसराय कलकत्ता पधारे तो इस अवसर पर अग्रेज और यूरेशियन समुदाय ने उनके विरुद्ध जो भाव प्रदशन किया वह बहुत ही लज्जाजनक था।

उस समय यह अफवाह बहुत जोरो पर थी, कि कलकत्ता म कुछ ऐसे सिरफिरे लोग हैं जिन्होंने यह निश्चय कर लिया है कि यदि सरकार इस बिल पर अडी रही, तो वह राजभवन पर हल्ला बोलकर वहा के सतरियो को काबू कर लेंगे। इसके पश्चात वाइसराय को जबरदस्ती पकडकर चादपाल घाट ले जाकर जहाज मे बठाकर आशा अतरीप के रास्ते वापस इगलण्ड भेज देंगे। इससे यह मालूम होता है कि क्रोध के कारण अग्रेज समुदाय विवेक छोड बठा था।

इस असाधारण षडयत्र की बात पर विश्वास नही होता परन्तु सर हैनरी काटन का कहना था कि पुलिस कमिश्नर और लेफ्टिनेन्ट गवनर को इस षडयन्त्र के बारे मे पता था। यह भी कहा जाता है कि कई अग्रेज बगीचा मालिको न यह

सौगन्ध खाई थी कि यदि यह बिल कानून बन गया तो वे उसे कभी भी स्वीकार नही करेंगे। यदि किसी भारतीय मजिस्ट्रेट ने यूरोपियन पर मुकदमा सुनने की धृष्टता तो उससे अपने ही ढग से निपटेंगे।

बिल के प्रति विरोध और क्रोध प्रदर्शन के य थोडे से उदाहरण है। राजनीतिक चिन्तन और सरगर्मी के बडे केन्द्रो म बम्बई ही एक ऐसा नगर था जिसमे शान्ति रही। इस नगर ने गम्भीर चिन्तन की ख्याति पाई है, जो कि बहुत समय से इस नगर के राजनीतिक जीवन की विशेषता रही है। इस नगर मे अग्रेज तथा भारतीय अपने अपने दृष्टिकोण का जोरदार समर्थन करते, इस विषय को लेकर इन दोनो समुदायो म बहुत मनमुटाव हो चुका था।

28 अप्रल सन 1883 को टाउन हाल मे सर जमशेदजी जीजीभाई की अध्यक्षता मे बम्बई के नागरिको की सभा हुई। सभा बहुत ही शान्तिपूर्ण तथा सयत रूप से हुई। बदरुद्दीन तयबजी ने एक प्रतिभाशाली तथा भावपूर्ण भाषण दिया तथा सभा के सामने मुख्य प्रस्ताव प्रस्तुत किया। प्रस्ताव मे कहा गया कि सभा की राय मे कानून को निष्पक्ष और न्यायोचित ढग से लागू करने के लिए बिल बहुत आवश्यक है। यह भी कहा गया था कि अग्रेज सरकार ने इस देश का प्रशासन करने के लिए जो न्यायसगत नीति अपनाई है यह बिल बिलकुल उसके अनुरूप है।

फिरोजशाह ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। जब वह बोलने के लिए उठे तो बहुत देर तक लोग जोर जोर से तालिया बजाते रहे। उनके भाषण म विषय के प्रमुख पहलुओ पर ही प्रकाश डाला गया था। उन्होने कहा कि बिल के सम्बन्ध मे गोरे लोगो ने जो रूप अपनाया है वह मि० ब्राइट के कथन को सत्य प्रमाणित करता है। मि० ब्राइट का कथन था "भारत जीतने के लिए हमने दस ईश्वरीय आदेशो का उल्लघन किया है तो उस पर अपना प्रभुत्व बनाए रखने के लिए हजरत मूसा के उपदेश के उल्लघन से पीछे हटने का भी समय कभी का निकल चुका है।'

फिरोजशाह बोले, "भारत पर शासन करने की नीति यह रही है कि ब्रिटिश

महारानी की प्रजा के प्रति चाहे वह किसी भी जाति की हो और किसी धर्म की अनुयायी हो, समानता तथा न्याय के सिद्धान्त पर व्यवहार किया जाय। पर इस नीति पर इतना भीषण व खुला प्रहार पहले कभी नहीं हुआ। इसलिए ब्रिटिश सत्ता और इसके स्थय के मुख्य आधार पर विचार करना आवश्यक है।

फिरोजशाह बोले, "विधाता ने भारत की देखरख का काय इंग्लैण्ड को सौंपा, तो उसके विधान म क्या था यह कहना कठिन है। मैं समझता हू कि इंग्लैण्ड के सामन केवल दो ही माग है। इसके सम्ब ध म मैं आपके सामन व शब्द रखना चाहता हू जिनका उल्लेख बाइबिल म है। यहूदियो क प्रभु न इसरेइल यहूदियों से कहा था देखो! यह दिन तुम्हारे लिए वरदान भी हो सकता है और अभिशाप भी। यदि तुम मेरे आदेश का पालन करोग तो आज का दिन तुम्हारे लिए सौभाग्यशाली होगा पर तु यदि तुमन मेरा आज्ञा का उल्लघन किया और दूसरे देवताओ की पूजा म पडकर, जिनके सम्बन्ध म तुम कुछ नही जानत, मेर दिखाए हुए माग से तुम भटक गए, तो यह दिन अभिशाप बन जाएगा।

इस बिल को लेकर बहुत से भाषण दिए गए और बहुत से लेख छपे। फिरोजशाह ने उन सिद्धान्तो की जिन पर बिल आधारित था तकपूण व्याख्या की तथा बिल के विरोधियो की भी आलोचना की। इस आन्दोलन म भाग लेने क कारण वह विख्यात हो गए। लोग उन्हें भारत के राजनतिक विकास मे एक बडा बल समझन लगे।

सभा न अन्त म सरकार को एक आवेदन पत्र भेजना स्वीकृत किया। यह आवेदन पत्र बहुत विस्तत था और इसम बडे तकपूण ढग स बिल का समथन किया गया था। हर प्रकार से यह सभा असाधारण थी। इस वादविवाद मे जिन लोगो का दृष्टिकोण सन्तुलित था, वे भी इस सभा से बहुत ही प्रभावित हुए। टाइम्स आफ इडिया ने इस सभा के बारे म लिखत हुए कहा —

"इस सभा म यथेष्ट सख्या म लोग आए और इसे भारतीयो की प्रतिनिधि सभा माना जा सकता है। दो या तीन वक्ता ऐसे थ जिनके भाषणो स पता चलता था कि व अंग्रेजी भाषा की बारीकियो से पूणत परिचित हैं। हम लोगो म से

कुछ ऐसे हैं जिन्हें विश्वास है कि भारत की प्रमुख जातियों का बौद्धिक भविष्य उज्ज्वल है। इन लोगों का इन प्रमुख वक्ताओं के भाषण सुनकर बहुत हर्ष हुआ। इस अवसर पर बोलने वाले दो तीन वक्ता जैसे कि मि० तलंग मि० बदरुद्दीन और फिरोजशाह मेहता के भाषणों से यह ज्ञात हुआ कि इन लोगों को अंग्रेजी मुहावरे पर उतना ही पाण्डित्य प्राप्त है जितना कि प्रसिद्ध यूनानी वक्ता सिसरो का यूनानी भाषा के मुहावरे पर था।'

अंग्रेजी सम्राट ने भारतवासियों की स्वाधीनता की भावना की पूर्ति के लिए कुछ वचन दिए थे। एक उदारचित्त वाइसराय ने इस इल्बर्ट बिल द्वारा इन वचनों की पूर्ति का प्रयास किया था परन्तु इस बिल के कारण क्रोध व वैमनस्य की जो आंधी उठी उसका वृत्तान्त एक घिनौनी कहानी है। वाइसराय के प्रयासों का कैसे निष्फल बनाया गया, इसे हम संक्षेप में बताते हैं।

बिल के पहले पाठ को प्रस्तुत करने के पश्चात् इस पर प्रादेशिक सरकारों और अधिकारियों की राय मांगी गई। केन्द्रीय सरकार को पता चला कि इस बिल के बारे में प्रादेशिक सरकारों में भारी मतभेद है। जातीय पक्षपात पर आधारित जो भीषण आन्दोलन उठ खड़ा हुआ था उसकी शक्ति के आगे सरकार ने घुटने टेक दिए। बिल में यह व्यवस्था की गई थी कि भारतीय मजिस्ट्रेट भी अंग्रेज नागरिकों के विरुद्ध फौजदारी मुकद्दमे सुन सकेंगे परन्तु अब यह व्यवस्था हटा दी गई। यह अधिकार केवल जिला मजिस्ट्रेट और सेशन जजों तक ही सीमित रखा गया। इस प्रकार बिल का क्षेत्र बहुत संकुचित कर दिया गया। इस संशोधन के परिणामस्वरूप सिर्फ आधा दर्जन ऐसे भारतीय जज थे जिन्हें अंग्रेज नागरिकों के विरुद्ध फौजदारी मुकद्दमे सुनने का अधिकार रहा। भारत मंत्री ने इस संशोधित बिल को मंजूरी दे दी, जिसकी घोषणा 7 दिसम्बर 1883 को वाइसराय ने लेजिस्लेटिव कौंसिल की बैठक में की। बिल के विरोधी अब भी संतुष्ट नहीं थे। जातीय भावना ने विस्फोट की धमकियां पहले की तरह ही जारी रखीं। ऐसा लगता था कि बिल के विरोधी तब तक संतुष्ट नहीं होंगे जब तक कि यह बिल वापस न ले लिया जाएगा, परन्तु सरकार यह बात मानने के लिए तैयार न थी। बिल के विरुद्ध प्रचंड रूप से आन्दोलन चलता रहा। ऐसी हालत में कलकत्ता के मि० इवान्स ने विरोधी पक्ष की

ओर से समझौते के लिए कुछ प्रस्ताव रखे। सरकार ने यह प्रस्ताव स्वीकार तो नहीं किए, परन्तु इसके कारण सरकार और विरोधी पक्ष के बीच, बातचीत का रास्ता खुल गया। अन्त में इस परस्पर बातचीत के फलस्वरूप समझौता हो गया, जिसे लोगों ने समझौता न कहकर धमसंधि का नाम दिया।

कुछ माह पहले बम्बई सरकार ने बिल के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार को यह सुझाव दिया था कि जिला मजिस्ट्रेटों और सेशन जजों की अदालतों में जब किसी अंग्रेज या यूरोपियन नागरिक के विरुद्ध मुकदमा चले तो उस मुकदमे को जूरी सुने, जिसके आधे से अधिक सदस्य यूरोपियन या अंग्रेज हों।

इंगलिश विधिशास्त्र का एक मौलिक सिद्धान्त है कि हर एक अंग्रेज को अधिकार है कि उसके विरुद्ध मुकदमे की सुनवाई उसके समकक्ष व्यक्ति ही करें। यह सिद्धान्त मगनाकार्टा पर आधारित है। बिल के आलोचकों ने इसका विरोध करते हुए, बहुत ही कठोरता से मगनाकार्टा और ऐसी ही दूसरी गम्भीर घोषणाओं की दुहाई दी थी। अन्त में सरकार को झुकना पड़ा और उसने इस सिद्धान्त को मान लिया।

इस 'धमसंधि' से भारतीय समुदाय को बहुत ही निराशा हुई। लोगों को संशय था कि लेजिस्लेटिव कौंसिल के कुछ सदस्य बिल के विरोधी आन्दोलन के आगे हथियार डाल देना चाहते हैं। वाइसराय के हाथ मजबूत करने के लिए सार्वजनिक सभाएं और आवेदन पत्र देने का आयोजन काफी समय से चल रहा था। परन्तु इससे पहले कि कुछ और किया जाता सरकार ने समझौते की घोषणा कर दी।

अंग्रेजी समाचारपत्रों ने इसे अपनी भारी विजय माना, भारतीय जनता के विचार में यह सरकार की पराजय थी। बंगाल के कुछ लोग इस समझौते के बहुत विरुद्ध थे। ऐसा लगता था इस बात को लेकर कोई न कोई उपद्रव हो जाएगा, परन्तु भारतीय नेताओं में से अधिकांश ने इस संकटपूर्ण अवसर पर बहुत संयम और सूझ बूझ से काम लिया तथा स्थिति को सम्भाल लिया। लगभग एक वर्ष के भीषण आन्दोलन के बाद, 25 जनवरी 1884 को यह बिल संशोधित रूप में पास हो गया।

8

नागरिक क्षेत्र मे सम्मान

1882 1885

लार्ड रिपन के शासन मे कई और कानून बने जो इलबर्ट बिल की तरह विवादास्पद तो नही थे परन्तु इससे कम महत्वपूर्ण भी नही थे। इनके कारण लार्ड रिपन का प्रशासन स्मरणीय माना जाता है। नागरिक स्वशासन की योजना का उनके समय मे ही प्रारम्भ हुआ। इस योजना को वाइसराय की राजनीतिक सूझबूझ तथा भारतीयो के प्रति उनकी सहानुभूति का स्मारक समझा जाता है। मई 1882 मे सरकार ने इस योजना की घोषणा की। जिस प्रस्ताव मे यह घोषणा की गई वह वाइसराय की राजनतिक दूरदर्शिता और उनके महान उद्देश्यो का प्रतीक है।

नागरिक स्वशासन के बारे मे सरकार की नीति की इस घोषणा से देश भर मे उमग की लहर दौड गई। लोग सरकार की नीति को कार्यरूप मे परिणत देखने के लिए उत्सुक हो उठे। दूसरी म्युनिसिपल्टियो की तरह, बम्बई नगरपालिका ने भी एक उदार सविधान की आवश्यकता महसूस की। जनवरी 1883 मे इस विषय पर नगरपालिका मे बहुत सजीव बहस हुई।

नगरपालिका के भारतीय सदस्यो ने कई सुझाव दिए। इन सुझावों का उद्देश्य था नगरपालिका को अधिक अधिकार व उत्तरदायित्व सौंपना। इन लोगो का सुझाव था कि सरकार तथा जस्टिसो की तरफ से नामजद किए हुए सदस्यो की सख्या कम कर दी जाए। दूसरे नामजद सदस्य तथा उनके समर्थन

नगरपालिका के विधान में कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन करने के बिलकुल विरुद्ध थे। इन परिवर्तन विरोधियों के तर्कों का फिरोजशाह ने अपने भाषण में जवाब दिया। इस भाषण में उन्होंने संक्षिप्त तौर पर उस समय की स्थिति का सिंहावलोकन किया। उन्होंने अपने भाषण में बड़े ही कुशल ढंग से यह सिद्ध कर दिया कि नगरपालिका पर सरकारी नियंत्रण को कम करना आवश्यक है। सरकार को डर था यदि करदाताओं की तरफ से निर्वाचित हुए सदस्यों की संख्या बढ़ा दी गई तो नगरपालिका के अधिकतर स्थान भारतीयों के हाथ में चले जाएंगे। फिरोजशाह ने कहा कि यह भय निराधार है और उन्हें स्वतंत्र निर्वाचन प्रणाली की क्षमता पर दृढ़ विश्वास है। पिछले कुछ वर्षों में म्युनिसिपल प्रशासन में हुए सुधारों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए उन्होंने कहा, "इन चमत्कारिक परिवर्तनों का श्रेय निर्वाचन सिद्धांत को ही है।"

सभा में हुई बहस के परिणामस्वरूप कानून में संशोधन के सुझाव देने के लिए एक छोटी सी कमेटी बनाई गई - फिरोजशाह इस कमेटी के सदस्य थे। समय समय पर इस कार्य के लिए और भी कमेटियाँ बनाई गई। 1888 में म्युनिसिपल ऐक्ट का निर्माण हुआ। इस विधान के अनुसार आज तक नगर का प्रशासन चल रहा है। इस कार्य में फिरोजशाह ने बढ़चढ़कर भाग लिया। फिरोजशाह के कार्यों का वर्णन करते समय हम इन कमेटियों के प्रयत्नों का भी वर्णन करेंगे।

× × ×

फिरोजशाह को नगरपालिका का अध्यक्ष चुना गया। उस समय वह युवावस्था में ही थे। जनता की सेवा के कारण ही उन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ था। उनसे यह भी कहा गया कि वह वाइसराय को बम्बई नगरपालिका के भवन की नींव रखने के लिए आमंत्रित करें। इस भव्यभवन में आज भी बम्बई नगरपालिका के कार्यालय है। वाइसराय को आमंत्रित करते हुए फिरोजशाह ने लिखा—

'माई लार्ड! आपको आमंत्रित करने से हमारा अभिप्राय केवल एक प्रभावशाली समारोह की शान बढ़ाना नहीं है। बम्बई के नागरिकों को अपनी स्वतंत्र नागरिक संस्थाओं पर यदि गर्व है, तो वह क्षम्य है। स्वशासन के सच्चे

सिद्धान्तो के विस्तार के लिए आपसे अधिक किसी भी व्यक्ति ने काय नही किया है। इन सिद्धान्तो के प्रचारक के रूप म हम सब आपका स्वागत करत हैं और इसी आशय से हमने आपको आमन्त्रित किया है।"

लाड रिपन ने इस आम त्रण क उत्तर म पत्र लिखा। इसम उन्होने बम्बई नगरपालिका की लोकहित भावना और ऊर्जस्विता की जिनके कारण यह भारत की दूसरी नगरपालिकाओ के लिए आदश मानी जाती थी बहुत सुन्दर श्रद्धाजलि अर्पित की। उन्होने इस पत्र म लिखा—

"मैं समझता हूँ यह आधार शिला केवल एक भव्य भवन के हेतु ही नही है। मुझे आशा है कि आज हम एक ऐसी सस्था की नीव डालेंगे जो शिक्षा और यातायात के साधनो का विकास करेगी, नगर को अधिक साफ सुथरा रखेगी और रोगग्रस्त नागरिको के लिए दवादारू का प्रबन्ध करेगी। जिन व्यक्तियो ने लोकहित के लिए इतना परिश्रम किया है उनके लिए यह सस्था एक सगमरमर के भव्य भवन से कही अधिक स्थायी स्मारक सिद्ध होगी।

बम्बई नगरपालिका की लोकहित भावना और कमठता की ख्याति के पीछे सबस ज्यादा हाथ फिरोजशाह का था। यह उपयुक्त ही था कि नगरपालिका के भवन की नीव उनकी अध्यक्षता मे ही डाली गई। उन्होन नागरिक कार्यों म महत्त्वपूण भाग लिया। उनके कार्यों की मान्यता दते हुए निगम ने उन्हे युवावस्था म ही अध्यक्ष चुन लिया था। इस पद के लिए न उन्होने किसी से याचना की और न किसी स सिफारिश ही करवाई। फिरोजशाह अपनी लोकहित भावना और योग्यता का पर्याप्त प्रमाण दे चुके थ। उन्होने जिस कुशलता से अध्यक्ष पद का गुरुतर काय निभाया था उमस सभी लोग उनकी प्रशसा करन लगे। एक वष पश्चात फिर उन्हे अध्यक्ष पद के लिए चुन लिया गया।

फिरोजशाह की वकालत अब खूब चल निकली थी परन्तु अध्यक्ष पद क कारण वकालत म बहुत हज होता था। अध्यक्ष पद ऐसा है कि जो भी इस कुर्सी को सम्भालता है उसे अपना समय व शक्ति लगानी पडती है। जिस दश म हर समुदाय को अपनी जीविका क लिए काम करना पडता है, वहा लोकसवा

के लिए काफी त्याग भी करना पडता है। फिरोजशाह ने आर्थिक हानि को खुशी खुशी सह लिया। यह ठीक है कि ऐश्वर्य से उन्हे प्रेम था, खुला खर्च करने की आदत थी और वह बडी तडक भडक से रहते थे। नेपियन सी रोड पर उनका मकान बहुत ही ठाटदार था। वह दो घोडो की बग्घी मे आते-जाते थे। उनका पहनावा बहुत ही भडकीला होता था। यह उनका नियम था कि जैसे ही उनके पास इतना धन आ जाता जिससे कि वह ठाट बाट से रह सकें, तो वह वकालत छोडकर लोकसेवा मे जुट जाते। कई बार उनके पास ऐसा मुकद्दमा आता, जिसमे उन्हे चोखी फीस मिल सकती थी परन्तु दूसरी ओर उसी समय उन्हे नगरपालिका की बैठक मे जाना होता, ऐसे समय वह आर्थिक हानि की परवाह न करते हुए सभा मे ही चले जाते। यदि वह चाहते तो लखपति बन सकते परन्तु मरने के बाद थोडा सा ही धन छोड गए थे। हा लोकसेवा और कार्यसम्पादन का जो रिकार्ड उन्होंने स्थापित किया वहा तक बहुत कम दावेदार पहुच पाए हैं।

लार्ड लिटन के प्रेस ऐक्ट ने, जिसे गलाघोटू कानून भी कहते थे, स्वतत्रता की उत्कठा को दबा तो लिया परन्तु फिर भी आग भीतर ही भीतर सुलगती रही। इलबर्ट बिल से सम्बन्धित आन्दोलन और लार्ड रिपन की उदार नीतियो ने सोई हुई शक्तियो को कैसे जगाया, इसका वृत्तान्त हम दे ही चुके हैं। देश भर के पढे लिखे लोग हाल ही मे हुई घटनाओ का महत्व समझ गए थे। वे राजनीतिक मागो की पूर्ति के लिए एक सुव्यवस्थित आन्दोलन चलाने के महत्व को भलीभाति समझ गए थे।

राजनैतिक जागृति का प्रथम फल था जनवरी 1885 मे बम्बई प्रेसीडेन्सी एसोसियेशन की स्थापना। पुरानी बम्बई एसोसियेशन, जिसके कर्ताधर्ता नौरोजी फरदूनजी थे, वास्तव मे समाप्त हो चुकी थी। ईस्ट इण्डिया एसोसियेशन की बम्बई शाखा का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नही रहा था, जिसके कारण यह शाखा न तो जनता की माग सरकार के सामने रख सकती, न अपने अधिकारो की ही रक्षा कर पाती। इन दोनो सस्थाओ को फिर से सक्रिय बनाने के लिए कई बार प्रयत्न किए गए परन्तु निष्फल रहे।

31 जनवरी 1885 को फामजी कावसजी इ स्टीटयूट मे एक सावजनिक सभा हुई, जिसम बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन का उदघाटन किया गया। उस समय हर सावजनिक आ दोलन म फिरोजशाह, तयबजी और तलग अगुआ होते। इस त्रिमूर्ति ने इस सभा का आम त्रण पत्र भी जारी किया था। श्री तलग फिरोजशाह और दिनशा वाचा इस एसोसियेशन के अवतनिक म त्री चुने गए। इस सभा मे वही पुराने वक्ता थे और पहले की भाति ही इ होने भाषण दिए। लोगो न इस नई सस्था के ज म के समय बहुत हष प्रकट किया।

एसोसियेशन न अपने प्रारम्भिक वर्षों म बहुत ही सरगर्मी दिखाई। राजनीतिक सभाओ, आवेदन पत्रो और प्रस्तावो द्वारा इस सस्था ने जनता का ध्यान सावजनिक विषयों की ओर आकर्षित किया। सिद्धा तो के प्रश्नो पर यह सस्था छोटी से छोटी बात पर आवाज उठाने के लिए तत्पर हो जाती।

इस एसोसियेशन का सबसे पहला काय था इ ग्लैंड म भारत की स्वतत्रता के लिए कमठ प्रचार करना। इस प्रचार के लिए अवसर भी उपयुक्त था क्योकि इ ग्लड म आम चुनाव होने वाले थे। उन दिनो मि० ग्लडस्टन इ ग्लड के प्रधान मत्री थे उ होने भारत के लिए होमरूल के सुझाव हाउस आफ काम स के सामने रखे परन्तु यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिए गए। इ ग्लड की पार्लियामट न भारतीय मामलों मे रुचि लेनी शुरू कर दी। इनमे कुछ सदस्यो की तो भारतीय मामलो म विशेष रुचि थी। एसोसियेशन का विचार था कि इग्लैंड के मतदाताओ को भारतीय लोगो की महत्वाकाक्षाओ से परिचित कराने का यह अनुपम अवसर है। एसोसियेशन चाहती थी कि इ ग्लड के मतदाताओ को ऐसे उम्मीदवारों का समथन करने के लिए राजी किया जाए जो भारत के हित के पक्ष म हो।

इस लक्ष्यपूर्ति के साधनो का निश्चय करने के लिए, सितम्बर 18[illegible] बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन की एक सभा हुई [illegible]। इस सभा के [illegible] वक्ताओ ने इ ग्लैंड की जनता को भारतीय [illegible] म परिचित [illegible] आवश्यकता पर जोर दिया। एक वक्ता न इ ग्लैंड के [illegible] के लेख का उद्धरण दिया। इस लेख मे लिखा था—

"वर्तमान परिस्थिति में यह बहुत आवश्यक है कि हम भारतीय दृष्टिकोण को समझें। इंग्लैंड में ऐसे लोगों की कमी नहीं जिन्होंने भारतीय इतिहास का थोड़ा सा अध्ययन कर लिया है तथा जिनकी प्रांखों पर जातीय पक्षपात का चश्मा चढ़ा हुआ है। ऐसे लोग भारत सम्बन्धी विषयों पर विशेषज्ञ होने का दावा करते हैं।

सभा में बहुत से प्रस्ताव पास हुए। इंग्लैंड के मतदाताओं के नाम भारत की ओर से एक खुला खत प्रकाशित करने और उसे बांटने का प्रस्ताव मंजूर किया गया। यह प्रस्ताव दादाभाई नौरोजी ने प्रस्तुत किया। इस प्रस्ताव में कहा गया था कि मारक्विस आफ हार्टिंग्टन, सर ज० फियर, कर्टन वरो और मसम जोन ब्राइट, जे० स्टग, लाल मोहन घोष, विलियम डिग्बी डब्ल्यू० एस० केन, एस० वाय एस० लैंग और डब्ल्यू० सी० ब्लाउडन इत्यादि इंग्लैंड की पार्लियामेंट की सदस्यता के उम्मीदवार भारतीयों की सहायता के पात्र हैं। इसका कारण इन महानुभावों की सेवाएं और सार्वजनिक रूप से प्रगट किए गए विचार हैं। प्रस्ताव में यह भी कहा गया कि सर रिचर्ड टेम्पल, मि० जे० एम० मक्लीन, सर लेविस पलि, मि० ए० एस० आयरटन और सर रापर लेथब्रिज को भारतीयों की ओर से बोलने का अधिकार नहीं है।

दादाभाई नौरोजी के बाद फिरोजशाह बोले, इन्होंने अपने भाषण में ध्यान देने योग्य बातें कहीं। तय्यबजी का विचार था कि इंग्लैंड के दोनों महान राजनैतिक दलों के सामने भारतीय दृष्टिकोण रखना और उनकी सहायता मांगना फलदायक होगा परन्तु फिरोजशाह इस सुझाव से सहमत नहीं थे। वह दादाभाई नौरोजी के सुझाव से कुछ आगे जाना चाहते थे। वह इस पक्ष में थे कि भारतीय समस्याओं को इंग्लैंड के राजनैतिक दलों की समस्या बनाया जाए। उनका विचार था भारतीय समस्याओं को इंग्लैंड की अन्तर्दलीय संघर्ष की तीखी आलोचनाओं का विषय बनाया जाय।

इस प्रकार भारतीय राजनैतिक संस्थाओं ने इंग्लैंड की जनता तक अपनी आवाज पहुंचाने का दृढ़ प्रयास किया। इस प्रयास के परिणाम रोचक थे और साथ ही विचारोत्तेजक भी। जहां तक चुनाव का सम्बन्ध है इन लोगों की आशाओं का

बहुत धक्का लगा। मतदान करते समय मतदाताओ ने भारत और उसके हिमायती उम्मीदवारो के बारे म सोचने का कष्ट ही नही किया। परिणाम यह हुआ कि जिन उम्मीदवारो का भारतीय नेताओ ने समर्थन किया था, वे चुनाव हार गए और जिन उम्मीदवारो ने भारत की समस्याओ से सम्बधित दृष्टिकोण की निदा की थी वे चुनाव म सफल हो गए।

इग्लैंड के लोग भावना-शून्य मान जाते हैं, परन्तु भारतीय नेताओ का यह शिष्टमडल इग्लैंड के लोगो मे भारत की समस्याओ के प्रति रुचि उत्पन्न करने मे कुछ सफल हुआ। इस शिष्टमडल ने उस समय की समस्याओ के बारे म बहुत से पम्फ्लेट बाटे। हजारो अग्रेजो ने भाषण सुना और श्रोताओ ने इनको आश्वासन दिया कि भविष्य मे वह भारतीय समस्याओ पर सहानुभूति से विचार करेंगे।

फिरोजशाह ने कहा—"यह तो सच है कि शिष्टमडल टेम्ज नदी को आग तो नही लगा पाया, परतु उसने अग्रेज जनता के हृदय म चिनगारी जरूर सुलगा दी। यदि भारतीय नेता अपने प्रयत्नो मे सलग्न रहे और हर वर्ष ऐसे ही शिष्टमडल भेजते रहे तो इसमे सदेह नही कि यही छोटी सी चिनगारी समय पाकर अग्नि की लपट बन जाएगी।"

9

कांग्रेस का जन्म

1885

उस समय के भारतीय सुधारकों की सरगर्मियों के फलस्वरूप भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने जन्म लिया। लगभग तीस साल से अधिक इस संस्था ने लोगों में राजनीतिक चेतना लाने तथा राष्ट्रीय आंदोलन के प्रोत्साहन और नेतृत्व का काम किया। इस काम में इस संस्था को इतनी सफलता मिली जितनी की इसके निर्माताओं को स्वप्न में भी आशा न थी। इस संस्था का जन्म 1885 के लगभग अन्त में हुआ था। आरम्भ में नवजात संस्था में कुछ संकोच था तथा इसका जन्म अप्रत्यक्ष सा था परन्तु उस समय की परिस्थितियों को देखकर कहा जा सकता था कि इस संस्था का भविष्य उज्ज्वल होगा।

लार्ड लिटन के प्रशासन में प्रतिक्रियावादी शक्तियां बढ़ रही थीं। ये शक्तियां देश की शान्तिपूर्ण प्रगति और विकास को जोखिम में डाल रही थीं। लोगों के मन में यह धारणा बैठ गई कि इन शक्तियों को रोकने के लिए कार्रवाई आवश्यक है। सरकार की नीति में प्रतिक्रियावादी झुकाव बढ़ता दिखाई देता था। इस झुकाव को रोकने के लिए एक जन आन्दोलन के संगठन का समय आ गया था। 1883 में मि॰ ऐलन आक्टेवियन ह्यूम ने इस दिशा में पहला कदम उठाया। इन्होंने सिविल सर्विस में बहुत ही प्रतिष्ठित काम किए थे परन्तु अब रिटायर हो चुके थे। 1 मार्च 1883 को इन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय के ग्रेजुएटों को एक परिपत्र भेजा। परिपत्र में इन्होंने बंगाल के नवयुवकों से उत्तेजक ढंग से अनुरोध किया कि वे राष्ट्रीय हित के लिए अपना संगठन करें। उन्होंने कहा कि

यदि आरम्भ में केवल पचास उत्साही कार्यकर्ता भी इस कार्य के लिए आगे आ जाते हैं तो एक ऐसी संस्था शुरू हो सकती है जो समय बीतने पर एक विशाल राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप धारण कर लेगी।

इस स्थान पर हम यह भी बता दें कि 30 वर्ष पश्चात श्री गोखले ने सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी का गठन भी इसी प्रकार किया था।

मि० ह्यूम ने अपनी अपील के साथ साथ एक बड़ी चेतावनी भी दी और कहा कि मन्दोत्साह देशभक्ति के बहुत कुपरिणाम निकलेंगे। उन्होंने कहा 'आपका लक्ष्य है देश के लिए, स्वयं के लिए तथा स्वतन्त्रता के लिए दृढ़ संघर्ष करना, देश के प्रशासन में देशवासियों को अधिक हिस्सा दिलाना, देश में अधिक निष्पक्ष प्रशासन लाने का यत्न करना। यदि राष्ट्र के चुने हुए और सुशिक्षित व्यक्ति भी इस ध्येय की पूर्ति के लिए निजी सुख और स्वार्थ का त्याग नहीं कर सकते तो इसका अर्थ यह होगा कि हम लोग, जो कि आपके मित्र हैं, गलत हैं तथा आपके विरोधी सच्चे हैं। आपकी भलाई के लिए, लार्ड रिपन की महत्वाकांक्षाएं निष्फल हो जाएंगी, तथा कल्पनामात्र ही समझी जाएंगी। वर्तमान स्थिति में तो प्रगति की आशा करना व्यर्थ है, फिर जैसा शासन भारत पर लागू है वह ठीक ही है। इससे अच्छे शासन के योग्य आप लोग नहीं समझे जाएंगे'

इस भावोत्तेजक घोषणा के परिणामस्वरूप 1884 के अन्त में इंडियन नेशनल यूनियन की स्थापना हुई। इस संस्था ने बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन, सार्वजनिक सभा और दूसरी राजनैतिक संस्थाओं से परामर्श करके दिसम्बर 1885 में एक अखिल भारतीय सम्मेलन बुलाने का प्रबंध किया। इस सम्मेलन का अभिप्राय था देश भर के राजनैतिक नेताओं में सहयोग बढ़ाना और आन्दोलन का कार्यक्रम तैयार करना। इन लोगों को यह आशा थी कि यह सम्मेलन भारतीय संसद का अंकुर सिद्ध होगा। यदि इस संसद का ठीक ढंग से स्थापन किया गया और इसे सुचारु ढंग से चलाया गया तो भारत विरोधियों के इस दावे को झुठलाना सम्भव होगा कि भारतीय लोग किसी प्रकार की भी प्रतिनिधि संस्था के योग्य नहीं हैं।

गोकुलदास तेजपाल संस्कृत स्कूल के न्यासियों ने, जिनमें श्री तैलंग भी थे, स्कूल की बड़ी इमारत आयोजकों को दे दी। 27 दिसम्बर तक सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों के स्वागत का प्रबंध हो चुका था। सारा दिन प्रतिनिधियों के परस्पर परिचय में बीता और आपस में विचार विमर्श रात तक चलता रहा। संध्या को बहुत से प्रमुख नागरिक उनका स्वागत करने आए। जिस काय को करने का बीड़ा सम्मेलन ने उठाया था उसकी इन नागरिकों ने सराहना की।

28 दिसम्बर 1885 का दिन भाग्य निर्णायक था। 72 सच्चे और परोपकारी व्यक्ति जो देश की हर प्रगतिशील विचारधारा के नेता थे, इस दिन अपने काय की रूपरेखा बनाने बठे। सौभाग्यवश कांग्रेस का पहला सम्मेलन बम्बई में हो रहा था। नागरिक स्वशासन की नींव भी बम्बई में रखी गई थी। इसलिए उपयुक्त था कि यह नगर राष्ट्रीय आन्दोलन का जन्मस्थान भी हो। अधिवेशन की अध्यक्षता का सम्मान मि० डब्ल्यू० सी० बनर्जी को मिला। मि० बनर्जी बंगाल के विख्यात नेताओं में से थे।

सभा में उपस्थित लोगों की संख्या अधिक नहीं थी क्योंकि सम्मेलन केवल प्रतिनिधियों तक ही सीमित था। सभा में कुछ दशक भी थे, जिनमें सर विलियम वेडरबन, मि० जस्टिस जार्डीन, प्रोफेसर वड सवथ, कनल फेलप्स, मि० रामाकृष्ण भंडारकर (जिन्हें आगे चलकर सरकार ने 'सर' की उपाधि दी) और मि० रानाडे भी थे जो उस समय पूना की लघुवाद अदालत के न्यायाधीश थे। यह सभा प्रतिनिधि सभा थी क्योंकि इसमें भारत के हर कोने के नेता भाग ले रहे थे। अध्यक्ष के शब्दों में—"भारत के इतिहास में इतनी महत्वपूर्ण और विलक्षण सभा पहले कभी नहीं हुई।" सम्मेलन में भाग लेने वाले कुछ वद्ध भी थे जसे दादाभाई नौरोजी, जिन्हें लोग 'भारत का महान वद्ध' के नाम से पुकारते थे। दूसरे लोग जैसे सवश्री बनर्जी तैलंग, सुब्रमण्य अय्यर, वाचा और फिरोजशाह अभी युवा ही थे। इन लोगों में बहुत जोश था, बहुत उत्साह था और भविष्य के लिए बहुत आशाएं थीं। यह सब प्रतिनिधि गम्भीर थे और इनके मन में उच्च उद्देश्यों की पूर्ति की लगन थी।

कई वर्षों तक इन योद्धाओ का यही काम रहा कि काग्रस मच पर खड़े होकर, भारतीय जनता का स्वतत्रता का सदेश पहुचाना। बहुत लाग ऐसे भी थे, जो इनकी निदा करत व खिल्ली उडाते। परन्तु इन स्वतत्रता के सनिका का अपने लक्ष्य की न्यायशीलता पर पूर्ण निष्ठा थी। उन्हे विश्वास था कि अन्त म हम जरूर विजयी हाग। उनका विश्वास सत्य हुआ। उनम स बहुना को वह उज्ज्वल दिन भी देखने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ जब काग्रेस आन्दालन एक भारी शक्ति बन गया था।

सम्मलन की कारवाई शुरु हुई। मि० ह्यूम ने अध्यक्ष के पद के लिए श्री डब्ल्यू० सी० बनर्जी का नाम प्रस्तुत किया। सवश्री सुब्रमण्य अय्यर और तलग न इस प्रस्ताव का समर्थन किया। श्री बनर्जी ने इस सम्मान के लिए सभा को धन्यवाद दिया। उन दिनो लम्बे चौडे भाषण दने की प्रथा नही पडी थी। अपन भाषण मे उन्होंने बताया कि आन्दोलन क ध्येय क्या होगे। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि सम्मलन म भाग लेन वाले व्यक्तिया को उस अथ मे भारतीय लोगो का प्रतिनिधि नही कहा जा सकता, जिस अथ मे इग्लड के हाउस आफ कामस के सदस्यो का उनके निर्वाचन क्षेत्रो का प्रतिनिधि माना जाता है परन्तु य व्यक्ति भारतीय जनता की आशाओ और भावनाओ से परिचित है और उनकी आवश्यकताओ को समझत हैं। इसलिए इन व्यक्तियो का भारतीय जनता के नेतत्व के अधिकार का दावा न्यायसगत है।

सम्मेलन के सामने नौ प्रस्ताव रखे गए। इन प्रस्तावो म मुख्य मार्गे य थी कि भारतीय प्रशासन की कायप्रणाली की जाच पडताल करने के लिए एक राजकीय आयोग बठाया जाए, इण्डिया कौंसिल का समाप्त किया जाए, लेजिस्लेटिव कौंसिलो का विस्तार किया जाए, सेना के खर्चे को कम कर दिया जाए तथा सिविल सर्विस प्रतियोगिता की परीक्षा इग्लड के साथ साथ भारत में भी हो।

फिरोजशाह ने इस ऐतिहासिक सम्मेलन की कारवाई म बढचढकर भाग लिया। प्रथम प्रस्ताव के अनुमोदन का भार फिरोजशाह का ही सौपा गया।

यह प्रस्ताव श्री अय्यर ने प्रस्तुत किया था। सरकार ने वचन दिया था कि वह भारतीय प्रशासन की स्थिति मे जाच पडताल करने के लिए एक कमेटी बठाएगी। इस प्रस्ताव म सरकार के इस निणय का स्वागत किया गया था। इस प्रस्ताव क विषय म बोलते हुए फिरोजशाह न सुझाव दिया कि सरकार से माग की जाए कि जाच-पडताल के हतु जो कमटी बनाई जाए उसमे भारतीयो का भी रखा जाए तथा कमेटी जाच पडताल और गवाही लेने का काम भारत म ही करे। फिरोजशाह का विचार था कि सरकार यदि यह माग पूरी नही करती तो इससे अच्छा है जाच पडताल हो ही नही।

थोडी थोडी अवधि के बाद, ससदीय कमेटिया और राजकीय आयोग बठाने के लिए सरकार मानने वाली नही थी। और एसी सस्था का होना तो सवथा अहितकर था, जिसके सदस्य मुख्यत अग्रेज ही हो और अपने ही बारे म निणय करने वाले हो। जिन निष्कर्षों पर ऐसी सस्था पहुचती है देखने मे भले ही वे युक्तिपूण लगते हो परन्तु वास्तव म अप्रामाणिक ही होते हैं। इन्हीं गलत निष्कर्षों को सरकार कम से कम 20 वर्षों के लिए निर्देशक सिद्धात मान लेता, इससे जो हानि होती उसका अनुमान लगाना बहुत ही कठिन है।

इस प्रकार 1885 मे काग्रेस का प्रारम्भ हुआ। इस पर बहुत से सकट आए परन्तु यह सस्था उनसे बच निकलन म सफल हुई। लोगो की राजनतिक चेतना जगाने म इसे इतनी सफलता मिली जिसकी इस सस्था के सस्थापको न कल्पना भी नही की थी।

10

1888 का म्युनिसिपल विधान

1887-1888

कई वर्षों तक नगर सुधार की योजनाओ पर विचार विमर्श होता रहा। कई योजनाए बनी और रद्द कर दी गई। सरकार न एक ऐसे बिल का मसौदा भी नगरपालिका की राय जानने के लिए भेजा जिसम यह व्यवस्था थी कि नगरपालिका के चलाने का काम कार्यकारिणी कमेटियो को सौंप दिया जाए। नगरपालिका ने यह कहकर बिल के मसौदे को रद्द कर दिया कि ऐसा करना पुरान गलत सिद्धातो की ओर लौटना होगा। इसके पश्चात 16 जुलाई 1887 का सरकार न लेजिस्लेटिव कौंसिल मे एक ऐसा बिल प्रस्तुत किया जिसकी बहुत देर स प्रतीक्षा थी। यह बिल मि० नलर, मि० चार्ल्स ओलिवाट (जिनको बाद म सरकार न 'सर' की उपाधि दी) क सयुक्त परिश्रम का फल था। मि० नेलर सरकार के विधिक अनुस्मारक और मि० ओलिवाट म्युनिसिपल कमिश्नर थे। नगरपालिका ने 1883 म इन्ह इग्लड की म्युनिसिपल शासन प्रणाली का अध्ययन करने के लिए भेजा था।

जब बिल प्रस्तुत किया गया उस समय लेजिस्लेटिव कौंसिल के भारतीय सदस्यो म स केवल श्री तलग ही ऐसे थ जिनमे असाधारण योग्यता थी। परिषद मे जनप्रतिनिधित्व बढाने के लिए और नागरिक विषयो से सम्बधित अनुभव और जानकारी लान के लिए सरकार ने फिरोजशाह को कौंसिल का अतिरिक्त सदस्य नियुक्त कर दिया। लार्ड रीये की सरकार का यह काम बहुत समझदारी का था। सब ओर से सरकार के इस काय की प्रशसा हुई और फिरोजशाह की नियुक्ति का स्वागत किया गया।

जिस रूप म बिल को प्रस्तुत किया गया उससे पता लगता था कि बिल बहुत अ श तक अवनतिशाल है। इसमे यह व्यवस्था थी कि नगरपालिका के अधिकार कम करके कमिश्नर के अधिकार बढ़ा दिए जाए। सरकार का कई मामलों मे नगरपालिका के अधिकार क्षेत्र म भी अतिक्रमण और हस्तक्षेप के अधिकार की व्यवस्था की गई थी।

सरकार ने बिल को राय के लिए प्रवर समिति के पास भेज दिया। इस समिति के सदस्य थे सर मक्सवेल मलविल जो हाईकोर्ट के विख्यात यायाधीश रह चुके थे तथा कायकारी परिषद के सदस्य थे। एडवोकेट जनरल मि० मकफरसन और सवश्री तलग फिरोजशाह तथा काजी शहाबुद्दीन थ।

फिरोजशाह न बहुत योग्यता, धय और कायकुशलता से काम लिया तथा कमेटी को बिल म सशोधन करने के लिए सहमत कर लिया। प्रारम्भ म बिल म यह व्यवस्था थी कि म्युनिसिपल विधान को कार्यान्वित करने का अधिकार कमिश्नर को होगा। इसका अथ होता कि नागरिक स्वशासन सम्बधी मामलो म कमिश्नर ही मुख्य अधिकारी माना जाता तथा उसकी ही तूती बोलती। श्री तलग ने बिल के प्रथम वाचन के समय ही बिल की इस धारा पर आपत्ति प्रकट की तथा इस धारा को बिल का मूल सिद्धात बताया। इस धारा को बदलना अत्यावश्यक था। सशोधन के परिणामस्वरूप बिल की सबसे आपत्तिजनक धारा निकाल दी गई। विधान की सुस्पष्ट धाराओ के अ तगत नागरिक प्रशासन का अधिकार नगरपालिका को सौंपा गया।

फिरोजशाह ने बिल के सशोधन के काय म महत्वपूण भाग लिया। दिनशावाचा न, जो फिरोजशाह के आजीवन मित्र रहे, फिरोजशाह के इस काय को जो श्रद्धाजलि भेंट की वह किसी प्रकार भी अत्युक्ति नही कही जा सकेगी। श्री वाचा न कहा

'फिरोजशाह ने बिल की आपत्तिजनक धारा का हटाने के लिए एक के बाद दूसरा सशाधन प्रस्ताव प्रवर समिति के सामने प्रस्तुत किया। प्रस्तावो का समथन उन्होंने बहुत ही धय, दढता और तकपूण ढग से किया। बिल की अन्तिम रूपरेखा

श्री नेलर के प्रारम्भिक मसौदे से बिलकुल नही मिलती थी। फिरोजशाह के अथक परिश्रम, समय और मानसिक शक्ति के व्यय का जनसाधारण का कुछ भी आभास नही था। प्रवर समिति के सब सदस्यो म से बिल मे सशोधन कराने का सबसे अधिक श्रेय श्री फिरोजशाह को ही है।"

प्रवर समिति के विचार विमश के फलस्वरूप बिल का बहुत कुछ उदार बना दिया गया परन्तु उसकी कई धाराए अब भी आपत्तिजनक थी। नगरपालिका ने इन धाराओ का बडा विरोध किया और सरकार को इनके विरोध मे एक नया आवेदन पत्र भेजा। इस आवदन पत्र मे लिखा था

"नगरपालिका बहुत चिंतित है कि कही इस विषय मे उसके दृष्टिकोण की उपक्षा न की जाए। मुख्य प्रश्न यह उठता है कि नगरपालिका को नागरिक प्रशासन का अधिकार है या नही। यदि अधिकार है तो उसे इस उत्तरदायित्व को निभाने क लिए पूण शक्ति मिलनी चाहिए जिससे वह नगर की भलाई के लिए जो काय उचित समझे कर सके। यदि यह अधिकार नही है तो नगरपालिका के अस्तित्व की काइ आवश्यक्ता नही दिखाई दती।'

उस समय नगरपालिका मे जनता के प्रतिनिधि वे व्यक्ति थे जो अपनी योग्यता और चारित्रिक शक्ति के लिए प्रसिद्ध थे। नगरपालिका के युरोपियन सदस्य भी निर्भीक तथा स्वतन्त्र विचारो के थे जो नगर की सेवा असाधारण उत्साह व निष्ठा के साथ करते थे। इन बाता को देखते हुए चकित नही होना चाहिए कि नगरपालिका ने आवेदन पत्र मे इतनी निर्भीक भाषा का प्रयोग किया था।

कौंसिल मे बिल पर हाने वाली बहस लम्बी और प्राय रुचिकर भी थी। बहस का विस्तार से वणन करना आवश्यक नही है। प्रवर समिति स लौटने के पश्चात भी बिल म जो आपत्तिजनक बातें चिपटी हुई थी, फिरोजशाह और तलग क परिश्रम से हटा दी गई। सर फ्रैंक फोब्स एडम न, जा कि एक उदारचित्त व्यक्ति और उस समय क धनाढय व्यापारी थे, फिरोजशाह और तलग की इस काय म बहुत सहायता की।

फिरोजशाह और उनके साथियो की सफलता का एक और भी कारण था,

वह यह कि लार्ड रीये ने, जो स्वतन्त्रता के सच्चे प्रेमी थे और सरकारी प्रवक्ता थे, जिन पर बिल को कौंसिल से पास करने का उत्तरदायित्व था, न्यायसगत रवैया अपनाया । श्री तैलग ने कहा था —

"आदर्श म्युनिसिपल प्रशासन वह है जहा कार्यकारिणी शक्तिशाली हो तथा नगरपालिका के प्रति उत्तरदायी हो, जहा नगरपालिका प्रबुद्ध हो तथा हर समय कार्यकारिणी पर आस रखे।" 1888 का विधान अधिकतर इस आदर्श का पूर्ति करता था । जिन लोगो के परिश्रम से यह कानून बना यदि उन्ह अपने इस काम पर गर्व हो तो यह स्वाभाविक ही है ।

फिरोजशाह ने बिल के तीसरे वाचन के समय बोलते हुए कहा कि यह बिल बहुत व्यावहारिक व कार्य सम्पन्न है । उन्होने यह भी कहा कि बिल ठोस सिद्धान्तो पर आधारित है । यह ऐसे सिद्धान्त हैं जो लम्बे अनुभव की कसौटी पर परख जा चुके है । नगरपालिका ही सर्वोच्च प्रशासन निकाय है । कमिश्नर को इसकी आज्ञा के कार्यान्वयन से बढकर अधिकार देना भारी भूल थी । दूसरी ओर कमिश्नर के पद को बिलकुल ही समाप्त कर देना और उसके स्थान पर कार्यकारिणी समितिया या परिषद का स्थापन करना अथवा कमिश्नर की नियुक्ति के ढग मे परिवर्तन लाना भी गलत होता । इस कारण 1888 के विधान ने बीच का रास्ता अपनाया ।

बिल पर अन्तिम भाषण देते हुए फिरोजशाह ने कहा कि इसकी सफलता का आधार केवल इसकी विशिष्टता ही नहीं है । यदि इस बिल को कार्यान्वित करने म ऐसी ही लोकहित भावना सूझबूझ और उत्साह दिखाया गया जिसका प्रदर्शन अभी तक नगरपालिका के काय मे हुआ है तो इसमे सन्देह नहीं कि यह बिल जरूर सफल होगा । उन्हें पूर्ण विश्वास था कि यदि बिल को इसी भावना से लागू किया जायगा 'तो बम्बई नगरपालिका की ख्याति म और अधिक वृद्धि होगा ।"

फिरोजशाह की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई । बम्बई नगरपालिका ने जिस ढग से काय चलाया उससे यह नगर राजनीतिक गाम्भीर्य तथा कार्यक्षमता के लिए और भी प्रसिद्ध हो गया । यह फिरोजशाह के जीवन भर के परिश्रम का परिणाम

था। लेजिस्लेटिव कौंसिल म ड्यूक आफ कनाट ने 1888 के विधान की रूपरेखा बनाने मे फिरोजशाह का हाथ बटाया था। उन्हे फिरोजशाह की मित्रता पर गर्व था। उनका कहना था

"बम्बई की नगरपालिका के विधान पर फिरोजशाह की प्रतिभा की अमिट छाप है।"

एक पीढी से भी अधिक समय तक फिरोजशाह का व्यक्तित्व देश की राजनीति पर छाया रहा। जब वह गए तब अपने पीछे एक ऐसा शून्य छोड गए जिसकी पूर्ति शायद कभी न हो सके, परन्तु उनके कार्य अमर हैं। नागरिक प्रशासन म उन्होंने जो उत्साह फूका वह आने वाली पीढियो को भी प्रेरित करता रहेगा। बम्बई नगरपालिका ने देश की नगरपालिकाओ मे जो गौरवान्वित स्थान बना लिया है वह वैसा ही कायम रहेगा।

11

सफल वकील के रूप मे

1887—1889

जिन गुणों के कारण फिरोजशाह सफल नेता हुए उन्ही गुणो ने इन्हें अपने व्यवसाय की अगली पंक्ति मे खड़ा कर दिया। जनता चाहती है कि उसका नेता निर्भीक स्वावलम्बी और तर्ककुशल हो। इसी प्रकार मुवक्किल लोग भी अपने वकील मे यही गुण चाहते हैं। श्री फिरोजशाह वादविवाद मे बहुत कुशल थे इसलिए लोग इनका भाषण सुनने के लिए लालायित रहते। उसी प्रकार मुवक्किल लोग भी अपने मुकदमे की पैरवी के लिए इनके पीछे भागते।

सारे गुजरात और काठियावाड से लोग आकर मुकदमो की पैरवी के लिए इनसे अनुरोध करते। अपनी भड़कीली वेशभूषा (इनके कोट का कालर मखमल का होता), बातचीत के परिष्कृत ढंग और प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण यह अपने समकालीन वकीलो से पृथक हो नजर आते। कहीं आते-जाते तो बड़े ठाटबाट से, साथ म नौकर चाकर और इतना साज सामान होता कि देखने वाले दंग रह जाते।

फिरोजशाह बहुत नाजुक मिजाज थे, परन्तु उनकी बात हर तरह से पूरी करनी पडती थी। इस कारण आम जनता ही नहीं बल्कि उनके मुवक्किल भी उनसे डरते थे। य सारी शक्तियां मिलकर दूसरे पक्ष के वकीलो और गवाहों को ही न जज को भी दबा देतीं। आश्चर्य नहीं कि जसी सफलता उन्होंने राजनैतिक क्षेत्र मे पाई, वसी ही वकालत म भी पाई।

1887 मे इनके पास दो ऐसे मुकदमे आए जिनकी ओर लोगो का ध्यान बहुत आकर्षित हुआ। एक था चुगी का मुकदमा। इस मुकदमे में एदुलजी मुचेरजी पर जो कि भडोच के एक नागरिक थे धोखादेही का आरोप लगाया गया था। जारडीन और फिरोजशाह ने अभियुक्त की पैरवी की। मुकदमा काफी समय तक चला और अभियुक्त बरी हो गया।

मुकदमे के फसले पर लोगो ने बहुत खुशी मनाई। कुछ लोग तो चाहते थे कि फिरोजशाह और जारडीन की गाडी को स्वय खीचकर अदालत से उस जगह तक ले जाए जहा ये लोग ठहरे हुए थे। परन्तु फिरोजशाह इससे सहमत नहीं हुए। उनके प्रशसको को उन्हे मान से बिदायगी देकर ही सतोष करना पडा।

दूसरा प्रसिद्ध मुकदमा, जिससे फिरोजशाह को प्रसिद्धि मिली 'खम्बात जाच का मुकदमा कहलाता है। यह मुकदमा 1887 के आरम्भ मे हुआ। इसमे करा के कलक्टर मि० विलसन के विरुद्ध अभियोग था कि उन्होने खम्भात के दीवान की पुत्री के साथ अश्लील व्यवहार करने की चेष्टा की है।

मुकदमे के दोनो पक्षो मे बडे बडे लोग थे। आरोप भी इस प्रकार का था, जिससे यह मुकदमा बहुत ही महत्वपूर्ण हो गया। लोगो ने असाधारण रूप से इसमे दिलचस्पी ली। लार्ड रीय की सरकार एक बात के लिए विख्यात थी। यदि कोई सरकारी अधिकारी नतिक पतन का दोषी होता तो सरकार उसके विरुद्ध कार्यवाही करने से न चूकती, चाहे वह कितना ही उच्च व प्रभावशाली अफसर क्यो न हो। सरकार ने मुकदमा सुनने के लिए एक आयोग नियुक्त किया जिसमे दो उच्च सरकारी अधिकारी थे।

मि० इनवेरेरिटी अभियुक्त की ओर से वकील थे। इनकी गिनती भारतीय अदालतो मे प्रक्टिस करने वाले चोटी के वकीलो मे की जाती थी। प्रतिवादी की वकालत श्री फिरोजशाह ने की। यह जाच पडताल अहमदाबाद मे हुई। वहा ठहरने के लिए अच्छा प्रबन्ध नही था इसलिए फिरोजशाह और उनके सहायक वकील को रेलवे स्टेशन के जलपानगृह मे ठहराया गया।

यह जांच पड़ताल काफी समय तक चलती रही। अन्त में जांच-पड़ताल आयोग ने मि० विल्सन को दोषी ठहराया। सरकार ने जांच पड़ताल में की गई गवाहियों व दूसरे प्रमाणों का अध्ययन करने के बाद आयोग के निर्णय को मान लिया। मि० विल्सन ने इस निर्णय के विरुद्ध भारत मंत्री को अपील की और साथ ही पद से त्यागपत्र भी दे दिया, जैसा कि स्वाभाविक था। मि० विल्सन के चरित्र पर लीपापोती करके उन्हें बरी कर दिया गया।

जब से इल्बर्ट बिल के विरुद्ध संघर्ष चला था तब से देश के राजनीतिक जीवन में एक नई चेतना आ गई थी। बम्बई के मुख्य नेताओं तैयब जी, तैलंग और फिरोजशाह की प्रतिभाशाली त्रिमूर्ति प्रशासन की हर शाखा में सुधार करने के लिए निरंतर आन्दोलन चलाए थी। हर प्रकार के समामंच से और विभिन्न संस्थाओं द्वारा ये नेता जनहित के लिए परिश्रम कर रहे थे। इन्हें एक ऐसे समाचार पत्र की आवश्यकता थी जो इनके सिद्धांतों का प्रचार करे और इनकी नीति का समर्थन करे। ऐसा समाचारपत्र न होने के कारण इन्हें अपने कार्य में बहुत असुविधा थी। टाइम्स ऑफ इंडिया' का दृष्टिकोण तो स्पष्ट रूप से भारत विरोधी था। 'बाम्बे गजट' की नीति भारतीय आकांक्षाओं के प्रति साधारणतः सहानुभूतिपूर्ण था, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता था कि यह समाचारपत्र जनसाधारण के दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करता था।

कलकत्ता, मद्रास और छोटे छोटे शहरों में भी एक या दो राष्ट्रवादी समाचारपत्र थे। बम्बई को भारत का प्रथम नगर कहा जाता था परन्तु यहां लोकहित भावना और उत्साह का इतना अभाव था कि एक भी अंग्रेजी दैनिक ऐसा नहीं था जो भारतीय दृष्टिकोण का प्रतिनिधि हो।

फिरोजशाह और एक प्रसिद्ध पत्रकार जहांगीर मर्जबान ने इस अभाव की पूर्ति तथा बम्बई नगर के माथे से कलंक का टीका हटाने की ठान ली। उन दिनों 'एडवोकेट ऑफ इंडिया' पत्र डाक्टर ब्लाने के नियंत्रण में था। यह पत्र किसी तरह अपनी सांसें गिन रहा था। डाक्टर ब्लाने बम्बई के एक विख्यात नागरिक थे और

इ होंने बम्बई नगर की बहुत सेवा की। इनकी सेवाओ के प्रति आभारी होकर बम्बई के नागरिको ने इनके जीवन मे ही इनकी मूर्ति की स्थापना की थी।

1888 मे फिरोजशाह और मजबान ने डा० ब्लाने से यह पत्र खरीद लिया और इसमे नया जीवन डालने का निश्चय किया। पत्र की मलकियत मे परिवतन की घोषणा करते समय उन्होने एक लेख द्वारा जनता को बताया कि इस पत्र की नीति क्या होगी। लोगो का विचार है कि यह लेख फिरोजशाह ने ही लिखा था। फिरोजशाह ने लिखा कि समाचारपत्र के सचालको का विचार लम्बे-चौडे वायदे करने का नही है। व केवल यह कह सकते हैं कि उनकी चेष्टा यह होगी कि पत्र मे सावजनिक समस्याओ पर वादविवाद इस प्रकार से हो जिससे देश की भलाई हो। लेख मे उ होने लिखा

"बम्बई प्रदेश मे एक ऐसे दनिक पत्र की आवश्यकता है जो पाठको के आगे भारतीय स्थिति और भारतीय तथ्य रखे तथा भारत सम्बन्धी विषयो पर जिसका दृष्टिकोण भारतीय ही हो। हम विश्वास है कि यह काम सयम और साथ ही स्वत त्रता के साथ किया जा सकता है।

"व्यक्तियो की परख और घटनाओ के मूल्याकन के माग मे दो गड्ढे आते है। पहला है हर सरकारी या गैरसरकारी अंग्रेज को, जब तक कि वह स्वय को इसके विपरीत सिद्ध न कर दे, सामान्यत अत्याचारी समझ बैठना। दूसरा है सभी भारतीयो को, विशेषत पढे लिखे लोगो को, जब तक वे अपनी निर्दोषिता प्रमाणित न कर दें, राजद्रोही और विश्वासघाती समझ लेना। हमे आशा है कि हम इन गड्ढो मे नही गिरेंगे। हम यह मानने के लिए कदापि तयार नही हैं कि बाइबिल मे लिखे हुए दस पापो मे से आधो पर भारतीयो का एकाधिकार है और शेष पर अ ग्रेजों का।

जुलाई 1889 मे फिरोजशाह को बम्बई विश्वविद्यालय का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। इन्होने विश्वविद्यालय मे शीघ्र ही प्रभावशाली स्थान बना लिया। विश्वविद्यालय से इनका सम्पक 1868 से चला आ रहा था जब सर एलेक्जेंडर ग्राट की सिफारिश से इन्हें विश्वविद्यालय की सीनेट का सदस्य बनाया गया था, परन्तु कई वर्षों तक इन्होंने सीनेट के विचार विमश मे कोई विशेष रुचि नही ली।

1886 मे, जब वह राजनैतिक जीवन मे काफी ख्याति पा चुके थे, उन्होंने विश्वविद्यालय के कार्यक्षेत्र मे बढ़-चढ़कर भाग लेना आरम्भ कर दिया। उस समय उन्होंने कई महत्वपूर्ण विषयों पर हुए वादविवाद म भाग लिया। फ्रांसीसी भाषा को विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम मे द्वितीय भाषा के रूप म शामिल करने का प्रस्ताव ऐसा ही एक विषय था। इस प्रस्ताव को मि० जस्टिस जारडीन ने प्रस्तुत किया तथा फिरोजशाह ने इसका जोरदार समर्थन किया। उन्होंने कहा कि वह मानते हैं कि अंग्रेजी साहित्य उत्कृष्ट है, परन्तु इस कारण यह उचित नही कि दूसरी ओर आधुनिक भाषाओं को न पढ़ाया जाए। सीनेट को यह तर्क जँच गया। यद्यपि इस प्रस्ताव का विरोध भी काफी हुआ जो पुराने पक्षपात पर आधारित था, फिर भी सीनेट ने बहुमत से इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

शिक्षा के कार्य म फिरोजशाह की रुचि और भी कई प्रकार से थी। अप्रैल 1885 म बम्बई विश्वविद्यालय की ग्रेजुएटस एसोसियेशन का बम्बई म गठन हुआ। कई वर्षों तक इस संस्था ने बहुत सरगर्मी दिखाई। शिक्षा सम्बन्धित विषयों पर इस संस्था ने सरकार और विश्वविद्यालय को कई आवेदन पत्र भेजे और बहुत उपयोगी कार्य किया। अन्य कार्यों के अतिरिक्त इस संस्था ने सीनेट म विश्वविद्यालय के ग्रेजुएटों को प्रतिनिधित्व का अधिकार दिलाया। इस संस्था से फिरोजशाह का सम्बन्ध अन्त तक रहा। संस्था के बनने के दो वर्ष पश्चात फिरोजशाह को इसका अध्यक्ष चुना गया और कई वर्षों तक वह इस पद पर आसीन रहे।

12

कांग्रेस नेता के रूप मे

1889-1890

कांग्रेस को मुट्ठी भर नेताओ ने अपने परिश्रम से जन्म दिया था और इसे स्थापित हुए चार वर्ष हो चुके थे। यह चार वर्ष का समय बहुत ही घटनापूर्ण था। जिस घडी इस सस्था का जन्म हुआ वह एक शुभ घडी थी। जैसे जैसे इसकी सरगर्मी बढी वैसे ही अंग्रेजो के मन मे, चाहे वे सरकारी अफसर थे या साधारण व्यक्ति, सदेह व भय उत्पन्न होना आरम्भ हो गया। इन लोगो ने कांग्रेस को जी भर कर गाली देना और इसकी खिल्ली उडाना आरम्भ कर दिया। इस उच्छखलता का परिणाम उलटा ही निकला।

आदोलन चारो दिशाओ मे बढने लगा। देश के हर भाग मे इस सस्था की शक्ति व प्रभाव बढा। 1885 मे बम्बई के कांग्रेस अधिवेशन मे केवल 72 प्रतिनिधि आए थे। दूसरे वर्ष 412 प्रतिनिधि आए और इसके पश्चात यह सख्या बढती ही गई।

1888 मे इलाहाबाद मे कांग्रेस का अधिवेशन बहुत कटुता और कलह के वातावरण मे हुआ। इसका कारण था अंग्रेजी नौकरशाही और उसके समर्थक समाचारपत्रों द्वारा किया जाने वाला झूठ और निन्दा का प्रचार।

स्वागत समिति को अधिवेशन के लिए स्थान का प्रबन्ध करने मे बहुत कठिनाई हुई। एक देशभक्त रईस ने एक बडी कोठी जिसमे एक बडा मैदान भी था,

समिति को सौंप कर इस कठिनाई का निवारण किया। कांग्रेस के कार्यों में बाधा डालने की कुचेष्टाओं का यही पर अंत नहीं हुआ। कांग्रेस विरोधी प्रचार बड़े जोर से चल रहा था। इस प्रचार के पीछे कुछ मनपढ़ राजा-महाराजा और ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें अंग्रेज सरकार ने उपाधियां दे रखी थी। ये लोग शिक्षा में अपने अभाव को ऊटपटांग की बकवास और निरर्थक गला फाड़ फाड़कर पूरा करना चाहते थे।

कांग्रेस की निन्दा में सरकार भी पीछे नहीं रही। भारत के वाइसराय लार्ड डफरिन एक प्रकार से कांग्रेस आंदोलन के जन्मदाता कहे जा सकते हैं। 30 दिसम्बर 1888 को मत एंड्रूज के उपलक्ष में दिए गए भोज में उन्होंने कांग्रेस आंदोलन के आदर्शों और इसकी कार्यप्रणाली की निन्दा ऐसी भाषा में की जो बहुधा उद्धृत की जाती है। उन्होंने कहा

"कुछ बुद्धिमान वफादार देशभक्त और सदाशय महानुभाव भारत में संसदीय प्रणाली की स्थापना करना चाहते हैं तथा प्रशासन में लोकतन्त्रवादी सिद्धांत लाना चाहते हैं। ये व्यक्ति समझते हैं कि वह उन्नति की ओर कदम बढ़ा रहे हैं परन्तु मैं समझता हूं कि वह अंधेरे में छलांग लगाने जा रहे हैं क्योंकि इंग्लैंड में भी संसदीय प्रणाली का स्थापन धीरे धीरे और कई शताब्दियों के आत्मनियन्त्रण के पश्चात हुआ है।" वाइसराय ने यह भी कहा कि शिक्षित वर्ग की संख्या आटे में नमक के बराबर है तथा प्रतिनिधि संस्थाओं के लिए मांग सर्वथा अवधानिक है।

कांग्रेस के चौथे अधिवेशन के समय यह वातावरण था। अधिवेशन 1888 के बड़े दिनों में इलाहाबाद में हुआ। अधिवेशन के अध्यक्ष जार्ज यूल थे जो कलकत्ता के अंग्रेज समुदाय के एक विख्यात सदस्य थे। कांग्रेस विरोधी कहा करते थे कि कांग्रेस के नेता निराश नागरिक हैं अथवा कैंची की तरह जीभ चलाने वाले वकील हैं परन्तु यूल एक सम्पन्न व्यापारी थे। इनको किसी से शिकवा-शिकायत नहीं थी न ही इनके मन में अंग्रेज जाति के प्रति पक्षपात की भावना ही थी।

अंग्रेज समुदाय और सरकार के विरोध के कारण कांग्रेस अधिवेशन की कार्रवाई में असाधारण रूप से गर्मी आई। राजा शिवप्रसाद, सर आकलैंड कालविन

के पिट्ठू थे। किसी तरह यह प्रतिनिधि निर्वाचित होने मे सफल हो गए। अधिवेशन मे आने का इनका एक ही अभिप्राय था वह यह कि किसी तरह काग्रेस मे भीतर से फूट डाली जाए। ऐसा प्रतीत होता था कि इन लोगो की उपस्थिति के कारण अधिवेशन मे भारी गडबडी मच जाएगी परन्तु काग्रेस के उत्साही नेताओ ने इनके प्रयत्नो को निष्फल बना दिया। कुछ लोगो ने राजा साहब को पकड लिया और घर छोडकर ही दम लिया। अध्यक्ष महोदय का भाषण बहुत प्रभावशाली और गौरव-पूर्ण था जिसमे भविष्य के प्रति उत्साह व विश्वास की भावना प्रकट की गई थी। इस भाषण मे अध्यक्ष ने कहा

"जिस आदोलन से हम सम्बन्धित हैं ऐसे आदोलनो का कई उतार-चढाव देखने पडते हैं। आरम्भ म एसे आदोलनो को उपहास का सामना करना पडता है। ज्यो ज्यो आदोलन आगे बढता है त्यो त्यो उसके विरोधी उपहास को छोड निन्दा करने और गाली देने पर उतर आते है। जब आन्दोलन थोडा और बढता है तब निन्दा समाप्त हो जाती है और आन्दोलन की थोडी-बहुत मागें मान ली जाती हैं, परन्तु चेतावनी अवश्य ही दी जाती है कि आन्दोलन के नेता अधेरे म छलाग लगा रहे हैं। अतिम मजिल मे आन्दोलन की लगभग सब मुख्य मागे मान ली जाती हैं। आन्दोलन के विरोधी फिर आश्चय प्रकट करते है कि यह मागें पहले ही क्यो न मान ली गइ।"

फिरोजशाह अधिवेशन म दो या तीन विषयो पर ही बोले। कुछ प्रशसात्मक वाक्यो मे उन्होने अध्यक्ष की नियुक्ति का प्रस्ताव पेश किया। लोकसेवा, सरकारी नौकरी के प्रश्न पर उन्होने बहुत अध्ययन किया था तथा इस समस्या स सम्बन्धित प्रस्ताव पर उनका भाषण बहुत ही प्रभावशाली था।

स्टेच्यूटरी सविस की असफलता पर किसी को सन्देह नही रहा था। लोकसेवा आयोग की नियुक्ति हुई और जनवरी 1888 म फिरोजशाह को इस आयोग के सामने गवाही दन के लिए आमत्रित किया गया। उन्होने आयोग के सामन लिखित और मौखिक गवाही दी तथा दृढ और निश्चित रवया अपनाया।

इस विषय पर प्रस्ताव अडले नौरटन ने प्रस्तुत किया। नौरटन

कांग्रेस के सबसे पुराने और उत्साही समर्थकों मे से थे। अपनी योग्यता और स्वतत्र विचारो के कारण वह बहुत विख्यात थे। आयोग द्वारा भारतीय लोगो का रियायतें देने के सुझाव की प्रस्ताव म प्रशसा की गई थी परन्तु साथ ही बड़े जोरदार ढग से यह कहा गया था कि देश के लोगो के साथ पूरा न्याय तो तब ही होगा, जब सिविल सर्विस की परीक्षा भारत और इग्लैंड म साथ साथ हो।

फिरोजशाह ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और कहा कि भारतीय लोगों का सरकारी नौकरी मे अधिक भाग देने की माग आर्थिक और राजनैतिक आवश्यकताओ पर आधारित है। दादाभाई नौरोजी ने कई बार कहा था कि भारतीय लोगो का सरकारी नौकरी म अधिक भाग देने का मुख्य लाभ यह होगा कि सरकारी खर्च मे किफायत होगी। फिरोजशाह का मत था कि किफायत स कहीं अधिक राजनीतिक तकाजा महत्वपूर्ण है।

भारतीयो को प्रशासन से अधिक मात्रा म सम्बन्धित कराने की राजनैतिक और आर्थिक आवश्यकता को कितनी मान्यता दी गई इसका पता उन आकडो से लगा जो लार्ड कर्जन की सरकार न 15 वर्षों पश्चात इकट्ठे किए। इन आकडो से पता चला कि 1 000 रु० स अधिक वेतन पाने वाले 1,370 सरकारी कर्मचारियो म से केवल 92 ही भारतीय थे। कई वर्ष पूर्व, 1883 मे नौकरी के मामले मे भारतीयो और अग्रेजो मे समानता के सिद्धात की घोषणा की गई थी। सरकार ने यह आश्वासन दिया था कि भारत मे कोई शासक जाति नहीं होगी परन्तु इस आश्वासन का कोई फल नही निकला।

कांग्रेस के इलाहाबाद अधिवेशन के सामने विचार-विमर्श का दूसरा रोचक विषय था हथियार कानून। कांग्रेस एक वर्ष पूर्व अपने अधिवेशन मे इस विषय पर एक प्रस्ताव पास कर चुकी थी। अब अधिवेशन के सामने जो प्रस्ताव था वह पहले प्रस्ताव का समर्थन करता था। प्रस्ताव म माग की गई थी कि हथियार कानून म सशोधन किया जाए जिससे सभी व्यक्ति हथियार रख सकें और उन्हे हथियार लेकर चलने की अनुमति हो। सरकार या उसके द्वारा अधिकृत प्रादेशिक अफसर किसी व्यक्ति, समुदाय या किसी जाति को, इस अधिकार से वचित न कर

पाएगे। इसके लिए उन्हे कारण बताने पडेंगे, जिनका अभिलेख किया जाए और यथा समय प्रकाशित भी किया जाए।

इस प्रस्ताव का कुछ विरोध हुआ। कुछ लोगो का विचार था, जिनमे श्री तलग भी थे, कि प्रस्ताव केवल भावुकता पर आधारित है। उन्हे भय था कि हथियार रखने की खुली छूट देने से दुष्परिणाम निकलेंगे।

श्री तलग के भाषण के पश्चात श्री फिरोजशाह बोलने के लिए उठे। उनका कहना था कि भावुकता का पहलू चाहे हो भी परन्तु इस प्रस्ताव के समर्थन के लिए एक ठोस कारण है वह यह कि "आप समस्त राष्ट्र को नपुसक नही बना सकते न ही आपको ऐसा करना चाहिए, यदि एक बार भारतीय जनता का पुसत्वहरण हो गया तो उसमे दोबारा पुरुषत्व और बल लौटाने के लिए बहुत समय लगेगा।"

फिरोजशाह ने अपने विचारो का निदर्शन कराने के लिए एक दृष्टान्त भी दिया जिससे लोग बहुत ही प्रभावित हुए। फिरोजशाह के भाषण के पश्चात इस विषय पर और भी बहस हुई जिसमे सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने भी भाग लिया तथा इस प्रस्ताव का समर्थन किया। इसके पश्चात मतदान हुआ और यह प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हो गया।

अब हम इलाहाबाद अधिवेशन का वृत्तात छोडकर इसके एक वर्ष बाद होने वाले बम्बई अधिवेशन के बारे मे बतलाएगे।

बम्बई अधिवेशन मे बडे बडे नेताओ ने भाग लिया जिनका भाषण सुनने के लिए जनता उमड पडी। इस अधिवेशन मे इतने अधिक लोग आए जितने पहले कभी नही आए थे। अधिवेशन मे भाग लेने वाले नेताओ के व्यक्तित्व और उन लोगो का भाषण सुनने के लिए एकत्रित विशाल जनसमूह के कारण यह अधिवेशन स्मरणीय है। कांग्रेस के थोडे ही अधिवेशन ऐसे होंगे जिनमे इतने प्रभावशाली व्यक्ति इकट्ठे हुए हो। सर विलियम वेडरबर्न इस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गए। वह नौकरी से रिटायर हुए अभी दो वर्ष ही हुए थे। इनका स्वभाव ऐसा था कि जो भी व्यक्ति इनके सम्पर्क मे आता, वह इन्हे स्नेह व आदर की दृष्टि से देखता।

कांग्रेस के इस ऐतिहासिक अधिवेशन मे भाग लेने वाले प्रतिनिधियो का स्वागत करने का सम्मान फिरोजशाह को मिला। उन्हे यह सम्मान देना उपयुक्त ही था क्योकि उन दिनो वह पश्चिम भारत के सर्वश्रेष्ठ नेताओ मे गिने जाते थे। बम्बई के नागरिकों के विचार मे तो उनसे उपयुक्त इस कार्य के लिए दूसरा कोई व्यक्ति नही था। अधिवेशन मे अधिक सख्या में लोगों के आने का मुख्य कारण था चार्ल्स ब्रडला की उपस्थिति। यह लोकतन्त्र सग्राम के महान सैनिक माने जाते थे। इनके तूफानी जीवन से लोग बहुत प्रभावित हुए। इग्लैंड मे जब यह भाषण देते तो हजारो लोग मन्त्रमुग्ध होकर इनका भाषण सुनते। इग्लैण्ड मे कुछ भारत हितैषियों ने इन्हे भारतीय समस्याओ मे रुचि लेने के लिए सहमत कर लिया। यह भारत की समस्याओ पर कई सभाओ मे बोले। लेजिस्लेटिव कौंसिल के सुधार के लिए इन्होंने एक बिल का मसौदा बनाया जिसे वह इग्लण्ड की पार्लियामेंट में प्रस्तुत करना चाहते थे। इस बिल का मसौदा एक प्रकार से कांग्रेस के लेजिस्लेटिव कौंसिल सम्बन्धी दृष्टिकोण का ही कानूनी रूप था।

अधिवेशन मे बहुत जमाव था। यह अधिवेशन 1889 मे हो रहा था। सयोगवश इसमे भाग लेने वाले प्रतिनिधियो की सख्या भी 1889 थी। इस अधिवेशन मे फिरोजशाह को अपनी वक्तृत्व शक्ति के उपयोग का अच्छा अवसर मिला और उन्होंने इस अवसर का का पूरा पूरा लाभ उठाया। अपने विरोधियो को हतप्रभ करने के लिए, उनके पास प्राय हसी मजाक, ठठठा और व्यग्य के शस्त्र होते। अपने स्वागत के भाषण मे उन्होने इन शस्त्रो का भी उपयोग किया तथा अपने विरोधियो को खदेड दिया। लोगो ने यह भाषण बहुत पसन्द किया। सारी सभा हस रही थी और उत्तेजित होकर करतल ध्वनि कर रही थी, जिससे यह पता चलता था कि वे सब फिरोजशाह के विचारो से सहमत हैं।

अधिवेशन मे भाग लेने वाले लोगो की इच्छा थी कि कांग्रेस का अभिभाषण पढने का सम्मान श्री ब्रडला को दिया जाए। लोगो की इस इच्छा को देखते हुए अधिवेशन के दूसरे दिन इस विषय पर एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया जिसे स्वीकार कर लिया गया। फिरोजशाह सभापति की कुर्सी पर जा बैठे और उन्होने कुछ चुने हुए वाक्यो मे श्री ब्रैडला से अभिभाषण देने का निवेदन किया।

थी व डला बीमारी से उठे थ और अभी निवल थ परन्तु जब उ होने भाषण देना शुरू किया तो उनके शब्द श्रोताओ के हृदय मे सीधे उतर गए। उ होने अपने भाषण म आ दोलन के रास्ते म आने वाली अडचनो का जिक्र किया तथा धय के साथ अपना कर्तव्य निभाने के लिए प्रोत्साहित किया। उ होने कहा कि महत्वपूर्ण सुधार लाने म समय अवश्य ही लगता है। वह बोले —

'वे वीर पुरुष जो सबसे पहले इन सुधारो का बीडा उठाते हैं उन्हे देशद्रोही कहा जाता है। कभी कभी उन्हे अपराधियो की भाति जल भी जाना पडता है। परन्तु दमन से विचारो का अत नही हो सकता। कारावास से सच्चाइ कुचली नहीं जा सकती। यह सम्भव है कि सत्य के रास्ते म एक क्षण या एक घडी के लिए कारावास रुकावट डाल दे, परन्तु जब सत्य प्रवल होता है, तब उसे क्रियाशील बना देती है। जब वह जल की कोठरी से निकलता है तो उसमे ससार को हिला देने की शक्ति आ जाती है।"

स्वागत समिति की अध्यक्षता से काग्रेस अध्यक्षता म परिवतन स्वाभाविक ही है और जहा तक फिरोजशाह का सम्बन्ध है, यह परिवतन अतिशीघ्र ही हुआ। बम्बई अधिवेशन के अगले वर्ष ही फिरोजशाह को कलकत्ता मे होने वाले अधिवेशन का अध्यक्ष बनाया गया। राष्ट्रीय आ दोलन का कोई कायकर्ता इससे अधिक सम्मान की इच्छा नहीं कर सकता था। फिरोजशाह के चुनाव पर सब लोगो ने सतोप प्रकट किया। इस सम्बन्ध म समाचारपत्रो म जो लेख इत्यादि छपे उनमे फिरोजशाह की प्रशसा की गई थी।

कलकत्ता मे फिरोजशाह का स्वागत वसा ही हुआ जैसा अक्सर काग्रेस के नए अध्यक्ष का होता था। काग्रेस राष्ट्रीय आन्दोलन का मूलरूप थी और यह आन्दोलन शीघ्रता से जोर पकड रहा था। कलकत्ता अधिवेशन म दशको की सख्या बहुत अधिक थी। अधिवेशन के पहले दिन लगभग आठ हजार व्यक्ति आए थ।

फिरोजशाह के भाषण म उनके व्यक्तित्व की झलक मिलती थी। इस भाषण म उन्होंने कोई मौलिक तथ्य बताने की चेष्टा नही की और न ही कल्पना की ऊची

उडानें ही भरी। इस भाषण मे उन्होने गाम्भीय, व्यावहारिकता तथा जोरदार ढग से काग्रेस के लक्ष्यो को प्रस्तुत किया। इस भाषण की शली म यदि थोडा बहुत परिवतन किया जाता तो इसकी तुलना इगलैंड के हाउस ऑव कामन्स म किसी विरोधी दल के सदस्य द्वारा दिए गए भाषण से हो सकती थी।

अधिवेशन ने उन्ह अध्यक्ष निर्वाचित करके जो सम्मान दिया था, उसके लिए फिरोजशाह ने सभा को धन्यवाद दिया। फिर उन्होने पारसियो को राष्ट्रीय आन्दोलन से पृथक करने की कुचेष्टा के बारे म जिक्र किया। जिन शब्दों में फिरोजशाह ने राष्ट्रवाद पर अपनी निष्ठा की घोषणा की, उनको प्राय उद्धृत किया जाता है। उनके शब्द थ —

"एक मुसलमान या हिन्दू सच्चा मुसलमान या हिन्दू तब है जब वह अपनी जन्मभूमि से प्रेम करता हो, जिसके सभी देशवासियो के साथ भाईचारे के सम्बन्ध हो, जो भारत की सभी जातियो के बीच भ्रातृभावना का महत्व समझता हो और यह भी जानता हो कि भारत की सब जातियो का लक्ष्य एक ही है और इस लक्ष्य की पूर्ति एक साझी राष्ट्रीय सरकार द्वारा ही हो सकती है। यह सब बात पारसियो पर भी लागू होती हैं।"

काग्रेस पर यह आरोप लगाया जाता था कि वह पूणत विकसित प्रतिनिधि सस्थाओ की माग कर रही है जबकि इगलैंड मे इन सस्थाओ के विकास मे कई शताब्दियाँ लगी हैं। फिरोजशाह ने इस आरोप का खण्डन किया। उन्होने कहा कि काग्रेस मूर्खों का सगठन नही है। काग्रेस ने भी इतिहास से शिक्षा ग्रहण की है। काग्रेस समझती है कि प्रतिनिधि सस्थाओ के विकास म समय लगाना अनिवाय है और यह कि आगे बढने म सतकता से काम लेना है। इतिहास की शिक्षा की अवज्ञा करने का आरोप काग्रेस के विरोधियो पर लगाया जा सकता है। ये लोग चाहते हैं कि जब तक जनता पूणत शिक्षित न हो जाए, तथा उसे अपने अधिकारो का ज्ञान न हो जाए, तब तक काग्रेस हाथ पर हाथ रखकर बठी रहे और लोकहित रक्षा का काय एक उदार नौकरशाही के हाथो मे छोड दे। फिरोजशाह ने कहा कि काग्रेस के विरोधियों का विचार है कि यह नौकरशाही देश के हितों की रक्षा का काय भारत के अपने सपूतों

की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह कर सकती है। फिरोजशाह के विचार मे यह दावा उपहासजनक ही था। उन्होने कहा —

"यह सच है कि हमारे देश के लोग शिक्षा मे पिछडे हुए हैं, इनमे जातीय और धार्मिक मतभेद भी हैं पढे लिखे लोगो की सख्या नही के बराबर है, परन्तु फिर भी हमने यह सिद्ध कर दिया है कि यह मुट्ठी भर लोग अपने देशवासियो की आकाक्षाओ और आवश्यकताओ को समझते हैं और इनका प्रतिनिधित्व करते है। य लोग उन गिने चुने गोरे जिला अधिकारियो से कही अधिक कुशल सिद्ध होंगे जिन्ह देशी भाषा का ज्ञान उतना भी नही जितना कि फ्रास के वरा को अग्रेजी भाषा का होता है।

ऐसे ही कुछ और विषयो पर बोलने के बाद फिरोजशाह ने उस समस्या पर बोलना शुरू किया जिसके कारण लोगो के मन म उत्तेजना व्याप्त थी। यह समस्या थी लेजिस्लेटिव कौंसिल मे सुधार। की फिरोजशाह ने काग्रेस के सुझावो पर आधारित ब्रडला के बिल के बारे मे बोलना शुरू किया। उन्होने कहा कि इस बिल के दो महत्वपूण परिणाम निकले हैं। एक तो यह कि इसके कारण सर विलियम हटर और सर रिचड गाथ जसे व्यक्तियो ने इस विषय पर अपने विचार प्रकट किए। इस आलोचना से यह पता चलता था कि बिल मे कसे सशोधन होने चाहिए। दूसरा परिणाम यह हुआ कि भारत के नेताओ को, जो घोर चिन्ता म उलझे हुए थे और जिनमे चिंता के जाल से निकलने की क्षमता नही थी, ब्रडला के बिल ने उन्ह चिन्ता के जाल से मुक्त किया।

लाड क्रास ने इगलैंड की पार्लियामेंट के हाउस ऑव लॉर्ड्स मे एक बिल प्रस्तुत किया। इस बिल मे भारतीय समस्याओ के निवारण के लिए कोई तात्कालिक कार्यवाही करने की व्यवस्था नही थी, अत इससे भारतीय जनता सन्तुष्ट नही हो सकती थी। इगलैंड के प्रधान मन्त्री और भारत मन्त्री के मन म एक गलत धारणा चढ चुकी थी। वे भारतीयो की तुलना चाल्स डिकन्स लिखित उपन्यास के नायक आलिवर ट्विस्ट से करन थ, जिसन अपना बाल्यकाल अनाथालय म व्यतीत किया और भूखा रहने के कारण हमेशा कुछ खाने को मागा करता था। इनका विचार

था कि आरम्भ मे भारतीयो की जितनी कम मागें मानी जाए, उतना ही अच्छा है। लार्ड क्रास के बिल के अनुसार लेजिस्लेटिव कौंसिलो को वजट के बारे म बहस करने और उसके ऊपर प्रश्न पूछने का अधिकार तो दे दिया गया, कौंसिल के सदस्यो की सख्या भी बढा दी गई। परन्तु इन्हे कारगर बनाने के लिए यह आवश्यक था कि इनके सदस्यो की नियुक्ति निर्वाचन के सिद्धान्त पर हो। लार्ड क्रास के बिल म ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी।

लार्ड सालिसबरी ने बिल की इस त्रुटि को सही बताते हुए यह तक दिया कि पूर्व के लोग लोकतन्त्रवाद को समझते ही नही तथा पूर्वी देशो मे प्रतिनिधि शासन की कोई परम्परा नहीं है। फिरोजशाह ने अपने भाषण के कुछ अश इगलण्ड के प्रधान मन्त्री के इस कोरे सामान्यीकरण के खण्डन म लगाए और उनके तक को झूठा प्रमाणित किया। उन्होने हैरिसन और ऐंस्टे जैसे प्रसिद्ध वकील एव विद्वानो का प्रमाण देते हुए कहा कि भारत म किसी न किसी रूप मे स्वशासन प्राचीन काल से चला आ रहा है।

लार्ड सालिसबरी की उक्ति का मुहतोड जवाब इगलण्ड के समाचारपत्र मानचेस्टर गार्डियन ने दिया। इस पत्र की नीति उदारवादी थी और आज भी वसा ही है। यह पत्र इस सिद्धान्त का समथन करता था कि उदारवाद को केवल इगलैंड तक ही सीमित नही रहना चाहिए, बल्कि दुनिया के हर हिस्से मे इस सिद्धान्त का विस्तार होना चाहिए। इस पत्र ने लिखा —

"लार्ड सालिसबरी फरमाते हैं कि निर्वाचन के सिद्धान्त को पूर्व के लोग नही समझते। इसके उत्तर म इतना ही कहना काफी होगा कि अंग्रेजी राज्य भी भारतीयो की कल्पना का परिणाम नहीं है। फिर भी यह उन पर लागू है। इस शासन को पूर्वी सिद्धान्तो के बूते पर नही, बल्कि पाश्चात्य सिद्धान्तो द्वारा सशक्त और चिरस्थाई बनाया जा सकता है। निर्वाचन का सिद्धान्त हमारे राजनतिक उदारवाद का मुख्य चिन्ह है।"

फिरोजशाह ने अपने भाषण म कई और ऐसे विषयो की चर्चा की जिन पर वादविवाद चल रहा था। सारे भाषण का वृत्तान्त देना नीरस होगा परन्तु, इससे

घिसेपिट तक का जो उत्तर उन्होने दिया वह' उल्लेखनीय है। कांग्रेस के विरोधियो ने चारा ओर स तोते की तरह रट लगा रखी थी कि कांग्रेस की आवाज जनता की आवाज नही है तथा कांग्रेस भारतीय समाज के थाडे से अश का ही प्रतिनिधित्व करती है। इसके उत्तर म फिरोजशाह न कहा —

"यदि भारतीय जनता मे सरकार के सामने स्पष्ट तौर पर अपनी ठास राजनतिक मांगें रखन की क्षमता होती तो कांग्रेस सलाहकार परिषदो की बात न करती। एसी स्थिति मे हम सीधे प्रतिनिधि सस्थाओ की माग करते। भारतीय जनता अभी तक मूक है। इसलिए हरएक पढे-लिखे और राजनतिक चेतना रखने वाले भारतीय का यह कतव्य हो जाता है कि वह जनता के दुखो और आवश्यकताओ को न केवल स्वय समझे, परन्तु दूसरो को समझान की चेष्टा करे। उसका कत य है कि वह जनता के दुखो के निवारण के लिए और उनकी माग मनवाने के लिए सुझाव दे। इतिहास हम सिखाता है कि प्रगति का यह नियम हर युग मे और सब देशो मे, विशेषत इगलण्ड मे चलता आया है।"

यह भाषण बहुत ही ओजस्वी और वाग्मितापूण था। देश पर इसका बहुत गहरा प्रभाव पडा।

13

सरकार और नगरपालिका

1890 1892

अप्रल 1890 मे लाड रीये ने अपना पद छोड दिया। वह एक कतव्यपरायण गवनर थे। उन्होंने बम्बई प्रदेश के शासन म असाधारण योग्यता दिखाई थी। बम्बई को नागरिक स्वशासन का एक आदश विधान दिलाने मे उनका विशेष हाथ था। इन्ही विशेषताओ के कारण वह अपने पीछे एक चिरस्थाई स्मारक छोड गए। उन्होन प्रशासन मे प्रगति की प्रेरणा भरी तथा तकनीकी शिक्षा का भी विस्तार किया। बम्बई के नागरिको ने उन्ह ऐसी भावभीनी विदाई दी जिसके वह वास्तव म अधिकारी थे।

सरकार और नगरपालिका के परस्पर सम्बन्ध सन्तोषजनक तो कभी थे ही नही, परन्तु लाड रीये के जाने के बाद इनमे वैमनस्य और भी अधिक बढ गया। एक ओर नौकरशाही थी जिसकी परम्परा थी दूसरे के दष्टिकोण को घृणा की दष्टि से देखना। यह नौकरशाही नगरपालिका पर अपनी तानाशाही लादना चाहती थी। दूसरी ओर नगरपालिका थी जिसका नेतृत्व फिरोजशाह जसे निर्भीक नेता कर रहे थे। सरकार यदि नगरपालिका पर हुक्म चलाती तो वह इसका विरोध करती तथा नगरपालिका अपनी स्वाधीनता और स्वाभिमान पर आच न आने देती। उन दिनो सरकार व नगरपालिका के बीच नीति के कुछ प्रश्नो पर समझौता नही हो पाया था। इसलिए इनके बीच झगडे के अवसर प्राय आते ही रहते।

उस समय नगरपालिका मे फिरोजशाह का प्रभुत्व जमा हुआ था। यदि किसी प्रस्ताव का फिरोजशाह विरोध करते तो उसके पास होने की आशा कम ही होती। कमिश्नर लोग भी फिरोजशाह से लोहा लेने मे घबराते थे। जब तक फिरोजशाह उनकी नीति और योजनाओ का समथन नही कर देते, तब तक वे चिन्तित ही रहते। एक कमिश्नर ने लिखा कि यदि कमिश्नर लोग किसी सुझाव पर फिरोजशाह को मनवा न पाते तो सम्भावना यही होती कि नगरपालिका भी उस सुझाव को रद्द कर देती। फिरोजशाह का स्थान इतना ऊचा था कि किसी भी व्यक्ति को उस पर गव हो सकता था। परन्तु साधारण व्यक्ति को यह स्थान जोखिम मे भी डाल सकता था। फिरोजशाह के इस प्रभाव का आधार था उनकी योग्यता, चरित्रबल और नागरिक-काय के प्रति लगन। उनकी महानता थी कि उन्होने अपने प्रभाव का कभी भी दुरुपयोग नही किया।

फिरोजशाह के चरित्र मे एक और उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि यद्यपि अधिकारियो से उनकी लडाई हमेशा चलती रही, फिर भी उन्होंने न्याय और औचित्य को नही छोडा। नगरपालिका की आलोचना करते समय वह कटुता नही आने देते थे तथा उनकी आलोचना निमू ल भी नही होती थी। यदि वह देखते कि कायकारिणी पर व्यथ ही आरोप लगाए जा रहे हैं तो वह उसकी हिमायत से भी न हिचकते थे।

1892 मे दादाभाई नौरोजी इगलैण्ड की पालियामे ट के सदस्य निर्वाचित हुए। आधुनिक भारत के राजनतिक इतिहास म यह एक उल्लेखनीय घटना थी। लाड सालिसबरी ने दादाभाई नौरोजी का नाम छोटा सा 'काला आदमी' रखा हुआ था। अपने निरन्तर परिश्रम और साहस से इस काले आदमी' ने सेंट स्टीफन का दुग विजय कर लिया। सैंट्रल फि सबरी के मतदाता इनकी अनथक ऊजस्विता और दृढनिश्चयता के आगे नतमस्तक हो गए। उन्होने नौरोजी को पालियामेंट के लिए अपना प्रतिनिधि चुन लिया। नौरोजी का यह चुनाव इन मतदाताओ का सम्मान-सूचक था। नौरोजी की सफलता के समाचार से प्रसन्नता की लहर दौड गई और देश के हर भाग मे लोगो ने अपने देशवासी की सफलता पर गव और सन्तोष प्रकट किया।

23 जुलाई 1892 को बम्बई प्रेसीडेन्सी एसोसियेशन ने एक सार्वजनिक सभा बुलाई। सर दिनशा पटिट सभापति चुने गए। बम्बई के गवर्नर लार्ड हैरिस ने तार द्वारा बधाई का सन्देश भेजा जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा के प्रबन्धकों का हाल सौंपते हुए मुझे बहुत हर्ष है।

सभा में मुख्य प्रस्ताव फिरोजशाह ने प्रस्तुत किया। फिरोजशाह ने दादाभाई नौरोजी के मत की तुलना इंगलैंड में होने वाले सार्वभौमिक युद्ध से की। उन्होंने कहा कि इस संग्राम का आरम्भ 1885 में एसोसियेशन के कमरे में हुआ था, जब एसोसिएशन ने यह निर्णय किया था कि युद्ध विपक्षी के घर में घुसकर लड़ा जाए। किन्तु फिरोजशाह ने जोरदार सुझाव यह दिया था कि भारत सम्बन्धी प्रश्नों को इंगलैंड के राजनीतिक दलों के परस्पर विवाद का विषय बनाया जाए। उस समय इस सुझाव का समर्थन कम लोगों ने ही किया था परन्तु बाद में दादाभाई और दूसरे नेताओं ने इस सुझाव को स्वीकार कर लिया। फिरोजशाह का दावा था कि दादाभाई नौरोजी की विजय का श्रेय उनके उपरोक्त सुझाव को ही जाता है। फिरोजशाह का दृढ़ निश्चय था कि जब तक इंगलैंड के राजनैतिक दल भारतीय प्रश्नों में रुचि नहीं लेते और इन प्रश्नों पर सोच विचार नहीं करते तब तक कल्याण नहीं हो सकता। इस सार्वजनिक सभा में फिरोजशाह ने अपने इस निश्चय की पुनरावृत्ति की।

इन प्रारम्भिक वाक्यों के पश्चात फिरोजशाह ने दादाभाई नौरोजी को अति सुन्दर श्रद्धांजलि भेंट की। उन्होंने दादाभाई नौरोजी को 'राजऋषि' की उपाधि दी जिनके चरणों में बैठने का सौभाग्य उन्हें और दूसरे नवयुवकों को प्राप्त हुआ था। ये नवयुवक ऐसे थे जिन्होंने आगे चलकर बहुत ख्याति प्राप्त की। इसके पश्चात फिरोजशाह ने समाचारपत्र 'पायनियर' और ऐसे ही दूसरे आलोचकों की टीका टिप्पणी की चर्चा की, जिनके मन में भारतीय लोगों के प्रति उदार भावना कभी पैदा नहीं हुई थी। दादाभाई नौरोजी का चुनाव इन लोगों की दृष्टि में कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं थी और न ही उन्हें इस विजय में कोई रूमानी बात ही दिखाई देती थी। फिरोजशाह ने कहा

'अंग्रेजी इतिहास की कुछ महान परम्पराओं से हम भी प्रेरित हुए हैं। जब

हम उस दृश्य की कल्पना करते है कि हमारा एक देशवासी उस भव्य कक्ष मे पदार्पण करेगा जिसमे बर्क, फाक्स और शैरिडन जसे महान व्यक्तियो ने अपनी अमर वाकपटुता द्वारा इस देश के प्रशासन को न्यायसगत बनाने की याचना की, जहा मकाले ने धुधली पर तु भविष्यसूचक दष्टि द्वारा मताधिकार की उपावेला देखी, जहा ब्राइट, फासेट और ब्र डला ने करोडा मूक विदेशियो के लिए याय की आवाज उठाई, तब हम भावना के वेग मे बह जाते हैं। यह भावुकता हमारे लिए क्षम्य है।"

अक्टूबर 1892 म फिरोजशाह बम्बई प्रादेशिक सम्मेलन के अध्यक्ष चुन गए। यह सभा एक मास पश्चात पूना मे होनी थी। फिरोजशाह ने उदघाटन भाषण मे कई विषया की चर्चा की। इस भाषण म उनके तक बहुत ही तीक्ष्ण थे तथा व्यग्यो की भी कमी नही थी। भाषण के अधिकाश भाग म फिरोजशाह ने ली वारनर के उन दावा का खण्डन किया जो कुछ समय पहले उन्होने अपने परिभाषण म किए थे। ली-वारनर भारतवासियो की आकाक्षाओ के कट्टर शत्रु थे। उस समय लोगो के सामन मुख्य प्रश्न था लेजिस्लेटिव कौंसिलो के विस्तार तथा उनम सुधार के सम्बन्ध म दिए हुए सुझाव। मि० ली वारनर ने अपने भाषण मे जो रट लगाई वह नौकरशाही बहुत देर से लगाती चली आ रही थी और इस नारेबाजी से लोग भलीभाति परिचित थे। उनका कहना था कि राजनतिक सुधार पर सामाजिक और चारित्रिक सुधार को प्राथमिकता मिलनी चाहिए प्रतिनिधि सस्थाओ के लिए भारतीय लोगो की माग प्राकृतिक सिद्धान्तो और इतिहास की शिक्षा के विरुद्ध है। उन्होने कहा —

"यदि किसी प्रतिनिधि सस्था मे ऐसे लोग जिन्ह भारत म नीची जातिया कहा जाता है, अनुपस्थित हैं, तो वह सस्था प्रतिनिधि सस्था कहलाने की अधिकारी नही है। मैं इस विषय पर अधिक विस्तार से वर्णन करना अनावश्यक समझता हू, परन्तु मेरा विचार है, जिससे आप लोग भी सहमत होंगे, कि प्रतिनिधि प्रणाली को लागू करने के लिए केवल शर्तें ही पर्याप्त नही, इसके लिए समानता, भाईचारे और त्याग की आवश्यकता है। राष्ट्र के प्रतिनिधित्व के लिए सस्था की बात तब उठती है जबकि राष्ट्र का अस्तित्व पहले से हो।'

फिरोजशाह ने अग्रेजी इतिहास के प्रकाश मे ली वारनर के तर्कों का परीक्षण किया। उन्होने बिना किसी कठिनाई के सिद्ध कर दिया कि इतिहास ली वारनर के तर्कों का समर्थन नही करता और उनके भाषण मे कही हुई बातें अतिशयोक्तिपूर्ण एव सामान्यीकृत हैं। फिरोजशाह ने कहा —

'यह स्पष्ट है कि अग्रेजी इतिहास की शिक्षा ली-वारनर के अटकलो के प्रतिकूल है। यदि ली वारनर के कहने के अनुसार इगलैंडवासी भी यह सोचते कि पार्लियामेंट से पहले निम्नश्रेणियो का पूर्ण प्रतिनिधित्व आवश्यक है तो शायद किसी ने इगलैंड के पार्लियामेंट का नाम भी न सुना होता।

''यह कहना कि जब तक हर जाति समुदाय को पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व न मिल पाए, तब तक कोई प्रतिनिधि सस्था होनी ही नहीं चाहिए, अवैज्ञानिक और अनैतिहासिक बात है। इतिहास और प्रकृति का विधान हम बताते हैं कि आरम्भ मे सम्पूर्णता और पर्याप्तता की आशा करना बेकार है। अल्पमतो के अधिकारों से सम्बधित कठिनाइयो को बढावा देना ठीक नही। सम्पूर्णता का कार्य समय के भरोसे छोड देना चाहिए।''

14

बम्बई कौंसिल मे

1893

1893 मे एक के बाद एक कई घटनाए हुई । पुलिस के ऊपर खर्च, नगर-पालिका के एग्जीक्युटिव इंजीनियर की नियुक्ति और बम्बई विश्वविद्यालय को सरकार की ओर से दी जाने वाली सहायता मे कमी इत्यादि विषयो की ओर जनता का ध्यान गया तथा इन पर वादविवाद चला । परन्तु अधिक समय तक जनता की रुचि इन समस्याओ मे नही रही । इससे ये घटनाए उल्लेखनीय नही है ।

फिरोजशाह ने नागरिक जीवन मे प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया था । उनमे असाधारण गुण थे । नगर के हितो की रक्षा के लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था । यही कारण था कि बम्बई के राजनीतिक जीवन मे उनका स्थान तानाशाह जैसा था । सार्वजनिक समस्याओ पर विचार विमर्श के लिए उनके पास बम्बई प्रात के हर भाग से लोग आते । एक बार तो बम्बई के गवर्नर लार्ड हैरिस भी म्युनिस्पल कमिश्नर की नियुक्ति के सम्बन्ध मे उनकी सलाह लेने आए । फिरोज-शाह के लिए वास्तव मे यह सौभाग्य की बात थी ।

फिरोजशाह का प्रभाव देश मे अभी उतना व्यापक नहीं हुआ था, जितना उसका कुछ वर्षों पश्चात होना नियत था । देश की जनता तक अपना सदेश पहुचाने का भारत के नेताओ के पास एक ही मार्ग था और वह था कांग्रेस का सभामच ।

1892 में लेजिस्लेटिव कौंसिलों के विस्तार से इन लोगों का मार्ग खुल गया था। यह सच है कि ये कौंसिलें अब भी पूर्णत लोक निर्वाचन के सिद्धान्त पर आधारित नहीं थीं तथा जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यों के अधिकार बहुत ही सीमित थे, परन्तु कौंसिलों के संविधान में सुधार के कारण जनता के प्रतिनिधियों को कम से कम सरकार की आलोचना करने का अवसर तो मिला। इस आलोचना का फल यह हुआ कि जनसाधारण ने भी कौंसिलों की कार्रवाई में रुचि लेना आरम्भ कर दिया।

फिरोजशाह देश के सर्वप्रथम व्यक्ति थे जिन्हें बम्बई लेजिस्लेटिव कौंसिल का गैरसरकारी सदस्य निर्वाचित किया गया। बम्बई नगरपालिका को परिषद में एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिल गया था। 4 मई, 1893 को नगरपालिका की एक सभा हुई जिसमें फिरोजशाह सर्वसम्मति से नगरपालिका के प्रतिनिधि चुने गए।

बम्बई लेजिस्लेटिव कौंसिल की पहली सभा 27 जुलाई, 1893 को पूना में हुई, वहां हर वर्ष बम्बई सरकार लगभग चार मास तक एकान्तवास करती थी। जनता के प्रतिनिधियों को संसदभवन में प्रवेश करने का सौभाग्य बड़ी कठिनाई से मिल पाया था। इसलिए ये गिने चुने लोग इस अवसर का उपयोग करने के लिए लालायित थे।

रानाडे, नौरोजी, एन० वाडिया और चमनलाल सीतलवाद इत्यादि नेता फिरोजशाह के सहकारी थे। सरकार ने बजट पर बहस और उसके ऊपर प्रश्न करने का अधिकार पहली बार स्वीकृत किया था। इन लोगों ने इस अधिकार का बड़ी स्वाधीनता और क्षमता से उपयोग किया। इससे भारतीयों के प्रतिनिधित्व का विरोध करने वालों के मुंह बंद हो गए।

फिरोजशाह की आलोचना कुछ ही विषयों तक सीमित थी। ये विषय थे विश्वविद्यालय को सरकार की ओर से अनुदान, व्यय में पुलिस पर नगरपालिका का भाग, एवं अदालती और प्रशासकीय कार्रवाई को पृथक करने पर खर्च। इन विषयों में उन्हें बहुत रुचि थी और वह बड़े उत्साह से इन विषयों पर बोले।

न्यायपालिका और कार्यपालिका के कामो के पृथक्करण पर खर्च के सम्बन्ध में बोलते हुए फिरोजशाह ने कहा कि इस सुधार के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा खर्च नहीं है। वास्तव में कार्यपालिका या प्रशासन अधिकारी इस सुधार का विरोध कर रहे है, क्योंकि उनका विचार है कि इस पृथक्करण से उनके अधिकार और महत्व कम हो जाएगे। भारतीय नौकरशाही की ओर से इस सुधार के कड़े विरोध का कारण यही है, यद्यपि इगलैंड और भारत के उच्चतम अधिकारी इस सुधार के सिद्धान्त को मान चुके हैं।

कौंसिल की बैठक से कुछ दिन पहले सिविल सर्विस की प्रतियोगिता का प्रश्न फिर उठा। दादाभाई नौरोजी के देशप्रेम व उत्साह से कुछ अग्रेज भी प्रभावित हुए थे। नौरोजी और इन भारत हितैषी अग्रेजो का अनथक परिश्रम सफल हुआ। ब्रिटिश पार्लियामेंट ने, जो ब्रिटिश राज्य की उच्चतम विधान परिषद है, भारतीयो की यह न्यायसगत माग स्वीकार कर ली कि इन्हे देश के शासन मे पर्याप्त मात्रा मे भाग मिलना चाहिए।

2 जून, 1893 को इगलैंड की पार्लियामेंट मे एक प्रस्ताव पास हुआ जिसमे कहा गया था "सिविल सर्विस की प्रतियोगिता की सभी परीक्षाए जो अभी तक केवल इगलैंड मे ही होती रही हैं, भारत मे भी हो। ये परीक्षाए बिलकुल एक-सी हो और जो उम्मीदवार इन परीक्षाओ मे उत्तीर्ण हो। उनकी सूची योग्यता के आधार पर बनाई जाए।"

सौभाग्यवश प्रस्ताव को प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी डा० हर्बर्ट पाल की थी। वह बहुत ही सुबोध तथा युक्तिपूर्ण ढग से बोले। उस समय सभा मे सदस्यो की सख्या कम ही थी। डा० पाल के भाषण के परिणामस्वरूप उन सदस्यो ने भी, जिनकी इस विषय मे रुचि न थी, तथा जो प्रस्ताव के अनुमोदन मे आनाकानी करते थे, इस प्रस्ताव का समर्थन किया और यह थोड़े से बहुमत से स्वीकार कर लिया गया। प्रस्ताव पर मतदान हुआ तो इसके पक्ष मे ८4 सदस्यो ने और इसके विरोध मे 76 सदस्यो ने वोट दिए। लगभग सारे मन्त्रिमडल ने इस प्रस्ताव का विरोध किया था।

दादाभाई नौरोजी इस प्रस्ताव पर हुए मतदान के मतगणक थे। एक इतिहासकार का कहना है कि सारी सभा इनके हर्ष का दश्य रही थी। यह हर्ष स्वाभाविक ही था क्योंकि उस दिन इनका कई वर्षों का अनथक परिश्रम सफल हुआ था।

देशभर मे इस प्रस्ताव की सफलता पर हर्ष प्रकट किया गया। यह सफलता उस सिद्धान्त की विजय थी जिसके लिए लगभग एक पीढी से भारत का शिक्षित वग सघष करता आ रहा था। परन्तु धीरे-धीरे कई प्रभावशाली व्यक्तियों ने इस प्रस्ताव का विरोध करना आरम्भ कर दिया। ये लोग समझते थे कि यथाथ मे बहुमत इस प्रस्ताव के पक्ष मे नही है बल्कि इसकी सफलता का कारण बिना किसी चेतावनी के प्रस्ताव पर एकाएक मतदान होना है। इन लोगो की यह धारणा थी कि इस प्रस्ताव का अभिप्राय प्रशासन पर अग्रेजो के एकाधिकार की जड काटना है। बिल के समथन म और अफसरशाही द्वारा किए जाने वाले बिल विरोधी आन्दोलन के जवाब म देश भर म सभाए हुई।

इस सघष मे बम्बई भी देश के दूसरे नगरो से पीछे नही रहा। 15 जुलाई को फ्रामजी कावसजी इन्स्टीट्यूट में भारी सभा हुई। इसके सभापति फिरोजशाह मेहता थे। इस सभा के मुख्य वक्ता गोखले, चवेरीलाल याज्ञिक तथा दूसरे विख्यात व्यक्ति थे। सिविल सर्विस प्रतियोगिता के अतिरिक्त भारत की ओर से इगलैड को दिए जाने वाले सेना के खर्चे के प्रश्न पर भी वादविवाद हुआ।

सभापति ने श्रोताओ से कहा कि आपको याद रखना चाहिए अनुभव यह सिद्ध करता है कि जब कभी भारत की आशाओ की पूर्ति होगी वह केवल इगलैड की पार्लियामेंट द्वारा ही होगी। इस सस्था के कारण ही भारत को उन्नति के अवसर मिलेंगे, इस काम मे देर भले ही हो जाए। इगलैड के भारतमत्री अल किम्बर्ले यह घोषणा करने के लिए बाधित हो गए कि सिविल प्रतियोगिता के प्रश्न पर, जिसका कुछ लोगो के विचार म गला घोट दिया गया था और सेवा आयोग द्वारा अन्त्येष्टि भी कर दी गई थी फिर स पूर्णत विचार होना चाहिए। फिरोजशाह के विचार म यह घोषणा आशा की प्रतीक थी।

उपयुक्त प्रश्न पर थोडी सी टीका टिप्पणी करके फिरोजशाह ने इगलैंड को भारत की ओर से दिए जाने वाले सेना के व्यय की बात की। इस विषय पर उनका भाषण प्रभावशाली था। सभापति प्राय दूसरे वक्ताओ का बिलकुल ध्यान नही रखते। उनकी यही चेष्टा होती है कि सारा समय स्वय ही हडप ले, परन्तु फिरोजशाह ने ऐसा नही किया। उनका भाषण बहुत ही सक्षिप्त था। उनका कहना था कि भारत के प्रति इगलैंड का रवया इगलैंड के माथे पर एक कलक है।

लार्ड नार्थब्रुक को इस प्रश्न पर भारत के दृष्टिकोण से सहानुभूति थी। उन्होने इगलड की पार्लियामट के हाउस ऑव लाड स मे तथ्या और आकडो द्वारा सिद्ध किया कि पिछले चौदह वर्षो म भारत को विवश होकर इगलैंड को चालीस लाख पौंड देने पडे, जबकि इस खच से उसका कोई सम्बन्ध न था। ये आकडे अपनी कहानी आप कहते थे। इसलिए फिरोजशाह ने इस सम्बन्ध म और अधिक बोलना उचित नही समझा। अग्रेज राजनीतिज्ञ भारत म इगलैंड के महान लक्ष्य की चिकनी चुपडी बातें करते, परन्तु यथाथ मे व कमीनेपन से ही काम लेत थे। इस लज्जाजनक कहानी को सविस्तार कहना आवश्यक नही।

15

इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे कार्य

1894—1895

1891 के कानून के अ तगत, लेजिस्लेटिव कौंसिला का विस्तार होने पर फिरोजशाह राजनीति के बडे अखाडे म उतरे। कांग्रेस तथा विश्वविद्यालय और नगरपालिका मे अपनी सरगर्मियो के कारण फिरोजशाह पहले ही भारत के चोटी के नेताओ मे गिने जाते थे, परन्तु इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल की सदस्यता से उनकी प्राजल बुद्धि और वादविवाद की असाधारण क्षमता को उपयुक्त क्षेत्र मिला तथा लोगो को उनके व्यक्तित्व की शक्ति का पूर्ण आभास हुआ।

अक्टूबर 1893 मे इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल के चुनाव हुए। इडियन कौंसिल्स ऐक्ट के अधीन बनाई गई नियमावली के अन्तगत प्रत्येक प्रादेशिक लजिस्लेटिव कौंसिल के गर सरकारी सदस्यो को वाइसराय की कौंसिल मे एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार था। फिरोजशाह सवसम्मति से प्रतिनिधि चुन गए।

इस चुनाव के कुछ समय बाद ही उन्हें एक और सम्मान प्राप्त हुआ। अप्रासगिक होते हुए भी इस विषय का हम सक्षिप्त म उल्लेख करेंगे। 1894 का नए साल की उपाधि सूची म उनका भी नाम था तथा इ ह सी० आई० ई० का उपाधि दी गई। (यह उपाधि अधिक महत्त्वपूर्ण नही थी, पर तु लोग इससे सन्तुष्ट हुए तथा चारो ओर से इसके कारण फिरोजशाह को बधाई मिली।)

फिरोजशाह का आदर तो लोग पहले भी करते थे परन्तु वाइसराय की कौंसिल में उन्होने जो शानदार काम किया उससे उनका सम्मान और भी बढ गया।

इस कौंसिल में सामने बहुत से प्रश्न विचार के लिए आए, जिन पर वादविवाद में फिरोजशाह ने भाग लिया। उनकी निर्भीकता, योग्यता और तर्क पर प्रभुत्व ने देश भर में उनके प्रशंसकों को हर्षित कर दिया। कौंसिल में उन्होंने नई जान डाली। विरोधी दल के वातावरण और मनोदशा में परिवर्तन से लोग बहुत खुश हुए परन्तु अधिकारीगण झल्ला उठे।

दिसम्बर 1894 में कौंसिल के सामने कपास शुल्क बिल पेश हुआ। यह सबसे पहला महत्वपूर्ण बिल था जिस पर हुए वादविवाद में फिरोजशाह ने अपनी प्रतिभा दिखाई। रुई पर आयात कर 1879 में हटा दिया गया तथा लंकाशायर के उद्योगपतियों को भारत का शोषण करने की छूट दे दी गई थी। इसका वृत्तांत हम पहले भी कर चुके हैं। लार्ड रिपन स्वतन्त्र व्यापार के सिद्धान्त के पक्के समर्थक थे। इसके अतिरिक्त 1882 में देश की आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी थी, इसलिए सर ऐवलिन बेअरिंग ने नमक और शराब को छोड़कर सब वस्तुओं पर से आयात कर हटा दिया।

सन् 1875 की कर सूची के अनुसार हर आयात की वस्तु पर 5 प्रतिशत आयात कर लगाया जाता था। 1894 में आर्थिक संकट के कारण दोबारा यह कर लगाना आवश्यक हो गया तथा यह कर फिर से लगा दिया गया। उस समय सर हैनरी फाउलर भारत मन्त्री थे और उनकी ही तूती बोलती थी। उन्होंने भारत में बनने वाले महीन सूती कपड़े पर कर लगा दिया। कर लगाने का अभिप्राय यह था कि लंकाशायर के उद्योगपतियों के मुनाफे पर आंच न आए। भारतीय सरकार को विवश हो इस कर की स्वीकृति देनी पड़ी। टाइम्स आफ इण्डिया ने इस विषय पर टिप्पणी करते हुए लिखा "चीनी सेना ने भी अपने शत्रुओं के सामने इतनी जल्दी हथियार नहीं डाले जितनी जल्दी लार्ड एलगिन की सरकार ने दबंग भारत मन्त्री के सामने डाल दिए।"

कपास आयात कर बिल के संबंध में नियुक्त हुई प्रवर समिति की रिपोर्ट इम्पीरियल कौंसिल के सामने प्रस्तुत हुई। बम्बई के वाणिज्य जगत के प्रसिद्ध व्यक्ति फजलभाई विश्राम ने इस अन्याय को दूर करने के लिए बिल में संशोधन का प्रस्ताव पेश किया। फिरोजशाह ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया तथा जिन सिद्धान्तों पर बिल आधारित था उन पर तीव्र आक्रमण किया। उन्होंने कहा —

"यह बिल इस सिद्धान्त और नीति पर आधारित है कि यदि भारत क किसी भी नवजात उद्योग से इंग्लण्ड के उद्योगो की प्रतियोगिता का जरा सा भी सदेह हो तो उस भारतीय उद्योग का जन्म होते ही गला घोट दिया जाए। मैं इस नीति का घोर विरोध करता हू। यह नीति भारत के लिए बहुत हानिकारक है। केवल यही नही, इस नीति से भविष्य के लिए भी एक बहुत ही घातक मिसाल कायम हो जाएगी।

फजलभाई विश्राम का सशोधन प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया गया। इसके समर्थन मे नौ और इसके विरोध मे ग्यारह वोट पडे। "भारत पर अग्रेजी शासन के इतिहास मे पहली बार ऐसा कानून बना, जिसके समर्थन म कोई स्वप्न में भी यह नही कह सकता था कि यह देश के हितों के प्रोत्साहन के लिए बनाया गया है।"

1889 के कैन्टोनमेन्ट एक्ट मे सशोधनार्थ एक बिल प्रस्तुत किया गया। इस बिल पर भी खूब गम और सजीव वाद-विवाद हुआ। इस बिल को प्रस्तुत करने का ढग ऐसा था कि इसके कारण वाइसराय और भारत मत्री के बीच वधानिक सम्बन्धो का प्रश्न उठा और यह प्रश्न महत्वपूर्ण बन गया। वसे तो ये दोना अधिकारी अपनी अपनी जगह तानाशाह गिने जाते थे परन्तु भारत मत्री वाइसराय से अधिक निरकुश और उत्तरदायित्वहीन थे। बिल प्रस्तुत करते समय कौंसिल के कानून सदस्य ने स्वीकार किया कि यह बिल अग्रेजी सरकार की आज्ञा से प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने कहा 'छावनियों से सम्बन्धित विषय पर बठाए गए आयोग के बहुमत न इस बिल की सिफारिश की थी। अत यदि कौंसिल उचित समझे तो इस बिल पर विचार विमश करे।'

जब यह बिल द्वितीय वाचन के लिए कौंसिल के सामने आया तो सरफ्रिफिय इवान्स न इसका प्रस्तुत करने के ढग की निन्दा की। उन्होन कौंसिल और भारत मत्री के सम्बन्ध पर भी प्रकाश डाला। उनका कहना था कि भारत सरकार का सविधान इस बात की अनुमति नही देता कि वधानिक कारवाई म राष्ट्र सचिव पहल करें। उन्होंने कहा कि भारत मत्री ने यह बिल इसलिए प्रस्तुत किया है क्योंकि प्रशासन के

ऊपर उनका पूण नियन्त्रण है। सर ग्रिफिथ इवास के विचार म भारत मन्त्री ने कौंसिल के अधिकारो को छीनने की चेष्टा की थी। उन्होंने भारत मन्त्री के इस काम को अवधानिक बताया तथा चेतावनी दी कि यदि भारत मन्त्री ऐसे काय करते चले गए तो इसका परिणाम यह होगा कि भारत सरकार के सारे शासन तन्त्र की हानि होगी।

अग्रेजी सरकार की इतनी कडी आलोचना से कौंसिल की कारवाई असाधारण रूप से सजीव हो गई। मि० इवास और बगाल के दसरे विख्यात प्रतिनिधि ने इस दृष्टिकोण के समथन मे बहुत योग्यतापूण तर्क प्रस्तुत किए परन्तु यह दृष्टिकोण कुछ ठीक न था। फिरोजशाह ने कौंसिल को बताया कि कुछ खास क्षेत्रों मे तो वाइसराय को बहुत ही निरकुश और तानाशाही अधिकार प्राप्त हैं और कुछ क्षेत्रो मे वह भारत मन्त्री के अधीन है। उन्होंने अपने भाषण के आरम्भ मे ही ऐसे सिद्धान्त की व्याख्या की जिसके बारे मे किसी को सदेह नही हो सकता था। उनका कहना था कि देश का शासन वास्तव मे इग्लड की पार्लियामैंट के हाउस ऑफ कामन्स के हाथ में है और हाउस आफ कामन्स अपने अधिकार का प्रयोग मन्त्रियो के द्वारा करती है जो इसके विश्वासपात्र हैं।

फिरोजशाह ने कहा कि भारत मन्त्री के अधिकार के पीछे हाउस ऑफ कामन्स की सत्ता है और उनका कतव्य है कि हर वधानिक उपाय से हाउस के आदेश का पालन करें। यद्यपि वाइसराय का पद बहुत उच्च है फिर भी यह कहना गलत होगा कि वाइसराय इग्लण्ड की पार्लियामेंट के नियन्त्रण से मुक्त हैं। उन्होंने कहा कि वाइसराय का इतना प्रभाव है कि भारत सम्बन्धी प्रश्नों पर अन्तिम निणयो मे उनकी सिफारिश और उनकी राय महत्व रखती है परन्तु वाइसराय का यह महत्व-पूण स्थान पार्लियामेंट की अधीनता में पूणत अनुरूप है।

फिरोजशाह बिना किसी सकोच के इस वधानिक स्थिति को स्वीकार करने के लिए तयार थे। वह वाइसराय को खुली छूट देने म विश्वास नही रखत थे। उनका विचार था कि भारत मन्त्री द्वारा किया गया इग्लैण्ड की पार्लियामेंट के नियन्त्रण का भारत के राज्य शासन पर हितकर प्रभाव ही पडेगा।

बिल के वैधानिक पहलू पर भाषण देने के पश्चात् फिरोजशाह ने उन स्थितियों का वणन किया जिनके कारण बिल की आवश्यकता महसूस हुई थी। उनका कहना था कि बिल म जो व्यवस्था है वह वास्तविक रूप म विभिन्न प्रकार के नियम विनियमों में पहले से ही मौजूद है परन्तु व्यवहार म इनका दुरुपयोग किया जा रहा है। बिल का अभिप्राय इन नियमों को वैधानिक रूप देना और उस दुरुपयोग को रोकना है।

इस प्रसग मे उन्होंने भारतीय वधानिक प्रणाली के भारी दोष पर भी दृष्टि डाली। उन्होंने कहा कि कुछ विषय ऐसे हैं जिनकी व्यवस्था स्वय कानून म ही होना चाहिए। कायकारिणी को नियम-विनियमों द्वारा इन मामलों की व्यवस्था का अधिकार देने की पद्धति बहुत ही दोषपूर्ण है। इस प्रणाली की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि ठोस वधानिक निवेश के स्थान पर सरकार आश्वासन और वचनों द्वारा काम चलाना चाहती है। यह वचन और आश्वासन भुलाए भी जा सकते है। अधिक भय इस बात का है कि सरकार इन वचनों और आश्वासनों का मनचाहा अथ लगाता है।

भारतीय विधान के इतिहास म बहुतेरे ऐसे उदाहरण मिलेंगे, जहा सरकार ने अपनी नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करके एक उदार आशय कानून की भी रूपरेखा बिगाड कर रख दी। इसका उदाहरण मिण्टो मार्ले सुधार योजना से मिलता है।

बिल को एक प्रवर समिति के सुपुर्द किया गया। बिल पर जो आपत्तियां की गई थी उनके निवारण के लिए इसमे कुछ सशोधन किए गए। फरवरी म हुई बठक म इसे सवसम्मति से पास कर दिया गया।

लेजिस्लेटिव कौंसिल की कारवाई इस बिल पर ही समाप्त नहीं हुई। और भी बिल आने थे। इनम से हम एक का ही वणन करेंगे, जिसकी कौंसिल म और इसके बाहर कड़ी आलोचना हुई। इस वाद विवाद को लेकर कौंसिल के वित्त सदस्य श्राफ म उबल पडे और इसके कारण फिरोजशाह देश के कोने कोने म विख्यात हो गए। यह विषय था 1861 के पुलिस कानून म सशोधन का बिल। 1861 के कानून के अन्तगत प्रादेशिक सरकार को यह अधिकार दिया गया था कि यदि किसी जिले मे

गडबडी हो अथवा सकटपूर्ण स्थिति हो तो गडबडी की रोकथाम के लिए उस जिले मे पुलिस तनात कर सकती थी तथा पुलिस का खर्च उस जिले के सभी लोगो से वसूल कर सकती थी। पिवट के सशोधन का अभिप्राय यह था कि सरकार पुलिस का खर्च जिले के सभी निवासियो मे नहीं बल्कि उन लोगो से ही वसूल करे जिनका कि इस गडबडी मे हाथ हो। बिल मे यह भी था कि यदि किसी व्यक्ति की शरारत से गडबडी होती है या उसे प्रोत्साहन मिलता है तो वह चाहे अन्यत्र ही हो, उस पर भी सरकार जुर्माना कर सकती थी। बिल मे और भी दो सशोधन करने की व्यवस्था की गई। एक तो यह था कि यदि कोई व्यक्ति किसी को चोट पहुचाएगा, तो उसे क्षतिपूर्ति के लिए घायल व्यक्ति को हरजाना देना पडेगा। दूसरा सशोधन यह था कि यदि किसी जुलूस से शान्ति भग होने की सभावना हो तो सरकार उस जुलूस पर भी निय त्रण लगा सकती थी।

सरकार का यह कहना कि बिल का अभिप्राय हानि की क्षतिपूर्ति करना है, केवल एक बहाना था। सरकार की चेष्टा यह थी कि अदालतो से अधिकार लकर मजिस्ट्रेटो को असाधारण अधिकार प्रदान किए जाए। बिल के अन्तगत मजिस्ट्रेटो को खुली छूट थी कि वे किसी भी व्यक्ति को पकड लें और सजा दे दें। सभी व्यक्ति, चाहे वह दोषी हो या निर्दोष, कार्यपालिका की दया पर थे। अन्यत्रवासी जमीदारो को भी जो उपद्रव के क्षेत्र से सकडो मील दूर थे, सजा दी जा सकती थी।

फिरोजशाह के शब्दो मे सरकार शान्ति व्यवस्था की रक्षा की आड मे कार्यपालिका को यह अधिकार देना चाहती थी कि बिना मुकदमा चलाए ही वह किसी भी व्यक्ति को दोषी सिद्ध कर सके और दण्ड दे सके। बिल के समर्थक कहते थे कि उपयुक्त विचार मुट्ठी भर शोर मचाने वाले उत्पातियों के हैं परन्तु यह उनका दुर्भाग्य था कि कई सरकारी अफसर भी फिरोजशाह के विचारो से सहमत थे। फिरोजशाह ने इस बिल का कौंसिल मे कडा विरोध किया। उनके भाषण से कौंसिल मे ही नहीं बल्कि सारे देश के वातावरण मे उत्तेजना आ गई। फिरोजशाह ने परिषद के अध्यक्ष को सम्बोधित करते हुए कहा —

"माई लाड इससे अधिक प्रतिक्रियावादी और जनता को निरुत्साहित करने

वाले बिल की मैं कल्पना भी नही कर सकता। इस बिल मे दुरुपयोग का पूरा पूरा डर है। यह एक ऐसा प्रतिगामी बिल है जिसकी इच्छा कायपालिका हमेशा किया करता है। हमारे अधिकारीगण यह ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं कि अपराध को दबाने और अपराधियो को सजा देने का काय केवल अदालता का है है। कायपालिका को यह अधिकार देना खतरे से खाली नहीं। अफसर कितने हा योग्य, ईमानदार और कतव्यनिष्ठ क्यो न हो, उन्हे यह अधिकार देने से निर्दोषिता व सत्य की हत्या की आशका बनी रहेगी।

'यह बिल अवनतिशील और अनुभवाश्रित तो है ही इसम एक और भी बडा दुगुण है, वह यह कि इससे कायपालिका का भी नैतिक पतन होगा। मेरी यह इच्छा कदापि नही कि मैं कायपालिका की निन्दा करू। मुझे सदेह नही कि अधिकतर अफसर ऐसे हैं जो पूण योग्यता से अपने कतव्य का पालन करना चाहते हैं, परन्तु यह सोचना व्यथ होगा कि वह अपनी श्रेणी और ओहदे के दोषो और पक्षपात से दूर हैं।''

सर जेम्स वैस्टलण्ड वित्त सदस्य थे। वह क्रोध से भडक उठे। वह स्वप्न मे भी यह नही सोच सकते थे कि नौकरशाही के स्तम्भो के बारे मे कोई व्यक्ति इतनी अपमानजनक भाषा का प्रयोग करेगा जसा कि फिरोजशाह ने किया था। अंग्रेज अफसरो के पवित्र नाम व ख्याति पर लाछन लगाया गया था। जिसके कारण सर जेम्स के क्रोध का विस्फोट हुआ तथा उसकी गूज काफी समय तक सुनाई देती रही। उनके भाषण का उद्धरण निम्नलिखित है

' मैं कायकारी परिषद का प्रथम सदस्य हू जिसे माननीय फिरोजशाह के बाद बोलने का अवसर मिला है। उन्होंने अपने भाषण मे ऐसी बातें कही हैं जिससे मुझे आश्चय हुआ है और दुख भी। परिषद की कौंसिल की कारवाई मे उन्होंने जिस प्रवृत्ति को जन्म दिया है उसका मैं प्रतिवाद करता हू। आज तक कौंसिल म जब भी कभी सरकारी अधिकारियो के आचरण के बारे मे बात चली है तो वक्ताओ ने हमेशा उनकी योग्यता कतव्यनिष्ठा और न्यायप्रियता की प्रशसा की है। सरकार के इन विख्यात अफसरो ने, भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना की है और इसके दृढीकरण मे भी इन्ही का हाथ है। इन्हीं अफसरों में से कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने

पचास साल से अधिक अपनी उपस्थिति से इस कौंसिल की शोभा बढाई है। आज पहली बार सम्पूर्ण अफसर समुदाय पर पक्षपात का आरोप लगाया गया है और यह भी कहा गया है कि विधायिका द्वारा सौंपे गए कत्तव्यो का पालन करने की इसमे *क्षमता नही है।*

"श्रीमान, माननीय सदस्य द्वारा की गई नि`दा का लक्ष्य आप और आपके नीचे के सभी अफसर हैं। *माननीय सदस्य का कौंसिल के प्रति उत्तरदायित्व* है पर`तु वह अपने इस कतव्य को भूल चुके हैं। उ`होंने भारतीय सिविल सर्विस पर भी, जा कि प्रतिष्ठित सेवा है और जिसका सदस्य होने का मुये गव है आरोप लगाया है। न केवल उ`हें अयोग्य ही बताया है परन्तु उनकी ईमानदारी पर भी सशय प्रकट किया है। मैं माननीय सदस्य द्वारा की गई नि`दा का प्रतिवाद करता हू।"

यह विस्फोट अकारण था। फिरोजशाह ने तुरन्त इसका खण्डन किया कि माननीय वित्त सदस्य ने मेरे भाषण का अथ नही समझा। मेरा अभिप्राय किसी की नि`दा करना नही था। कई सप्ताह देश मे इस घटना की चर्चा होती रही। सर जेम्स वेस्टलैंड के क्रोध प्रदशन का जो परिणाम निकला, उसकी उ`हे बिलकुल आशा नही थी। देश के लोग इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल म फिरोजशाह के महान काय का महत्व समझने लगे। उ`होने भी महसूस किया कि एक नई स्फूर्ति का ज`म हुआ है। फिरोजशाह की स्पष्ट, स्वतत्र और निर्भीक आलोचना से राजनीति मे एक नए युग का प्रारम्भ हुआ। उच्च सरकारी अधिकारियो के सामने ही सरकार के काय और नीतियों की कठोर आलोचना लोगो के लिए एक नई बात थी। लेजिस्लेटिव कौंसिलो के विस्तार तथा इनके निर्माण मे भारतीय प्रतिनिधित्व एक साधारण सा सुधार था। लोगो को विश्वास था कि सरकार की आलोचना का इन कौंसिलो पर अच्छा प्रभाव पडेगा। पहले तो यह कौंसिलें सरकारी फरमानो का पजीकरण करने की मशीनें ही समझी जाती थीं पर`तु अब जनता अपने प्रतिनिधियो द्वारा अपनी मागें सरकार के सामने रख सकती थी। जनता के प्रतिनिधियो के इन कौंसिलो मे आने से यह लाभ भी हुआ कि उ`ह सरकार की काय-प्रणाली का ज्ञान हुआ जो अभी तक जनसाधारण के लिए रहस्य ही था।

कौंसिला के निर्माण मे निर्वाचन के सिद्धात को लागू करने के लिए देश के

शिक्षित वग न एक दृढ सघप किया था। इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल की कारवाई मे नई प्रवत्ति के सचार का श्रेय इस सघप को जाता है। लाहौर के समाचार पत्र ट्रिब्यून न 30 जनवरी, 1895 के अक मे फिरोजशाह की सफलता पर टिप्पणी करते हुए कहा —

"कौंसिल चेम्बर म आज हम ऐसा स्वर सुन रहे हैं जो हमने पहले कभी नहीं सुना। यह माननीय फिरोजशाह की ललकार है। इन्होने टेरिफ बिल पर हुई बहस के समय विनिमय मुआवजे के ढोल का पोल खोला। इनकी खरी खरी बातो से उच्च अधिकारी और कायकारी परिषद के सदस्य पहली बार सिहर उठे। अभी तक इन लोगो ने ऐसी कडी आलोचना समाचारपत्रो म या सावजनिक सभाओ की रिपोर्टों में पढी थी जिनमे य लोग कभी जाते नही थे। आलोचना का समुद्र कौंसिल हाल के बाहर कई वर्षो से मौजें मार रहा था। अन्त म इस समुद्र की लहरो ने उन भारी दीवारो को तोड दिया। कौंसिल म पहली बार सच्ची और निर्भीक आलोचना की गूज उठी। लोगो को भी पहली बार पता चला कि कुछ उच्च सरकारी अफसर कितने पानी मे है।

' जब सर जेम्स न फिरोजशाह पर कौंसिल म नई मनोवत्ति लाने का आरोप लगाया था तो अनायास ही उनके मुह से एक महान सत्य निकला था। हा, हम मानते हैं कि आज कौंसिल मे एक नई मनोभावना का सचार हुआ है परतु इसका कारण फिरोजशाह नही हैं। इस नई मनोभावना का कारण 1892 का कानून है।"

पुलिस बिल के कानन मे परिवतन होने के अवतरण का सम्पूण वत्तान्त नीरस होगा। प्रवर समिति ने थोडी सी लीपापोती करके तथा भडकीले वस्त्र पहनाकर बिल्नामी कुरूप पिंजर को छुपाने का प्रयत्न किया परतु यह प्रयत्न निष्फल हुआ। वास्तविकता तो यह थी कि अपराध की रोकथाम और शान्ति व्यवस्था के बचाव के नाम पर जिला मजिस्ट्रेटो का मनमाने और विस्तत अधिकार दे दिए थे। मजिस्ट्रेटो को पुलिस पर निभर होना पडता था। इसका परिणाम यह हुआ कि यथाथ मे यह अधिकार पुलिस के हाथ मे चले गए।

बिल की अतिम मजिल म सरकार का बहुत कठिनाई का सामना करना

पड़ा। फिरोजशाह और उनके साथी मुट्ठी भर थे परन्तु इन लोगो ने बड़े साहस से बिल के समथकों पर बार बार आक्रमण किए। सरकार के समथक सख्या मे इनसे कहीं अधिक थे, जिससे इन लोगो के प्रयत्न विफल रहे। फिरोजशाह ने बड़े व्यग्य से कहा था कि तक चाहे किसी पक्ष की ओर हो परन्तु वोट सरकार की ओर ही जाते हैं। फिरोजशाह, बाबू मोहिनी मोहन राय, महाराजा दरभगा और गगाधर राव चिटनवीस ने, जोकि कौंसिल के ज्येष्ठ सदस्य थे बार-बार बिल पर सशोधन प्रस्ताव पास कराने का प्रयत्न किया परन्तु यह सशोधन प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिए गए। बिल लगभग ज्यो का त्यो पास हो गया। पुलिस भ्रष्टाचार के लिए पहले ही बदनाम थी। अब उसके हाथ म इस कानून के रूप म एक और शस्त्र आ गया।

उस समय फिरोज़शाह ने कौंसिल मे एक और काय किया जिसका सक्षिप्त वणन आवश्यक है। दाम्पत्य अधिकारो के पुन प्रतिष्ठापन के प्रश्न को लेकर जो वादविवाद हुआ, उसमे श्री फिरोजशाह उदार हिन्दू दृष्टिकोण के प्रवक्ता थे। इगलण्ड के ईसाई विधान मे यह व्यवस्था थी कि यदि अदालत पति के हक मे फसला दे और पत्नी उस फसले को न माने तो उसे जेल भेजा जा सकता था।

इगलण्ड के इस विधान को भारत मे लागू किया जा सकता है, इस बात पर सदेह था। मि० ह्विटले स्ट्रोक्स कानून के सदस्य थे। भारत मे बसे हुए अग्रेजो के लिए कानून बनाने मे इन्होने एक प्रसिद्ध काय किया। जब 1987 मे भारत के दीवानी कानून मे सशोधन किया जा रहा था तब मि० स्ट्रोक्स पर यह धुन सवार हो गई कि इगलण्ड के कानून और भारत के कानून में एकरूपता लानी चाहिए। भारत के दीवानी कानून मे भी उन्होने इगलण्ड के कानून जैसी व्यवस्था कर दी। भारत की छोटी जातियो के अधिकाश भाग ने इस कानून का स्वागत किया और इससे काफी लाभ उठाया। यह कानून कई वर्षों तक रहा। प्रसिद्ध 'रूखमाबाई केस' से सरकार को इस बात का आभास हुआ कि कई दशाओ मे जेल की सजा का प्रयोजन स्त्री के लिए अन्यायपूण और कष्टदायक सिद्ध हो सकता है।

कानून मे सशोधन के लिए अच्छा खासा आन्दोलन चला। सरकार ने निणय कर लिया कि जब भी अवसर आएगा कानून म सशोधन कर लिया जाएगा जिससे

कद की सजा अनिवाय नही होगी। 1894 मे जब दीवानी कानून के सशोधन का काम आरम्भ हुआ तो इस अभिप्राय से सशोधन बिल मे एक धारा जोड दी गई तथा बिल को प्रवर समिति को सौंप दिया गया। समिति में रूढिवादी लोगो की विजय हुई और बिल म से इस धारा को निकाल दिया गया।

28 फरवरी 1895 को बिल कौंसिल मे प्रस्तुत किया गया तथा इस विषय पर वादविवाद हुआ। फिरोजशाह ने इस धारा को पुन शामिल करने का प्रस्ताव रखा। इस धारा मे उन्होंने थोडा सशोधन अवश्य कर दिया। इस सशोधन के अनुसार अदालत को अधिकार दिया गया कि यदि वह चाहे तो उपयुक्त स्थितियो मे, दाम्पत्य के पुन प्रतिष्ठापन के निणय का पालन करवाने के लिए, कद की सजा न भी दे। फिरोजशाह ने बताया कि हिन्दू धम अपने प्रकार का अलग ही धम है। उनका कहना था कि वह हिन्दू धम तथा हिन्दू सामाजिक जीवन की जटिलता म टाग अडाना नही चाहते। उनका विश्वास था कि इस क्षेत्र में यदि सुधार होगा तो वह धीरे धीरे शिक्षा के विस्तार से होगा। उन्होने कहा कि उनकी चेष्टा हिन्दुत्व के साथ जोडी गई एक विदेशी धम की अपवृद्धि काटने की है। उन्होने कहा है कि वह अपने व्यक्तिगत विचार प्रकट नही कर रहे परन्तु सुशिक्षित हिन्दुओ की ओर स बोल रहे हैं। आज यदि स्वर्गीय तलग यहा होते तो वह भी यही निवेदन करते। कुछ लोगो की धारणा है कि हिन्दुत्व का प्रमुख लक्षण नारी के प्रति अविश्वास और उस पर अत्याचार करना है पर तु फिरोजशाह इस कथन से सहमत नही थे।

कौंसिल म और कौंसिल के बाहर भी फिरोजशाह के सशोधन प्रस्ताव का विरोध हुआ। सरकार रूढिवादियो के दबाव मे आ गई। यद्यपि सर एलेक्जण्डर मिलर और दूसरे सरकारी सदस्य सशोधन के प्रति सहानुभूति रखत थ फिर भी उन्होंने प्रस्ताव का समथन नहीं किया। फिरोजशाह के अतिरिक्त चिटनवीस ही प्रस्ताव के पक्ष मे बोले। कौंसिल ने यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया।

कौंसिल के इस गहमागहमी भरे और स्मरणीय अधिवेशन म जो काम हुआ

उसके बणन को समाप्त करने से पहले बजट सम्बधी बहस का उल्लेख और कर देना उचित होगा। 1892 के इ डियन कौंसिल ऐक्ट के अ तगत प्रशासन पर आलोचना करने और सरकारी नीति को प्रभावित करने का वास्तव मे एक ही बार अवसर मिला था। यह अवसर था कौंसिल म होने वाली बजट सम्बधी बहस। बहस क्या थी एक वार्षिक समारोह सा था। सदस्यगण बडी धष्टता स और जा भर कर भाषणो की आतिशबाजिया छोडत, जिससे शोर ता जरूर मचता पर तु परिणाम नही के बराबर ही निकलता था। यह वादविवाद एक आडम्बर ही था जिससे कौंसिल ऊब जाती। सरकारी सदस्यो को अपनी बुद्धिमत्ता पर बहुत घमड था। उनकी धारणा यह थी कि ये भाषण अनाडी लोगो द्वारा की गई बकवास ही हैं। इस प्रकार की बहस मे फिरोजशाह और गोखले जसे व्यक्ति प्राय कम ही भाग लेते पर तु जब कभी उ हें भाग लेने का अवसर मिलता तो इनकी योग्यतापूण और पनी आलोचना से सरकारी सदस्य सिहर उठते। इनके भाषण केवल अलकारिक नही बल्कि तकपूण होत। सरकारी सदस्यो के उत्तर सुनन मे तो बहुत आत्मविश्वासपूण लगते पर तु मन में ये लोग चि तित रहते तथा बहस की समाप्ति पर ही चन की सास लेत।

जिस समय का हम वत्ता त कर रहे है उस समय प्रशासन पर व्यय बहुत बढ चुका था जिससे लोग चिन्तित हो रहे थे। फिरोजशाह के आक्रमण का मुरय लक्ष्य यह खर्चा था। इस विषय पर भूतपूव वित्त सदस्यो के विचारो का उद्धरण करके फिरोजशाह ने यह प्रमाणित किया कि उनका दावा ठीक है कि प्रशासन का खच वास्तव मे बहुत बढ चुका है। सर आकलण्ड कान्विन सर डेविड बारबर और दूसरे वित्त सदस्यो ने यह माना था कि प्रशासन की काय प्रणाली ऐसी है कि सरकारी खच पर कोई कारगर नियत्रण नही हो सकता। इन भूतपूव सदस्यो ने यह भी स्वीकार किया था कि वित्त सदस्यो को छोडकर परिषद के दूसरे सदस्यो का प्रत्यक्ष रूप से स्वाथ व्यय करने मे है और इ ही सदस्यो पर आर्थिक स तुलन का उत्तरदायित्व भी है।

माच 1894 मे बम्बई प्रेसीडे सी एसोसिएशन ने इस विषय पर सरकार को एक आवेदन पत्र दिया था। यह आवेदन पत्र बडी योग्यता से लिखा गया था तथा इसमे सरकारी खच की बढोतरी की समस्या पर प्रकाश डाला गया था। फिरोजशाह

ने अपने भाषण मे इस आवेदनपत्र का उल्लेख किया । फिरोजशाह ने कहा माननीय वित्त सदस्य ने इस आवेदन पत्र को हमी ठटठे मे उडा दिया था। उन्होंने कहा कुछ अनाडी लोग ससार की सवश्रेष्ठ सर्विस (इडियन सिविल सर्विस) को प्रशासन की विधि बताने चले हैं । वित्त सदस्य महोदय को विशेषकर हँसी इस बात पर आई थी कि ये लोग उनको भी वित्त व्यवस्था सिखाने का दम भरते हैं। हम भारतीय लोग अनाडी ही सही परन्तु मैं माननीय वित्त सदस्य से पूछता हू कि क्या उनके पूववर्ती वित्त सदस्य भी भोडे और आडम्बरपूण राजनीतिज्ञ थे ? इन पूववर्ती वित्त सदस्यो के विचारो से आवेदन पत्र म दिए गए तर्कों की पुष्टि होती है । इसको विशेषज्ञ साक्ष्य मानें या न मानें परन्तु इससे इतना स्पष्ट है कि सेना पर खच जिस तजी से बढ रहा है वह चिन्ताजनक है । यह खच सरकार की वास्तविक आमदनी का आधा भाग है । इस खच को कम करने के लिए यदि सेना म कमी करना अथवा आक्रामक नीति को तिलाजलि देना सम्भव नही है, तो भारत के आर्थिक सकट के निवारण के लिए हमारे पास एक ही उपाय रह जाता है । यह सबको पता है कि अग्रेज सेना को हमने आमन्त्रित नही किया। यह सेना अग्रेजी सरकार के आदेश से ही इस देश में तनात है । भारतीय सरकार को चाहिए कि अग्रेजी सरकार से याचना करे कि इस सेना के खच और शस्त्रो पर व्यय में भारत का हिस्सा निश्चित करते समय वह न्याय और औचित्य से काम ले । वतमान अथसकट से निकलने का यही एक रास्ता है । 8 फरवरी, 1879 के प्रेषण में भारत सरकार ने भी अग्रेजी सरकार को यही सुझाव दिया है ।

फिरोजशाह ने अपने भाषण मे यह भी कहा कि सेना पर खच के आकडे तो आकाश को छू रहे है परन्तु शिक्षा पर वास्तविक सरकारी आमदनी का दो प्रतिशत भी नही खच किया जा रहा है । यह राशि करीब करीब उतनी ही बैठती है जितनी सरकार विनिमय मुआवजा भत्ते के रूप मे खच करती है ।

वित्त सदस्य सर जेम्स ने अपने उत्तर मे व्यग्य किया "कुछ भारतीय महानुभावो को राजनीति का शौक है, और उन्होने बडे दिन पर लाहौर मे बठक करके यह शौक पूरा कर लिया पर बलिहारी जाऊ इनकी बुद्धि पर ! ये लोग हमे शासन प्रणाली की शिक्षा देने चले हैं ।" किन्तु वक्ता ने अपने भाषण में जो तथ्य

और आकडे दिए थे, वे अपनी कहानी आप कहते हैं। इन आकडो से यह सिद्ध होता था कि सरकारी आमदनी और व्यय की व्यवस्था असन्तोषजनक है और सरकारी बजट वित्त व्यवस्था के ठास सिद्धा तो पर आधारित नही है।

फिरोजशाह न परिषद म जो महान काय किया था देशवासियो के द्वारा उनक कार्यों की मान्यता और सम्मान उचित ही था। उनके व्यक्तित्व का जनता को अब पता लगा। वह जोशीले भाषण देकर जनता का प्रसन्न करन म विश्वास नही रखत थे, न हा वह थाथे वाक्या का भूलभुलया मे ही पडत थे। वह पशेवर राजनीतिन भी नही थे, जि ह हर समय स्वाथपूर्ति की ही चिन्ता रहती है। वह ता एक निपुण सेनापति थ तथा अपनी शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग करत और अवसर मिलत ही शत्रु पर वार करने मे नही चूकत थ। उनका आक्रमण दुर्जेय होता परन्तु यदि उन्हें आभास होता कि मार्चे पर डटे रहने से हानि होगी तो वह चतुराई स पीछे भी हट जाते। जिन लोगो न उनसे लोहा लिया वे उनसे डरत और उनका सम्मान भी करते थे। इन श्रेष्ठ गुणा का उन्होने कौंसिल मे पूरा पूरा उपयोग किया। उनकी असाधारण सफलता से देश के लोग प्रोत्साहित हुए।

'पायनियर' जसा प्रतिक्रियावादी समाचारपत्र भी उनको श्रद्धाजलि देने के लिए विवश हो गया। फिरोजशाह के सम्बन्ध मे छपे हुए सम्पादकीय मे उनके जीवन पर प्रकाश डाला गया। इस लेख म उनके सौन्दय, भव्य निवास स्थान और महगे फरनीचर का वृत्तान्त था। लेख म यह भी कहा गया था कि वह अपना गोष्ठी के नेताओ म सबसे श्रेष्ठ बुद्धिवादी हैं तथा दादाभाई नौरोजी को छोड कर पश्चिम भारत के सबस योग्य और विख्यात नेता है।

फिरोजशाह के सम्मान म कई समारोह हुए। उनके पुराने मित्र डब्ल्यू० सी० बनर्जी न कलकत्ता के पाक स्टीट स्थित मकान मे सध्या के समय चाय पार्टी दी। थोडे दिनो बाद ही टाउन हाल में उनके सम्मान में प्रीतिभोज हुआ। इस समारोह के अध्यक्ष मनमहोन घाष थे जो इग्लण्ड में वकालत की शिक्षा के समय इनके सहपाठी थे। कुछ दिनो बाद कलकत्ता के नागरिको ने फिरोजशाह की सेवाओ के मान्यतास्वरूप एक सावजनिक समारोह का आयोजन किया।

ये समारोह राजनैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण थे। कलकत्ता की किसी भी सभा में इतनी अधिक संख्या में लोग इकट्ठे नहीं हुए थे। प्रदेश की हर जाति, समुदाय और श्रेणी के लोगों ने इन सभाओं में भाग लिया। फिरोजशाह के प्रति सम्मान प्रकट करके बंगाल ने सिद्ध कर दिया कि सच्ची राष्ट्रीय भावना कामरत है तथा धर्म और जाति की दीवारों को तोड़कर, लोगों के चिन्तन और मनोभाव में समानता उत्पन्न कर रही है। रिपन क्लब में उनके घनिष्ठ मित्रों की ओर से फिरोजशाह को एक प्रीतिभोज दिया गया। इस अवसर पर फिरोजशाह ने कलकत्ता के लोगों को उनके अतिथि सत्कार के लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा—इस सत्कार के कारण मुझ में यह धारणा पहले से अधिक दृढ़ हो गई कि मैं जनता का ही एक अंग हूं।

इन सम्मानों से लदे हुए फिरोजशाह एक अप्रैल को बम्बई लौटे। भायखला स्टेशन पर भारी संख्या में उनके मित्र और प्रशंसक उनका स्वागत करने आए। बम्बई के नागरिकों ने निर्णय किया था कि वे फिरोजशाह का हार्दिक सत्कार करेंगे तथा वे उनके सम्मान के लिए कई समारोहों का भी प्रबंध कर चुके थे। जनता में बहुत हर्ष था और यह इच्छा थी कि उनकी सेवाओं को मान्यता देने के लिए एक स्मारक बनाया जाए। कुछ लोगों का सुझाव था कि उनकी मूर्ति स्थापित की जाए तथा कुछ लोग चाहते थे कि स्मारक अधिक शानदार और लाभप्रद होना चाहिए। लोगों ने फिरोजशाह को बम्बई के 'बेताज बादशाह' की उपाधि दी थी। हर वर्ग के लोगों में होड़ सी लग गई थी कि कौन इनका अधिक सम्मान करता है।

बम्बई आने के थोड़े दिनों बाद ही फिरोजशाह नगरपालिका की ओर से पुनः सदस्य निर्वाचित हुए। इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल का सदस्य होने के कारण उन्हें कई बार बम्बई से कलकत्ता जाना पड़ता था। इस अनुपस्थिति का ध्यान में रखकर प्रादेशिक कौंसिल की सदस्यता के लिए किसी और व्यक्ति को चुनने का यत्न भी चला परन्तु अधिकतर लोगों की धारणा थी कि फिरोजशाह का चुनाव अनिवार्य है। इससे फिरोजशाह ने दोबारा अपने चुनाव के लिए स्वीकृति दे दी और वह सर्वसम्मति से प्रादेशिक कौंसिल में नगरपालिका के प्रतिनिधि चुन लिए

गए। नागरिक मामला मे उनके प्रभाव को देखते हुए उनका चुनाव स्वाभाविक ही था। एक लेखक ने लिखा कि नगरपालिका क इतिहास मे एक भी उदाहरण एसा नही मिलगा जब फिराजशाह न कोई प्रस्ताव या कोई सशोधन नगरपालिका को प्रस्तुत किया हा और उसे अस्वीकार कर दिया गया हो। एक बार तो ऐसा हुआ कि पुलिस के खच का प्रश्न विचाराधीन था, उस समय फिरोजशाह बाहर गए हुए थे। इससे नगरपालिका ने उस पर अपना निणय स्थगित कर दिया।

बम्बई म फिरोजशाह को सबसे पहले रिपन क्लब ने श्रद्धाजलि प्रदान की, यह उपयुक्त ही था। इस समारोह मे बम्बई के मुख्य नागरिको ने भाग लिया। समारोह के अध्यक्ष पारसी समुदाय के मुखिया सर जमशेदजी जीजा भाई थे। उन्होने फिरोजशाह को हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित की और कहा इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे स्वतत्रता और प्रगति की लडाई मे फिरोजशाह ने चरित्रबल, ध्येयनिष्ठा, उत्साह, अनथक परिश्रम और निर्भीक वाग्मिता का परिचय दिया है।

उनके विजयोल्लास का दूसरा दृश्य नावल्टी थियेटर मे देखने मे आया। यह नाटयशाला लोहे की नालीदार चादरो से बनी हुई एक भद्दी सी इमारत थी, पर तु उन दिनो यह बम्बई की मुख्य नाट्यशाला थी। 20 अप्रल को इस नाटयशाला मे बम्बई प्रेसीडेन्सी एसोसिऐशन के आयोजन मे एक भारी सभा हुई। लोगो ने बहुत बढ चढकर इस सभा मे भाग लिया। इस सभा से फिरोजशाह के प्रभाव और सर्वप्रियता का पता चलता है। लोग उन्हे बम्बइ का सवश्रेष्ठ नागरिक मानते थे।

4 मई, 1895 को बेलगाव मे एसासिएशन का आठवा अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन ने भी फिरोजशाह का उनका सेवाआ के लिए सम्मान किया। फिरोजशाह अधिवेशन मे आए। जब गाडी रुकी तो लोगो ने इनका हार्दिक स्वागत किया। इस समय सारे भारतवासियो की आखें फिरोजशाह की ओर लगी हुई थी और बेलगाव के लोग इनका भव्य स्वागत करना चाहते थे। इसके लिए कई सप्ताह से तयारिया हो रही थीं। अधिवेशन के मुख्य आकषण का कारण फिरोजशाह थे। लोगा को आशा थी कि वे उनके दशन करेंगे और भाषण भी सुन सकेंगे। जब उन लोगा को फिरोजशाह की अस्वस्थता का पता चला तो सबको बडी निराशा हुई।

गोपाल कृष्ण गोखले ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसमे फिरोजशाह की उत्कृष्ट सेवाओ का विवरण था । गोखले ने अभी ख्याति नही पाई थी परन्तु उन्हे जानने वाले लोगो का विश्वास था कि भविष्य मे वह एक महान नेता बनेगे। एक आलोचक ने उस समय के भारत के तीन महान नेताओ की परस्पर तुलना की थी। गोखले ने उस आलोचक का उद्धरण दिया। इस आलोचक ने कहा था तलग सदा ही स्पष्टवादी और बहुत ही सुसस्कृत व्यक्ति थे। श्री फिरोजशाह कमठ और प्रतिभाशाली है और श्री रानडे बहुत ही गम्भीर एव मौलिक विचारो के व्यक्ति है।

गोखले ने कहा कि वह इस आलोचक के मत से सहमत है परन्तु उसकी उक्ति पूर्ण सत्य प्रदर्शित नही करती। गोखले का कहना था कि कुछ लोगो विचार है कि मेहता के मुख्य गुण उनकी बौद्धिक शक्ति और प्राजलता है परन्तु इससे यह निष्कर्ष नही निकलता कि उनमे दूसरे गुणो का अभाव है। गोखले के विचार मे फिरोजशाह मे तलग जैसी प्राजलता और सस्कृति, मण्डलीक जैसा चरित्रबल और रानडे जैसा गहरा चिन्तन और मौलिकता थी।

फिरोजशाह के सम्मान मे अभिनन्दनो का क्रम 1895 के अन्त तक चला। 20 दिसम्बर, 1865 को 'गेटी थियेटर' मे एक सार्वजनिक सभा हुई और फिरोजशाह को मानपत्र अर्पित किए गए। यह सार्वजनिक सभा फिरोजशाह के प्रति जनता के असाधारण अनुराग की सूचक थी। समय से पहले ही नाट्यशाला मे बहुत से लोग पहुच गए। जो लोग देर से पहुचे, उन्हे खडे होने के लिए भी स्थान नही मिला। नाट्यशाला के अन्दर लोग ठसाठस भरे हुए थे, सास लेना भी कठिन था। बाहर बहुत भीड थी। जब लोगो ने फिरोजशाह को आते देखा तो उत्साहपूर्वक उनका स्वागत किया। नाट्यशाला के अन्दर लोगो ने तालियो की गडगडाहट से हाल को गुजा दिया।

रहीमतुल्ला सयानी सभापति थे। उन्होने चन्दावरकर से निवेदन किया कि वह बम्बई के नागरिको की ओर से फिरोजशाह को भेंट किया गया मानपत्र पढें। इसके पश्चात दिनशावाचा उठे। आठवें प्रादेशिक अधिवेशन मे फिरोजशाह

के सम्मान मे एक प्रस्ताव पास किया गया था, वाचा ने यह प्रस्ताव पढा। अन्त म सयानी ने छोटा सा सुदर भाषण दिया और फिरोजशाह को चादी की मजूषा भेंट की, जिसमे दोना मानपत्र रखे हुए थे।

जब फिरोजशाह सभा को सम्बोधित करने के लिए उठे और उन्होने चारा तरफ नजर डाली। सभा म हर जाति हर समुदाय के लाग थे जो उन का सम्मान करन आए थे। फिरोजशाह न इसे एक गौरव की घडी समझा होगा। कई वर्षों से निरन्तर जनता मे उनके प्रति सम्मान बढता चला जा रहा था। वह अभी जीवन के वसन्त म ही थे परन्तु बहुत ख्याति और सफलता प्राप्त कर चुके थे। इस अवसर पर दिया गया भाषण उनके सवश्रेष्ठ भाषणा मे से है। इस भाषण मे अधिकतर उन्होंने भारतीय दृष्टिकोण के विरोधियो और देश की महत्वाकाक्षाओ के दुश्मना को करारा जवाब दिया। यह लोग मिथ्यावाद का सहारा लेकर, भारतीय दृष्टिकोण का जानबूझकर ताड मराड कर प्रस्तुत करत और सुधार तथा प्रगति के प्रयत्नो को विफल बनान की चेष्टा करते। फिरोजशाह के भाषण से यह सिद्ध हो गया कि देश का सुशिक्षित वग राष्ट्रीय महत्वकाक्षाओ का प्रतिनिधित्व करन के याग्य है। कुछ घमडी आलोचक काग्रेस की कायप्रणाली और उसके नताओ की निन्दा करते तथा काग्रेस के ध्येय का उपहास करत थे, परन्तु फिरोजशाह के भाषण मे इन लोगो के मुह पर भी थपत पडी। यह एक बहुत ही प्रभावशाली भाषण था, श्रातागण इसके वेग मे वह चले। (जब यह भाषण समाप्त हुआ तो तालिया वजन लगी जो कई मिनट तक जारी रही।)

फिरोजशाह का अनगिनत श्रद्धाजलिया अर्पित की गई। सर विलियम वडरबन ने समाचारपत्र 'इडिया' म फिरोजशाह के जीवन पर जो सिहावलोकन किया वह बहुत ही आकषक था। इसी तरह 'इडियन स्पक्टटर' मे भी एक लेख छपा जिसमे फिरोजशाह की बहुत प्रशसा की गई। इस लेख म एक ऐसे सुझाव का समथन किया गया था जिसकी चर्चा चारो आर हा रही थी। इस समाचारपत्र न लिखा —

हमन देखा है कि बम्बई नगर ने फिराजशाह का बहुत ही सम्मान किया

है । वह इस सम्मान के योग्य हैं यह कहना अनावश्यक है क्योंकि उन जैसा निष्ठावान नेता बिरला ही होता है । उनका यह सम्मान बड़े धूमधाम के साथ हुआ है परन्तु प्रश्न उठता है कि क्या बम्बई नगर इसी से सन्तुष्ट होकर फिर निद्राग्रस्त हो जाएगा ? यदि इस सम्मान का कुछ भी अर्थ है तो बम्बई नगर को चाहिए कि श्री फिरोजशाह मेहता को इंग्लैण्ड की पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स में भेजें। उनके परिश्रमों का यह सबसे बड़ा पुरस्कार होगा । तथा बम्बई नगर को यह पूंजी लगाने से बहुत लाभ भी होगा ।

"हमने श्री फिरोजशाह जैसे निपुण वक्ता की सदैव आवश्यकता महसूस की है । सब समुदायों के लोग उनका आदर करते हैं । इस सम्मान को व्यावहारिक रूप देते हुए हमें बहुत प्रसन्नता होगी । इंगलैण्ड की पार्लियामेण्ट में उनका निर्वाचन सचमुच राष्ट्रीय ध्येय है । उपयुक्त समय पर थोड़ा सा संगठन किया जाए तो इस ध्येय की पूर्ति हो सकती है ।"

फिरोजशाह के बहुत से मित्र और अनुयायी यही चाहते थे कि यदि वह इंगलैण्ड की पार्लियामेंट के सदस्य बन जाते तो उनका राजनैतिक जीवन कैसा होता इसका अनुमान लगाना कठिन है । कभी कभी फिरोजशाह के भाषणों का ढंग पुराना होता, इंगलैण्ड की पार्लियामेंट संसार भर में अपने छिद्रान्वेषण के लिए प्रसिद्ध था । इसमें पुराने ढंग के भाषणों के लिए जगह नहीं थी परन्तु फिरोजशाह में वाद-विवाद की अद्वितीय शक्ति थी तथा वह बात का जवाब देने में देर नहीं लगाते थे । ये गुण ऐसे थे जिनसे इंग्लैण्ड की पार्लियामेंट भी उनके विचार सुनने के लिए बाध्य हो जाती ।

ऐसे गुण जो सब जगह प्रभाव डालते हैं । खेद की बात है कि इंगलैण्ड की पार्लियामेंट, जिसे संसार की पार्लियामेंटों की मां कहते हैं, आधुनिक भारत के इस महान नेता और वक्ता का परिचय न पा सकी ।

अध्याय 16

कौंसिल से त्यागपत्र

1896

कई क्षेत्रो म निरतर परिश्रम के कारण फिरोजशाह का स्वास्थ्य बिगड गया। उनका राजनीतिक जीवन अत्यधिक क्रियाशील था। वह बहुत हृष्ट पुष्ट थे और उनकी दिनचर्या बहुत ही नियमित थी जिसके कारण उनके स्वास्थ्य पर थकान का कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पडता था। जीवनचर्या के मामले म वह पहले ही सतक थ। जस जस समय बीतता गया वह इस मामले म और भी सतक हो गए। युवावस्था म उन्हें क्लब जाने का शौक था और वह एक्सेलसियर क्लब क सदस्य थ। हर व्यक्ति इस क्लब का सदस्य नही बन सकता था। थोडे समय बाद वह इस क्लब से भी ऊब गए और उन्होंने एक नया क्लब बनाने का निश्चय किया। उनका अभिप्राय था कि इस नए क्लब का निर्माण आधुनिक ढग से हो और इसका सविधान दूसरे क्लबों के सविधानो स पृथक हो। वह यह भी चाहते थे कि इस क्लब की सदस्यता मित्र गोष्ठा तक ही सीमित न हो बल्कि समाज का हर प्रतिष्ठित व्यक्ति इसका सदस्य बन सके। इस प्रकार 1885 मे रिपन क्लब का निमाण हुआ। इस क्लब के बनते ही बहुत से लोग, जिनका दृष्टिकोण उज्ज्वल था और जो समाज के अगुआ थे इसके सदस्य बन गए।

फिरोजशाह कई वर्षों तक इस क्लब म जाते रहे। सध्या का समय वह क्लब म ही बिताते। पहले अपने मित्रो के साथ खाना खाते, फिर कुछ घण्टे गोष्ठी म व्यतीत करते, जिसम काफी हसी मजाक होता। उन दिनो यह [illegible] था। कुछ दिनो बाद उन्होंने क्लब म आना बन्द कर दिया। मो॰ एम॰ [illegible]

फिरोजशाह के निकटवर्ती साथी थे। उन्होने भोज समारोह प्रारम्भ किया। इसमें दूसरे समुदाय के लोगो को आमन्त्रित किया जाता था। इन समारोहो को लोग राजनैतिक सभाए ही समझते थे। फिरोजशाह ने फिर से क्लब जाना प्रारम्भ कर दिया क्योकि उन्हे इन समारोहो मे बहुत आनन्द आता था। उनकी उपस्थिति के कारण बहुत दिलचस्प मडली इकट्ठी होती।

अधेड अवस्था में आकर उनकी आदतों मे परिवर्तन हो गया। उन्होंने कही आना जाना बद कर दिया और उनका जीवन नीरस हो गया। उनकी दिनचर्या एक तरह की समय सूची से बध गई। न तो वह स्वय बाहर खाना खाते, न ही किसी को आमन्त्रित करते। सार्वजनिक सभाओ मे ही भाग लेते तथा साथ ही अपने स्वास्थ्य और शरीर की देखभाल का बहुत ध्यान रखने लगे थे। उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का आधार उनका नियमित जीवन था। गरम जलवायु मे यदि शरीर पर निरतर भारी बोझ पडता रहे तो स्वास्थ्य बिगड जाता है। जब फिरोजशाह कलकत्ता से लौटे तो उनके स्वास्थ्य बिगडने के चिह्न दिखाई दे रहे थे।

इसके बाद सबसे पहला काम उन्होने यह किया कि इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल से सम्बन्ध तोड लिया। कुछ माह पहले ही वह इस कौंसिल के सदस्य निर्वाचित हुए थे। 26 जनवरी 1896 को उन्होने वाइसराय को तार द्वारा पद त्याग की सूचना दी। कौंसिल की कार्यवाई मे भाग लेना उनके लिए सम्भव न था। उन दिनो कपास आयातकर बिल, जिसमे बम्बई के व्यापारी समुदाय को बहुत दिलचस्पी थी कौंसिल के विचाराधीन था। ऐसे ही दूसरे महत्वपूर्ण विषय कौंसिल मे बहस के लिए आ रहे थे। इस स्थिति मे फिरोजशाह के सामने एक ही रास्ता था और वह यह कि वह अपना स्थान किसी ऐसे व्यक्ति के लिए खाली कर दें जो बम्बई प्रदेश का प्रतिनिधित्व सक्षमता से कर सके।

फिरोजशाह के त्यागपत्र से लोगो मे बहुत निराशा फैली। उन्होने इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे जो कार्य किया था उसकी प्रशसा देश भर ने की थी। लोग कहते थे कि फिरोजशाह के हट जाने से कौंसिल को भी बहुत क्षति पहुचेगी। देश भर के समाचार पत्रो ने उनकी अस्वस्थता पर जिसके कारण उन्हें

त्यागपत्र देना पडा था, खेद प्रकट किया। यह समय ऐसा था जब कौंसिल मे उनकी बहुत आवश्यकता थी।

अस्वस्थता के कारण फिरोजशाह अपनी सरगर्मियो को कम करने के लिए विवश तो अवश्य हो गए, परन्तु वह फिर भी राजनीतिक आन्दोलन का नेतृत्व करते रहे। विशेषत बम्बई मे तो ऐसा कोई भी आन्दोलन नही था जिसका पथप्रदर्शन वह न करते हो। कई और प्रभावशाली नेता थे जिनकी योग्यता मे कोई सन्देह नही था। परन्तु जब भी कोई कठिनाई आती उन लोगो को फिरोजशाह की याद अवश्य आती और वे फिरोजशाह से विचार विमर्श करना आवश्यक समझते। वह स्वास्थ्य-लाभ के लिए मथेरन चले गए थे परन्तु देश की राजनीति म उनका प्रभाव पहले जैसा ही बना रहा।

अस्वस्थ होते हुए भी विश्वविद्यालय की समस्याओ म वह अपना काफी समय व्यय करते। परीक्षा म सुधार के प्रश्न पर उन्होंने लडाकू रवैया अपनाया। इस प्रश्न पर कमेटी बठाई गई थी जिसने इस सम्बन्ध मे कुछ सुझाव दिए थे। विश्व-विद्यालय की सिण्डीकेट ने इन सुझावो को नही माना और सीनट के अधिकार की अवज्ञा करनी चाही। फिरोजशाह ने सिण्डीकेट को आडे हाथो लिया। रानडे एक विख्यात विद्वान और शिक्षाशास्त्री थे। उन दिनो विद्यार्थी परीक्षाओ के बोझ से पिस जा रहे थे और रानडे विद्यार्थियो का यह बोझ हलका करने का प्रयत्न कर रहे थे। इस काय म फिरोजशाह ने रानडे की सहायता की। विद्यार्थीवर्ग के साथ उनका सम्पर्क विरले ही होता परन्तु वह उनकी कठिनाइयो और आवश्यकताओ का समझते और उनके प्रति सहानुभूति रखते। इन प्रश्नो पर फिरोजशाह का दृष्टिकोण उदार और प्रगतिशील था।

एक और विषय था जिस पर उन दिनो वादविवाद चल रहा था—वह था विश्वविद्यालय के प्रति सरकार का रवैया। लार्ड डफरिन के समय मे सरकार ने उच्च शिक्षा के प्रति विद्वेष की नीति का प्रारम्भ किया। सरकार का यह विरोध प्रकट रूप से नही था, परन्तु विश्वविद्यालय सीनेट कारपोरेशन या कौंसिल के निर्माण के पीछे यही नीति काम कर रही थी।

केन्द्रीय सरकार ने प्रान्तिय सरकारों को गोपनीय और अर्द्ध गोपनीय परिपत्र भेजे। इनमें प्रादेशिक सरकारों को आदेश दिया गया था कि वे कालेजों और विश्वविद्यालयों को दिए जाने वाले अनुदान को कम करें और धीरे धीरे सरकार की ओर से दी जाने वाली आर्थिक सहायता पूर्णत समाप्त कर दें। इस नीति के परिणाम स्वरूप सरकार ने बम्बई विश्वविद्यालय को दिया जाने वाला अनुदान कम करना शुरू कर दिया। एक समय विश्वविद्यालय को सरकार की तरफ से 20,000 रु मिलते थे, परन्तु अब यह रकम घटाकर केवल ~,000 रुपये कर दी गई। फिरोजशाह की सलाह पर विश्वविद्यालय की सीनेट ने अनुदान में की गई कटौती पर सरकार को कड़ा विरोधपत्र भेजा। फिरोजशाह इस प्रश्न को कौंसिल तक ले गए और उन्होंने विश्वविद्यालय के प्रति सरकार की कंजूसी की बहुत ही निन्दा की। परन्तु इस विरोध का कोई परिणाम नहीं निकला। सरकार ने विश्वविद्यालय को सूचित कर दिया कि इसे प्रान्तिक सरकार की ओर से आर्थिक सहायता की आवश्यकता नहीं है। अत इसे आर्थिक सहायता देने के लिए 1896 97 के बजट में कोई व्यवस्था नहीं की जा रही है।

फिरोजशाह की सलाह पर विश्वविद्यालय की सीनेट ने 27 जुलाई, 18 को सरकार को एक आवेदन पत्र भेजा। गोखले ने भी फिरोजशाह की सलाह का समर्थन किया। इस आवेदन पत्र में आग्रह किया गया था कि सरकार विश्वविद्यालय को आर्थिक सहायता बंद करने के निर्णय पर पुन विचार करे। फिरोजशाह ने कहा कि विश्वविद्यालय ने आर्थिक सतुलन तो प्राप्त कर लिया, पर कुछ सुधार बहुत ही आवश्यक हैं और ये सुधार करने की शक्ति विश्वविद्यालय में अभी नहीं है। आवेदन पत्र में यह भी कहा गया था कि विश्वविद्यालय को अपना पक्ष का निवेदन किए बिना सरकार का उसकी आर्थिक सहायता बंद करना उचित नहीं है।

फिरोजशाह जानते थे कि इस प्रश्न पर सरकार ने निश्चय कर लिया है। वह टस से मस नहीं होगी। परन्तु उन्होंने जो शिक्षा पाई थी उससे यह सीखा कि अंग्रेजों की सफलता का कारण यह है कि हारने पर भी अपनी पराजय स्वीकार नहीं करते। उनकी इच्छा थी कि सीनेट भी इतनी जल्दी निरुत्साहित न

स्थिति निराशाजनक ही थी, परन्तु उन्हे आशा थी कि सीनेट के सदस्य उत्साह व हिम्मत से काम लेंगे।

जब 17 अगस्त को पूना मे लजिस्लेटिव कौंसिल की बठक हुई तो फिरोजशाह ने सरकार की आर्थिक सहायता को कम कर देने की नीति की जबरदस्त आलोचना की।

19वीं शताब्दी के अन्तिम दस वर्षों मे दक्षिण अफ्रीका म बसे भारतीयो से दुव्यवहार की ओर भारत के लोगो का और दूसरे देश म बसे भारतीया का ध्यान गया। प्रारम्भ मे तो इस दुव्यवहार की घटनाए एक-आध ही हुआ करती थी परन्तु शीघ्र ही दक्षिण अफ्रीका के देशो मे जिनम अग्रेज भी थे, और बोअर भी भारतीयो पर अन्याय और अत्याचार करन की एक प्रकार से होड सी लग गई। इस अपमानजनक व्यवहार का विस्तार से वत्तान्त करना दुखदाई है और लाभप्रद भी नही है। दक्षिण अफ्रीका मे बसे हुए भारतीय बहुत परिश्रमी और कानून का पालन करने वाले थे। इनका अपराध यही था कि वे मितव्ययी थ। इन लोगो पर किए गए अत्याचार की कहानी अग्रेज साम्राज्यवाद के इतिहास मे सबसे अधिक निन्दनीय परिच्छेद है।

दक्षिण अफ्रीका म भारतीय समुदाय चारो ओर से किए जाने वाले अत्याचारो से चिंतित हो उठा और उन्होने अपने बचाव के लिए अपना सगठन करन की ठानी। इस काय के लिए उन्होन एक ऐसा नता चुना जिसके समान भारत म तो क्या किसी और देश म भी दूसरा नेता पद नही हुआ। यह नेता थे मोहनदास करमचन्द गाधी। अपने देशवासियो पर होने वाले अत्याचार को देखकर इनका हृदय पसीज गया। इन्होने वकालत से होने वाली अच्छी खासी आय को लात मारी और अपना जीवन दक्षिण अफ्रीका मे बसे हुए भारतीयो की सेवा के लिए अर्पित कर दिया। गाधीजी का लक्ष्य था इन भारतीयो को वही अधिकार दिलाना जो कि अंग्रेजी साम्राज्य के दूसरे नागरिको को प्राप्त थ। दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने गाधीजी को बहुत कष्ट दिए और उनका अपमान भी किया। कोई साधारण व्यक्ति होता तो इस अत्याचार के सामने घुटने टेक देता, परन्तु गाधीजी उसी मिट्टी के बने थे जिसके कि वीर पुरुष बनते हैं। एक बार डरबन के मुख्य बाजार मे गोरो ने

गाधीजी को ठोकरें मारी, उनके सिर की टोपी उतार ली तथा उन पर कोडे लगाए। उन पर सडी मछली और गदी वस्तुए फेंकी गई जिससे उनकी आख पर चोट लगा और कान पर घाव हो गया। पुलिस किसी तरह उन्ह एक भारतीय के घर ले गई। क्रोधा मत्त गोरो की भीड न मकान पर घेरा डाल दिया। पुलिस ने गाधीजी को का स्टेवल की वर्दी पहनाई और भीड का चकमा देकर उन्ह बचाकर थाने ले गए। गाधीजी इस अपमान और सक्टो से बिलकुल नही घबराए। उनके मन म ता जेल का भी भय न था। उ होन बहुत साहस और दृढ निश्चय स सघर्ष जारी रखा और अग्रेजी सरकार के औपनिवेशक विभाग और भारत सरकार को निरन्तर आवेदन पत्र भेजते रहे। इन आवेदन पत्रा म गाधीजी ने सरकार की दुबलता और उदा-सीनता की ओर ध्यान दिलाया जिसके कारण दक्षिणी अफ्रीका के देश भारतीया पर अ यायपूण कानून लागू कर रहे थे। उन्होंने इस अत्याचार के विरुद्ध प्रचार जारी रखा। और भारतवासियो से सहानुभूति और सहायता की अपील की। अगस्त 1895 मे गाधी जी ने डरबन के भारतीय समुदाय की ओर से फिराजशाह को एक पत्र लिखा। इस पत्र म उन्होने फिरोजशाह से अपील की कि आप अप्र वास विधान सशोधन कानून के विरोध म जिसे नेटाल की पार्लियामेंट ने पास कर दिया है, हमारी सहायता करें। पत्र के शीषनामे म गाधीजी को ईसाई सभा का, जा कि एक गापनीय सस्था थी तथा लदन शाकाहारी सोसोइटी का एजेण्ट बनाया गया था।

बाद मे गाधीजी दक्षिण अफ्रीका स्थित भारतीयो की सहायता की याचना के लिए स्वय भारत आए। वह देश भर मे घूमे और उन्होंने जनता का ध्यान दक्षिण अफ्रीका स्थित भारतीयो की समस्याओ की ओर आकर्षित किया। बम्बई के लोगो ने भी गाधा जी का भाषण सुना। यह सभा 26 सितम्बर 1896 को हुई फिरोजशाह सभापति क पद पर विराजमान थे। उन्होने ने इस दुबले-पतले काठियावाडी नवयुवक के साहस उसकी योग्यता महान निपुणता और दृढ प्रतिज्ञा की प्रशमा की। आगे चलकर गाधीजी की तपश्चर्या और रहस्यवाद से भारत के हर धम और श्रेणी के लाग प्रभावित हुए। पर तु उस समय उन्हे कोई नही जानता था। इस सभा म एक प्रस्ताव पास हुआ जिसम सभापति को यह अधिकार दिया गया कि वह भारत मत्री का आवेदन पत्र भेजें। आवेदन पत्र मे दक्षिण अफ्रीका

स्थित भारतीयों के प्रति होने वाले अन्याय और उनकी कठिनाइयों की ओर भारत-मंत्री का ध्यान आकर्षित किया जाए। इसका वृत्तान्त पहले भी कई आवेदन पत्रों में किया जा चुका है। इन्हें दूर करने की याचना की जाए।

इस प्रस्ताव के अनुसार फिरोजशाह ने भारत मंत्री को एक लम्बा चौड़ा आवेदन पत्र भेजा। इस आवेदन पत्र में फिरोजशाह ने उन अन्यायपूर्ण कानूनों का उल्लेख किया जो दक्षिण अफ्रीकी देश भारतीयों पर लाद रहे थे। फिरोजशाह ने लिखा कि इन देशों के विकास में भारतीय प्रवासियों का बहुत हाथ है, परन्तु ये अन्यायसंगत कानून भारतीयों को गुलाम बना देना चाहते हैं। यह अन्याय इतना स्पष्ट था कि इसके लिए प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं थी। इंगलैण्ड में कुछ लोग तो अवश्य ऐसे थे जो यह समझते थे कि ब्रिटिश सरकार का इस सम्बन्ध में उत्तरदायित्व है। इंगलैण्ड के समाचार पत्र 'टाइम्स' ने कुछ सशक्त लेख छापे और इन बेचारे अधिवासियों के आन्दोलन के पक्ष का समर्थन किया।

अध्याय 17

इगलैंड की यात्रा

1897 1898

1897 के आरम्भ मे फिरोजशाह का स्वास्थ्य बिगडने लगा। कुछ समय से वह गुर्दे की बीमारी से पीडित थे और उनके लिए विश्राम करना आवश्यक हो गया था। इसलिए वह मथेरन चले गए।

अप्रल मे लोगो के आग्रह पर वह लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य तो बन गए परन्तु शीघ्र ही इस बात का पता चल गया कि वह नियमित रूप से कौंसिल की कार्यवाही म भाग नही ले पाएगे। नगरपालिका मे भी म्युनिसिपल सचिव की दाहिनी ओर उनका स्थान प्राय खाली ही रहता। प्रारम्भ मे तो उन्होने अपने रोग की चिंता नही की, परन्तु जब दद बढ गया तो लोगो के आग्रह पर उन्होने डाक्टर को सलाह के लिए बुलाया। आश्चय की बात है कि वह डाक्टरी जाँच से भी बहुत घबराते थे। डाक्टरी जाँच से पता चला कि उन्हे पथरी की बीमारी है और उसके लिए आपरेशन आवश्यक है। बम्बई मे उस समय महामारी का प्रकोप था और आपरेशन करवाना जोखिम का काम था। उन्हे सलाह दी गई कि वह इगलड जाकर अपना आपरेशन कराए। थोडी सी आनाकानी के बाद उन्होने यह सलाह मान ली।

आपरेशन सफल रहा और उन्हे कुछ माह के लिए पूण विश्राम के लिए कहा गया। उन्हे विश्राम की आवश्यकता भी थी और इसके लिए वह अनिच्छुक भी न थे। उन का मन बहुत क्रियाशील था, उन्हें निठल्ले बठना अखरता था। परन्तु इस विश्राम से उन्हें बहुत लाभ हुआ। मध्य अगस्त म वह चलने फिरने

लायक हो गए। लदन से सीधे वह ब्रसलस (Brussels) गए, वहा से थोड़े दिन ल्यूसन ठहरकर जिनेवा पहुचे। ल्यूमन मे डा० खोरी ने जिन्होने बीमारी मे इनकी बहुत सेवा की थी उनसे विदा ली और बम्बई वापस आ गए।

इस विदेश यात्रा मे भी फिरोजशाह के रहन सहन का ढग वसा ही था जसा कि बम्बई या मथेरन मे। जहा भी वह जाते रुपया पसा पानी की तरह बहाते और खूब ठाठ से रहते। सफर मे उनके साथ ढेरो सामान होता और वह अच्छे से अच्छे होटलो मे ठहरते। होटल म ठहरने पर किसी फैशनेबल दुकान से नाई को बुलाकर दाढ़ी बनवाते। स्त्रियो की भाति उन्ह पाउडर क्रीम इत्यादि का शौक था और वह शौक जा भरकर पूरा करते और बहुमूल्य वस्त्र पहनते। छोटे-छोटे स्थानो मे जहाँ कि पयटक लोग सभ्य समाज की परिपाटी को तिलाजलि दे देते हैं, वहाँ भी जब यह भोजन करने जाते तो उचित वेशभूषा में जाते। कोई भी स्थान हो कसा भी समय हो इन की आदतें न बदलती। वह सोकर बहुत दर से उठते। नाश्ते के पहले काफी समय सजने सवरने मे लगाते। सैर-सपाटे मे उनकी रुचि नही थी। ऐतिहासिक सस्थाओ के प्रति वह उदासीन थे। अपनी यात्राओ म वह अकेले ही रहते और लोगो से कम ही मिलते। खाना खाने से पहले उन्ह लम्बी सैर का शौक था। भोजन के मामले मे वह नाजुक मिजाज थे। विदेश जाकर भी उनकी यह आदत नही गई। किसी अपरिचित स्थान का पानी, चाहे वह शुद्ध भी हो, वह छूते भी नहीथे। जहा भी जाते अपना चाय और तमाखू एक बक्से मे साथ लेकर चलते। इन वस्तुओ को साथ ले जाने म काफी दिक्कत पडती और आयात कर भी दना पडता। परन्तु फिरोजशाह को इसकी बिलकुल ही चिन्ता न होती। भोजन करने के पश्चात वह अपने कमरे म चले जाते और मजे से सिगार पीते। कुर्सी के समीप ही पत्रो का ढेर या कोई रोचक पुस्तक पड़ी होती। थैकरे और डिकन्स के उपन्यास और एक फटीपुरानी बाइबल हमेशा उनके साथ रहती।

12 फरवरी को वह बम्बई लौटे। बलार्ड पायर पर उनके मित्रो न उनका स्वागत किया। उनका स्वास्थ्य पहले से काफी अच्छा दिखाई दे रहा था। आपरेशन से उनका रोग दूर हो गया था और पूर्ण विश्राम से उनमे फिर शक्ति आ गई थी। लोगो को उनके लौटने पर बहुत प्रसन्नता हुई। समाचार पत्रों न भी हर्ष प्रकट

किया। पिछले वप कई दुखदाई घटनाए हुई थी। कप्तन रैंड और लेफ्टिनेंट आयस्ट की हत्या कर दी गई थी। बाल गगाधर तिलक पकड लिए गए थे और उन्हे जेल भेज दिया गया था। दक्षिण म हिंसात्मक विस्फाट के कारण सरकार ने दमन किया और बहुत से लाग पकड लिए गए। लोग निराश थे और नेतागण असहाय। एक पत्रकार ने इस स्थिति पर टीका टिप्पणी करत हुए लिखा —

' नता लोगो की समझ म नही आ रहा था कि क्या करें। लम्बी बहसें होती परन्तु वे किसी निष्कष पर नही पहुच पात। स्थिति का सामना करने के लिए कोई भी कदम उठान म हिचकिचाते। उस समय उन्ह फिरोजशाह की अनुपस्थिति बहुत अखरती। वे समझते थे कि केवल फिरोजशाह ही ऐसी स्थिति मे लागो मे विश्वास उत्पन्न कर सकत हैं और उनका पथप्रदशन कर सकते हैं। फिरोजशाह के बिना बम्बई की दशा वसी ही था जसी कि ग्लडस्टान के बिना इगलड की लेबर पार्टी की थी।

'यह तुलना पूणत उपयुक्त है। इम महान ऐतिहासिक लेबर पार्टी को अपने प्रख्यात नता के रिटायर हान पर जिन कठिनाइयो और सकटो का सामना करना पडा, वही स्थिति आज बम्बई के नागरिका के सामने भी है। इस अनुभव से यही शिक्षा मिलती है कि फिरोजशाह के आगमन से केवल बम्बई नगर के लोगा को ही नही बल्कि सार प्रदश के लागो को दिलासा मिलेगी और उनमे विश्वास उत्पन्न होगा।"

14 फरवरी, 1898 का बम्बई लेजिस्लेटिव कौंसिल की मीटिंग हुई जिसम इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बिल प्रथम वाचन के लिए प्रस्तुत हुआ। लाड सैंडहर्स्ट सभापति के आसन पर थे। फिरोजशाह भी कौंसिल की कायवाही मे भाग लेने आए थ। लाड सैंडहर्स्ट ने बडे सुन्दर शब्दा मे उनका स्वागत किया। बिल पर बहस आरम्भ हुई। बिल मे यह व्यवस्था की गई थी कि बम्बई नगर का पुन निर्माण करने के लिए इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट कायम किया जाए जिसे बहुत ही विस्तृत अधिकार हो। लोगो का विचार था कि कई कारणो से नगरपालिका यह काय करने म असमथ है। प्लेग के कारण सारा नगर उजड गया था। पहली बार अधिकारियो को पता चला कि बम्बई के अधिकाश नागरिक कितनी गदी बस्तियों मे जीवन बिता रहे है। नगर एक मर-

पद बन गया था जिसे देख कर हृदय दहल उठता था। बिल में यह व्यवस्था की गई थी कि ट्रस्ट का कुछ खर्चा सरकार और कुछ खर्चा नगरपालिका देगी।

फिरोजशाह इंगलैंड से दो-तीन दिन पहले ही लौटे थे। इससे वह बिल की सूक्ष्मताओं को जानने में असमर्थ थे। फिर भी विरोधी दल की ओर से उन्होंने बिल का समर्थन किया। कुछ लोगों का विचार था कि बिल नगरपालिका के अधिकारों पर हमला है। फिरोजशाह इस विचार से सहमत नहीं थे। वह म्युनिसिपल कानून से पूर्णत: परिचित थे। वह जानते थे कि इस कानून में ऐसी व्यवस्था है जिसमें असाधारण और आपत्तिजनक स्थितियों में सरकार यदि चाहे तो सुधार का कार्य नगरपालिका को न देकर किसी और संस्था को दे सकती है।

बिल प्रवर समिति को सौंप दिया गया। समिति समझती थी कि समय तुरन्त कार्यवाही करने का है। थोड़े ही दिनों में उन्होंने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी। बिल के ऊपर दूसरा वाचन मार्च में हुआ। इस अवसर पर लम्बी-चौड़ी बहस नहीं हुई। फिरोजशाह ने अपने भाषण में बम्बई नगर निर्माण के कार्य का स्वागत किया। नगरपालिका का संविधान बनाने में उन्होंने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। सब लोग उन्हें नगरपालिका का नेता मानते थे। फिरोजशाह यह कभी मानने को तैयार नहीं थे कि नगरपालिका में कुछ गड़बड़ है। उनकी यह धारणा थी कि बिल के आने से बम्बई के नगर स्वशासन के नाश का युग आरम्भ हो गया है।

दास आत्माराम पुराने सनातनी हिन्दू तथा एक सुसंस्कृत व्यक्ति थे। कई अवसरों पर इन दोनों ने भी सरकार से लोहा लिया।

कौंसिल में वादविवाद मुख्यत बिल की लटठमार' धाराओं पर हुआ। सरकारी सदस्य विरोधी दल के आक्रमण के सामने कंधे से कंधा लगाकर डटे रहे और यह धाराएं लगभग मूलरूप से ही पास कर दी गई। विरोधी दल की प्रबल अधिवक्तता के कारण सरकार को कुछ महत्वपूर्ण संशोधन मानने ही पड़े। फिरोजशाह के समर्थकों तथा उनके विरोधियों ने भी इनके प्रयत्नों की सराहना की। समाचार पत्र इंडियन स्पेक्टेटर' ने लिखा कि प्रवर समिति के सामने तथा दूसरे वाचन के अवसर पर फिरोजशाह ने सरकार को बिल में महत्वपूर्ण संशोधन करने पर राजी कर लिया है। इन संशोधनों के कारण बिल की रूपरेखा पहले से अधिक आकर्षक हो गई। फिरोजशाह की इस सफलता पर बम्बई के नागरिकों को गर्व हुआ।

अध्याय 18

फिरोजशाह और गोखले

1901

फिरोजशाह दूसरी बार इम्पीरियल कौंसिल के सदस्य निर्वाचित हुए परन्तु अस्वस्थ होने के कारण 1901 के आरम्भ में ही उन्हें पदत्याग करना पड़ा। लार्ड कर्जन ने उनका त्यागपत्र स्वीकार करते समय लिखा कि मुझे कौंसिल में फिरोजशाह की उपस्थिति से बहुत प्रसन्नता हुआ करती थी और मुझे बहुत दुख है कि अस्वस्थ होने के कारण फिरोजशाह सदस्यता का भार नहीं निभा सकेंगे।

फिरोजशाह के स्थान पर दूसरा सदस्य भेजने का प्रश्न उठा। यदि देश में कोई ऐसा व्यक्ति था जिसमें फिरोजशाह के कार्यभार को सम्भालने का सामर्थ्य था तो वह गोपालकृष्ण गोखले थे। गोखले ने इस पद पर निर्वाचन के हेतु फिरोजशाह से सहायता की याचना की।

15 जनवरी 1901 को गोखले ने फिरोजशाह को पत्र लिखा। इस में उन्होंने अपनी आशाएं और महत्वाकांक्षाएं खोलकर रख दीं। यह पत्र मानवस्वभाव की दृष्टि से बहुत रोचक है। गोखले ने लिखा कि मैंने अपने यौवन का अधिकांश भाग फर्गुसन कालेज की सेवा में अर्पित किया है और अब कालेज से रिटायर होने वाला हूँ तथा अपना शेष जीवन इंगलैंड और भारत में राजनीतिक कार्य में बिताना चाहता हूं। मेरा विचार है कि जब तक देश के युवक दादाभाई नारोजी की तरह, जिन्होंने पिछले 50 वर्षों से देश के उत्थान के लिए कार्य किया है, अपना समय और शक्ति जनहित के कार्यों में नहीं लगाते, उस समय तक प्रगति

सम्भव नही है । इतना ही नही, यह भी डर है कि दादाभाई नारोजी द्वारा किया गया महान काय भी कही विफल न हो जाए । गोखले ने अपने पत्र में लिखा कि पत्नी की मृत्यु से पारिवारिक जीवन से मेरा मुख्य नाता प्राय टूट चुका है। मैंने कालेज में बडी निष्ठा से कार्य किया है और अधिक प्रयत्न किए बिना राजनीतिक क्षेत्र मे भी उतनी ही निष्ठा से काय कर सकता हू। पत्र मे उन्होने यह भी लिखा कि मेरी आमदनी 125 रुपये प्रतिमास है कालेज से 20 रुपये प्रतिमास मुझे पेन्शन भी मिला करगी । दानो आमदनियों का मिलाकर मेरा निर्वाह अच्छी तरह स हो जाया करेगा। अब मेरी इच्छा है कि मुझे देशसेवा का अवसर मिले । परन्तु जब तक आप का स्वास्थ्य साथ देता है तब तक आप बम्बई प्रदेश की ओर से इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्य बने रहे । आप की महान योग्यता और अद्वितीय सवाओ के कारण उनसे कोई होड नही लगा सकता, परन्तु मैंने सुना है कि कुछ व्यक्तिगत कारणो से आप परिषद की सदस्यता से परित्याग कर रहे हैं। मेरी इच्छा है कि आप थोडे समय बाद ही त्यागपत्र भेजें । गोखले का पत्र इस प्रकार था —

"मै आशा कर रहा था कि कौसिल की सदस्यता के चुनाव के लिए आप दोबारा खडे हो । यदि आप ऐसा करन म असमथ हैं तो कम से कम वतमान अवधि तक जा 1902 तक चलगी सदस्यता का भार उठाए रखें । इस बीच प्रादेशिक कौसिल म कदाचित मैं उपयोगी काय कर सकू । बम्बई प्रदेश म बहुत से एसे व्यक्ति हैं जा आपके पद चिह्नो पर चलकर जनहित कार्यो म लगे हुए हैं और आपके स्थान पर निर्वाचन के योग्य हैं। यदि मुझे थोडे समय के लिए काय का अवसर दिया गया तो मुझे आशा है मेरी गणना भी इन व्यक्तियो मे होने लगेगी।

आपका इश्वरीय देन है और आप मे उपार्जित गुण भी हैं, प्रतिभा है और व सब विशेषताए हैं जो किसी भी नता के लिए अनिवाय हैं। इन गुणों के कारण सभी लाग यह समझत है कि आपकी बराबरी करना तो दूर रहा, आपकी महानता के निकट पहुचना भी सम्भव नहीं।'

फिराजशाह के स्थान के इच्छुक दूसरे उम्मीदवारो की बात और थी । जहा

तक योग्यता का सम्बन्ध है, इन लोगो म परस्पर विशेष अन्तर नही था। गोखले ने फिरोजशाह म सहानुभूति और प्रोत्साहन की प्राथना की। गोखले भली भाति जानते थे कि फिरोजशाह के स्थान व महत्व को देखते हुए अभी मैं अपरिपक्व हू परन्तु सन् 1897 से उन्हें जिस मनोव्यथा को झेलना पडा था, उससे कम आयु मे समय से पहले ही उनमे अनुभव और विवेक आ गया था। (सन् 1897 मे गोखले ने सरकार पर प्लेग रोक नियमो के लागू करने के सम्बन्ध म आरोप लगाए थे, परन्तु बाद मे उन्हें स्वीकार करना पडा कि ये आरोप निराधार हैं और उन्ह वापस लेना पडा।) दूसरे नेताओ की अपेक्षा युवावस्था मे राजनतिक काय आरम्भ करने से लाभ ही थे। गोखले ने फिरोजशाह को आश्वासन दिया कि याचना का अभिप्राय केवल व्यक्तिगत महत्वाकाक्षा की पूर्ति करना नही है। इसका कारण और है। उन्होंने लिखा —

'1897 मे कुछ दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओ मे भाग लेने के कारण मुझ पर आलोचना की आधी टूट पडी। हाउस ऑफ कामन्स मे मुझे नीच कूटसाक्षी की उपाधि दी गई। इन शब्दों ने मेरे हृदय मे आग लगा दी। जिस रात मैंने य शब्द पढे, उसी समय निश्चय कर लिया कि कालेज के प्रति अपने कत्तव्य से मुक्त होकर मैं अपना जीवन इगलैंड मे भारत के राजनीतिक ध्येयो की प्राप्ति के हेतु अपण कर दूगा। अनजाने मे ही मुझ से भूल हो गई थी जिसके कारण देश के हित को हानि हुई। मैंने इस क्षति की पूर्ति के लिए सौगन्ध खाई थी। मेरा विचार है कि थोडे समय के लिए वाइसराय की कौंसिल की सदस्यता से मुझे इस काय मे बहुत सहायता मिलेगी।

'मेरे विरोधी मुझे हराने के लिए 1897 के दुखदायी काड को बार बार सामने लाएगे, परन्तु स्वय लाड सन्डहस्ट का साक्ष्य और 1897 के बाद बम्बई और इम्पीरियल कौंसिल मे मेरे काय मरी निर्दोषिता सिद्ध करेंगे। इससे मुझे अपने आलोचकों का मुह बद करने मे सहायता मिलेगी। मरी भूल के कारण सर विलियम वडरवन, मि० ह्योम और दादाभाई का अपमान हुआ था। यदि मैं इगलैंड मे कुछ उपयोगी काम कर सका तो इन महानुभावो को भी प्रसन्नता होगी।"

पत्र के अन्त मे, गोखले ने कहा कि मैंने सारी बातें बिना किसी सकोच के और साफ साफ लिख दी हैं। मुझे आशा है कि मेरे पत्र का गलत अर्थ नही लगाया जाएगा। राजनीतिक जीवन मे मैं आप के प्रति बहुत आभारी हू और मैंने सोचा कि मैं अपनी अभिलाषाए और हृदय के घाव, आपके (फिरोजशाह के) सामने खोलकर रख दू। आशा है कि आप उन्ह ठुकराएगे नहीं।

फिरोजशाह और उनके कुछ मित्रो की सहायता से, जिनमे टाइम्स ऑव इंडिया के टी० जे० बनेट (जिन्ह बाद मे सरकार ने 'सर' की उपाधि दी) थे, गोखले फिरोजशाह के स्थान पर अप्रल म वाइसराय की कौंसिल के सदस्य निर्वाचित हुए। एक समय वामन जी पेटित और इब्राहिम रहीमतुल्ला न भी चुनाव लडन की सोची, परन्तु इन लोगो को अपना नाम वापस लेने के लिए राजी कर लिया गया तथा गोखले का निर्वाचन सवसम्मति से हुआ।

गोखले से बढकर और किसका चुनाव हो सकता था? यदि फिरोजशाह ने कौंसिल मे एक नई भावना का सचार किया और अपने देशवासियो को निर्भीकता से अपनी आवाज उठाना सिखाया, तो गोखले ने लोगो का रचनात्मक राजनीति का पहला पाठ पढाया। गोखले के नेतत्व के कारण जनता के अधिकारो का विस्तार और स्वतत्रता का माग प्रशस्त हुआ। दोनो नेता अपने-अपन क्षत्रो म पथप्रदशक थे। इन दोना ने एक ऐसे शस्त्र का निर्माण किया जिसके बल से समय आने पर भारत का स्वशासन का अधिकार मिला तथा ब्रिटिश राज्य म बराबर की साझेदारी प्राप्त हुई।

फिरोजशाह समझते थे कि वाइसराय की कौंसिल की सदस्यता त्याग देने से उन्हें कुछ विश्राम मिलेगा। यह उनका भ्रम था। वष के मध्य म एक अभूतपूर्व तूफान उठा जिससे सारे प्रदेश मे हलचल मच गई। सरकार ने महाबलेश्वर की एकात ऊचाई से चुपके से एक बिल लाने की चेष्टा की। देखने मे तो यह बिल सीधा-साधा था, परन्तु वास्तव म प्रदेश की मालगुजारी प्रणाली पर इसका बहुत व्यापक प्रभाव पडता। जब लोगों को इस बिल के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हुआ

तो इस के विरुद्ध ऐसा सघर्ष शुरू हुआ जैसा प्रदेश मे अभी तक देखने मे नहीं आया था। यह बिल था बम्बई भूमिकर विधान सशोधन बिल।

1897 के बम्बई भूमिकर सहिता में यह व्यवस्था थी कि यदि किसी भूमि का भूमापन बदोबस्त हो चुका होता तो उस पर काश्तकार का स्थाई दखल हो जाता। शर्त यह थी कि काश्तकार इस भूमि पर सरकार को भूमिकर दे। इस कानून के अन्तर्गत दखल का अधिकार मारूसी घोषित किया गया था। कुछ स्थितियों में कलक्टर की मजूरी से कोई व्यक्ति यह अधिकार दूसरे को हस्तातरित कर सकता था।

किसानो को सूदखारो के चगुल से बचाने का बहाना करके सरकार सशोधन बिल के द्वारा दखलकारी के हस्तान्तरण के अधिकार को समाप्त करना चाहती थी। बिल में यह व्यवस्था थी कि सरकार द्वारा अपवर्तित भूमि कलक्टर अपनी मरजी (इच्छा) पर किसी भी व्यक्ति को, किसी भी शर्त पर कितने ही समय के लिए सौंप दे। बिल के निर्माता इस आरोप का घोर प्रतिवाद करते थे और उनका कहना था कि उनका अभिप्राय सीधे सादे किसानो को साहूकारो के लोभ का शिकार होने से बचाना है। इनका कहना था कि बिल के विरोधी मूर्ख और नासमझ हैं तथा साहूकारो के हाथो की कठपुतली बने हुए हैं।

आदोलन के नेता भी उतनी ही तीव्रता से बिल के समर्थको का प्रतिवाद करते थे। इनका कहना था कि बिल के बहुत दुष्परिणाम निकलेंगे। इस बिल का अभिप्राय धीरे धीरे सरकारी जमीदारी की नींव डालना है। बिल के विरोधी कहते थे कि यदि मान भी लिया जाए कि भूमि हस्तान्तरण के अधिकार को सीमित करना वाछनीय है, फिर भी किसानो को अल्पकालिक काश्तकार बना देने की आवश्यकता नही दिखाई देती।

बम्बई लेजिस्लेटिव कौसिल का अधिवेशन क्रोध और उत्तेजना के वातावरण में पूना में हुआ। सरकार को इस अधिवेशन में बिल के द्वितीय वाचन का स्वाग रचना था। सरकारी प्रवक्ता बहुत क्रोध में थे। उनके भाषणो का भाव और स्वर ऐसा था जिससे बिल पर शाति से विचार करना असम्भव था। बिल के इचार्ज

सरकारी सदस्य ने अपने भाषण के आरम्भ में कहा कि सरकार बिल पर वास्तविक आलोचना का स्वागत करने को तैयार है, परन्तु इस बिल के विरुद्ध जो भी कुछ कहा और लिखा गया है, वह बिलकुल अप्रासंगिक है। विरोधीपक्ष ने बहुत कठोर भाषा का प्रयोग किया है, परन्तु किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति या संस्था को केवल भाषा द्वारा प्रभावित नहीं किया जा सकता। सरकार को आशा थी कि य महानुभाव जो लोकमत के नेतृत्व का दावा करते हैं, कम-से कम तब के मौलिक सिद्धांतों का पालन करेंगे, परन्तु यह आशा पूरी नहीं हुई। इस आक्षेप को फिरोजशाह सह न सके। जब वह संशोधन प्रस्ताव पेश करने के लिए उठे तो उन्होंने कहा —

माननीय सदस्य के आरोपों से मुझे बहुत दुख हुआ। मनुष्य का स्वभाव है कि हर वादविवाद में उसकी धारणा यह होती है कि उसके विरोधी अतर्कपूर्ण बातें कर रहे हैं। मनुष्य की इस दुबलता को देख चुप रह जाना पड़ता है।"

फिरोजशाह ने संशोधन प्रस्ताव में यह सुझाव रखा गया था कि बिल के ऊपर कुछ अफसरों, संस्थाओं और पढ़े-लिखे व्यक्तियों की राय मांगी जाए। उनका अभिप्राय केवल यह था कि बिल के पास होने में कुछ विलम्ब डाला जाए, जिससे वह बुरी घड़ी कुछ समय के लिए टल जाए। कौंसिल के लगभग 12 सदस्य इस विषय पर बोले। फिरोजशाह ने इनके उत्तर में जो भाषण दिया, वह पूरा एक घंटा चला। फिरोजशाह जानते थे कि वह बाजी हार चुके हैं परन्तु जैसा कि उन्होंने एक दिन पहले बजट पर होने वाली बहस में कहा था ऐसी स्थिति पहले भी कई बार आ चुकी थी। फिरोजशाह ने किसानों की ओर से बोलने के अधिकार की रक्षा की। फिरोजशाह के संशोधन प्रस्ताव के पक्ष में 9 और इसके विरुद्ध 14 वोट पड़े। उन्होंने पहले ही निश्चय किया था कि यदि वहाँ मैं गया तो कौंसिल की कार्यवाही का बायकाट करूँगा। वह उठकर परिषद भवन से बाहर चल दिए। उनके पीछे-पीछे भालचन्द्र कृष्ण, गोकुलदास पारीख, दाजी अबाजी खरे और गोपाल कृष्ण गोखले भी थे। उनके उठने के तुरन्त बाद ही परिषद ने बिल का दूसरा और तीसरा वाचन पूरा कर दिया और बिल कानून बन गया। कुछ क्षेत्रों में इस बात पर काफी नाराजगी प्रकट की गई कि फिरोजशाह और उनके पिछलग्गू

साथी बिल को इस प्रकार पास करने के दिखावे म भाग लेना नही चाहते थे और सदन से वे लोग उठकर चले गए। आज तक किसी ने कौंसिल का इतना अनादर नहीं किया था। अंग्रेज समुदाय और नौकरशाही तो बहुत ही क्रुद्ध थे। उन्हें सबसे अधिक क्रोध फिरोजशाह पर था क्योंकि उन्होंने एक नए ही प्रकार के प्रतिवाद का प्रारम्भ किया था।

अध्याय 19

फिरोजशाह और कांग्रेस

1902 1904

भूमिकर बिल सम्बधी वादविवाद के कारण बहुत कोध और कटुता का वातावरण पैदा हो गया था। इस कोध और कटुता के प्रतिक्रियास्वरूप बिल के पास हो जाने के बाद राजनतिक जीवन मे मदी आ गई। सितम्बर 1902 मे प्रादेशिक राजनैतिक जीवन मे फिर थोडा सा उफान आया। यह उफान लाड किचनर के स्वागत के प्रस्ताव से सम्बधित था।

लाड किचनर ने बोअर युद्ध मे भाग लिया था और बहुत खून खराबी के पश्चात वह विजयी हुए थे। ओमडरमन मे जो दक्षिण अफ्रीका मे है, उन्होंने बोअर सेना को पछाडा था। इससे उन्हें ओमडरमन का विजेता कहा जाता था। कबराजी 'रास्तगुफ्तार समाचारपत्र के बहुत पुराने सम्पादक थे। उन्होंने सुझाव दिया कि बम्बई नगरपालिका को जो देश की सबसे पहली नगरपालिका है, ब्रिटिश साम्राज्य के इस महान सनिक का अवश्य ही सम्मान करना चाहिए। उन्होंने नगरपालिका के सामन एक प्रस्ताव पेश किया कि जब लाड किचनर बम्बई मे आए, नगरपालिका उन्हे एक मानपत्र भेंट करे।

फिरोजशाह बराबर कायपालिका के नियमो का पूरा पूरा पालन करते और पूर्वोदाहरण पर चलते। यद्यपि वह समझते थे कि लाड किचनर मे एक महान सेनापति के गुण हैं, फिर भी उन्होने कबराजी के प्रस्ताव का विरोध किया। उनका

कहना था कि प्रथानुसार नगरपालिका केवल सम्राट के प्रतिनिधि, राज्य परिवार के सदस्य अथवा उन व्यक्तियों को मानपत्र भेंट करती है जिन्होंने नगर की असाधारण सेवा की हो। उन्होंने कहा कि आज तक नगरपालिका ने भारत के किसी भी प्रधान सेनापति को मानपत्र भेंट नहीं किया। लार्ड नेपियर अंग्रेज सेना के वीर अफसर थे, लार्ड राबर्ट भी एक प्रतिष्ठित सेनापति थे। सभी लोग इन दोनों सेना पतियों को चाहते थे और इनका आदर भी करते थे परन्तु इनकी विदाई के समय कोई मानपत्र भेंट नहीं किया गया। फिरोजशाह के तक नगरपालिका को जच गए। कबराजी के प्रस्ताव पर मतदान हुआ और अधिक बहुमत से यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया गया।

कारपोरेशन का यह निर्णय उपयुक्त ही था। अंग्रेज लोग भारत को ब्रिटिश सम्राट के मुकुट का सबसे अधिक चमकीला रत्न कहते थे। परन्तु यह उक्ति सर्वथा पाखण्डपूर्ण थी। ब्रिटिश साम्राज्य में भारत का कोई स्थान नहीं था। लार्ड किचनर की विजय ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे देशों के लिए कैसी भी क्यों न रही हो, भारत के लिए उसका कोई महत्व नहीं था। इसलिए नगरपालिका या जनता से यह आशा करना कि लार्ड किचनर के आगमन से उन्हें बहुत हर्ष होगा मूर्खता थी।

कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन मद्रास में होना निश्चित हुआ था। कई लोगों ने फिरोजशाह से आग्रह किया कि वे इस अधिवेशन में जरूर भाग लें। लोगों ने कई बार उनसे यह निवेदन किया था कि वे मद्रास पधारें और जनता का पथप्रदर्शन करें। जिन व्यक्तियों ने उनसे मद्रास पधारने की याचना की, उनमें वीर राघवाचार्य भी थे जो मद्रास प्रदेश के मुख्य कांग्रेसियों में गिने जाते थे। उन्होंने फिरोजशाह से कहा कि आपका मद्रास आना बहुत जरूरी है क्योंकि वहां कांग्रेस आंदोलन के नेतृत्व के लिए कोई उपयुक्त नेता नहीं है। उन्होंने फिरोजशाह को बताया कि जब से कांग्रेस पिता मद्रास में नहीं रहे तब से आन्दोलन ठीक ढंग से नहीं चल रहा। जब तक वह वहां थे उनकी आज्ञा कार्यकर्ताओं के लिए कानून के समान थी। वे लोगों को उलाहना दे लेते, बुरा भला भी कह लेते और किसी समय डरा धमका भी लेते परन्तु लोग इसका बुरा नहीं मानते थे बल्कि उनकी डांट फटकार को सम्मान समझते थे। अब नवयुवक समुदाय बेचैन था और लगाम छुड़ाना चाहता

था। हर प्रकार के उलूल जलूल प्रस्ताव रखे जा रहे थे। वातावरण से ऐसा मालूम पड़ता था कि आंधी आने वाली है। कांग्रेस अपनेपुराने विश्वासपात्र नेताओं को पुकार रही थी।

फिरोजशाह ने लोगो का आग्रह स्वीकार कर लिया और मद्रास चले गए। लालमोहन घोष का राजनीतिक जीवन बहुत प्राजल रहा था, परन्तु अब वह कई वर्षों से रिटायर हो गए थे। लोगो के आग्रह ने इन्हें राजनीतिक संन्यास छोड़ने पर विवश कर दिया और यह कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। सभापति के आसन से दिया जाने वाला उनका भाषण अधिवेशन के कुछ दिन पहले ही छप चुका था, परन्तु फिरोजशाह को इस भाषण की प्रति नहीं मिली थी। फिरोजशाह को पता चला कि अध्यक्ष महोदय ने अपने भाषण में कांग्रेस के पुराने नेताओं, विशेषत फिरोजशाह पर कुछ छींटे कसे हैं। अध्यक्ष महोदय ने अपने भाषण में यह शिकायत की थी कि इन पुराने नेताओं ने कांग्रेस संस्था पर स्वेच्छाचारी नियन्त्रण बना रखा है। फिरोजशाह को यह भी बताया गया कि अपने भाषण में श्री घोष ने उन नवयुवकों को, जो कि नेता बनने के इच्छुक थे, चेतावनी दी है कि वे गुटबाजी से दूर रहें और इस बात का विशेष ध्यान रखें कि स्वेच्छाचार के कारण संस्था के साधारण सदस्य उन्हें तानाशाह न समझने लगें। इस भाषण मे घोष ने गिब्बन का उदाहरण दिया था जिन्होंने प्राचीन रोम के एक सामन्त के सम्बन्ध में कहा था कि उसकी भाषा तो देशभक्तों जैसी है परन्तु वास्तव में वह तानाशाहों का अनुसरण कर रहा है।

जब वह भाषण फिरोजशाह के हाथ लगा तो उन्होंने निश्चय किया कि वह मनोनीत अध्यक्ष के भाषण को निष्फल बना देंगे। इस अभिप्राय से उन्होंने सभापति के स्थान के लिए घोष का नाम प्रस्तुत किया। उन्होंने घोष को उनकी योग्यताओं के कारण श्रद्धांजलि अर्पित की। फिरोजशाह ने कहा कि इंगलैंड के चुनाव मे दौड़धूप करने के बाद घोष ने राजनैतिक संन्यास ले लिया था जिसके कारण उनकी विचारधारा समय की वास्तविकताओं से दूर हो गई है। फिरोजशाह ने कहा —

"प्रतिनिधि भाइयो, उदाहरणार्थ श्री घोष की धारणा है कि मैं, जो कि एक नरम दिल पारसी हू, एक तानाशाह बन गया हू । उनके विचार म मेरे ऊपर एक महान इतिहासकार की उक्ति लागू होती है, जिसने रोम के एक सामन्त के बारे मे लिखा था कि बात तो वह देशभक्त जसी करता था, परन्तु उसका काय करने का ढग तानाशाहो जसा था । मेरे जसे नरम दिल पारसी की इससे अधिक निन्दा और क्या हो सकती है ? सज्जनो, और उनका कहना है कि कांग्रेस मे भीषण गुटबदी है । उनकी यह धारणा यथाथ पर आधारित नही है क्योकि कांग्रेस आदोलन से उनका सम्पक काफी समय से नही रहा है । उन्होने यह धारणा केवल समाचारपत्र पढकर ही कायम की है । अब वह राजनतिक सन्यास छोड चुके है, इससे मैं उनसे यह कहूगा कि हम मे आपस म छोटे मोटे मतभेद अवश्य हैं और यह मतभेद चलते आए हैं तथा आगे भी चलते रहगे, परन्तु ये मतभेद व्यक्तिगत स्वाथ पर कभी भी आधारित नही रहे हैं ।"

फिरोजशाह की इस आकस्मिक चुटकी से सभा ने घोष के आरोपो को हसकर उडा दिया । श्रोतागणो को घोष के भाषण की प्रतिक्रिया मिल चुकी थी । घोष इस पैंतरे से हक्के बक्के रह गए । फिरोजशाह ने अपनी चालाकी से इन्हे मात दे दी थी । श्री घोष को फिरोजशाह की यह चाल बहुत अखरी । यह स्वाभाविक ही था परन्तु उन्होंने इसका बुरा नही माना । उन्होने अपने भाषण मे फिरोजशाह की उक्तियो का हवाला देते हुए कहा

"यदि मैं भ्रातिग्रस्त हू तो मुझे केवल यही सात्वना है कि कलकत्ता और मद्रास के मुख्य समाचारपत्र भी इस भ्रम मे हैं ।

इस घटना पर बहुत चर्चा होती रही । कांग्रेस पर फिरोजशाह के निरकुश नियत्रण के कारण कुछ लोग बडबडाते रहते थे । अध्यक्ष के भाषण म लोगो को इस शिकायत की अभिव्यक्ति मिली । घोष की फटकार का अभिप्राय किस हद तक फिरोजशाह की प्रतिष्ठा पर प्रभाव डालने का था, यह कहना सम्भव नही । फिरोजशाह ने स्थिति को बहुत ही चातुर्य से सम्भाला और मनोनीत अध्यक्ष को लेने के देने पड गए । उनके विरोधियो का गुस्सा परिहास म टल गया । उनके आलोचको म

उनके मित्र भी थे और दुश्मन भी परन्तु, इन लोगों को फिरोजशाह की चतुराई से बहुत आनन्द आया। इन लोगों को पता लग गया कि वादविवाद और युक्ति में फिरोजशाह की बराबरी कोई नहीं कर सकता।

फिरोजशाह का कांग्रेस के जन्म से ही उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध था। शीघ्र ही उन्होंने इस संस्था पर पूर्ण अधिकार भी बना लिया था। फिर भी उन्होंने कांग्रेस आंदोलन के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं रखा। उनके मित्र व अनुयायी हर वर्ष उनसे आग्रह करते कि वह वार्षिक अधिवेशन में पधारें और आन्दोलन का नेतृत्व करें। परन्तु वह कई अधिवेशनों में नहीं गए। कांग्रेस के कार्यकर्ता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मदनमोहन मालवीय और दिनशावाचा से जितने परिचित थे, उतने फिरोजशाह से नहीं थे।

यह सब कुछ होते हुए भी राष्ट्रीय आन्दोलन पर फिरोजशाह का बहुत प्रभाव था। दूसरे प्रदेशों के नेता उनका अनुसरण करते। कांग्रेस की बम्बई शाखा बराबर फिरोजशाह के नियंत्रण में रही और फिरोजशाह के दृष्टिकोण और नीतियों का बड़ी निष्ठा से समर्थन करती रही।

फिरोजशाह दूर रहकर भी राष्ट्रीय आन्दोलन पर प्रभाव डाल सकते थे। कांग्रेस का अधिवेशन जब बम्बई में होता फिर तो कहना ही क्या था। ऐसे समय में तो इनका प्रभाव चरमसीमा पर पहुँच जाता था। यह सदैव स्वागत समिति के अध्यक्ष चुने जाते। इनका व्यक्तित्व अध्यक्ष को भी निष्प्रभ कर देता। बम्बई में 1904 में हुए कांग्रेस अधिवेशन की सफलता का कारण श्री फिरोजशाह का व्यक्तिगत प्रभुत्व ही था। फिरोजशाह ने कांग्रेस में उग्रवाद की बाढ़ को रोका। इस उग्रवाद की भावना ने कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में जन्म लिया था। कलकत्ता अधिवेशन में इस भावना ने जोर पकड़ा और अंत में सूरत अधिवेशन में कांग्रेस इस बाढ़ में डूब गई। फिरोजशाह ने अधिवेशन का संचालन बहुत निपुणता से किया। स्वागत समिति के अध्यक्ष के नाते अधिवेशन के महत्व और सम्मान में वृद्धि हुई। प्रतिनिधियों के स्वागत में दिया गया उनका भाषण आशा से भरा हुआ था, जिसका अभिप्राय लोगों की निराशा को दूर करना था। भाषण के आरम्भ में

उन्होंने प्रतिनिधियों को बताया कि हर वर्ष अधिवेशन करना क्यों आवश्यक है। इसके पश्चात अधिवेशन के सम्मुख कांग्रेस आन्दोलन के प्रति अपनी श्रद्धा और निष्ठा प्रकट की। उन्होंने कहा —

"मैं एक कट्टरपंथी हू और श्री महादेव गोविन्द रानडे की तरह आशावादी हू। मैं यह विश्वास रखता हू कि ईश्वर मनुष्य के द्वारा ही हमारा मार्ग दर्शन करता है। इसे आप पूर्व का भाग्यवाद कह सकते हैं, परन्तु यह भाग्यवाद क्रियाशील भाग्य-वाद है निष्क्रिय भाग्यवाद नहीं। इस भाग्यवाद के अनुसार मनुष्य को चाहिए कि अपने निर्धारित कतव्य की पूर्ति के लिए सदैव तत्पर रहे। कुछ लोग बहुत अधीर हैं और यह अधीरता उन्हें निराशा की ओर ले जा रही है। मैं निराशा से बचा हुआ हू क्योंकि मैं दीन हू। किसी कवि ने कहा था —

मैंने ससार की रचना नही की। यह ससार ईश्वर ने बनाया है और वही ईश्वर इसको माग दिखाएगा। मुझे इन शब्दो से बहुत ही प्रेरणा और आशा मिलती है।"

फिरोजशाह ने अपने भाषण मे कांग्रेस के कार्यों का विस्तारपूर्वक वृत्तान्त दिया। उन्होने बताया कि कांग्रेस के कार्यों का विवरण ऐसा है जिसपर गर्व किया जा सकता है। इसे देखते हुए हताश और निरुत्साहित होने का कोई कारण दिखाई नही देता। कांग्रेस ने भौतिक सफलताए तो पाई ही हैं, परन्तु सबसे बड़ा काम यह किया है कि राष्ट्र की आत्मा को जगा दिया है। कांग्रेस ने ऐसी शक्तियो को मुक्त कर दिया है जो मानव क्रिया के कई क्षेत्रो मे अभिव्यक्ति के लिए कोलाहल कर रही है।

कांग्रेस के 1904 के बम्बई अधिवेशन की आधिकारिक रिपोर्ट मे अधिवेशन की सफलता मे फिरोजशाह के भाग का बहुत ही भावपूर्ण वर्णन था और उनकी सेवाओ के प्रति कृतज्ञता प्रकट की गई थी। रिपोर्ट म लिखा था कि हमें बताया गया है कि दूसरे प्रदेश कांग्रेस को अधिवेशन के लिए आमन्त्रित करने मे हिचकिचा रहे थे। ऐसे समय मे फिरोजशाह बड़ी निर्भीकता से सामने आए। उन्हें

अपने नगर पर और अपने प्रदेश पर पूरा विश्वास था। उन्होने बम्बई म कांग्रेस अधिवेशन के प्रबन्ध का प्रस्ताव रखा।

फिरोजशाह के ऊचे व्यक्तित्व, महान सगठन शक्ति, अद्भुत व्यवहार कौशल और निर्विवाद नेतत्व के कारण अधिवेशन को असाधारण सफलता मिली। लोग उनके नेतृत्व मे काम करना सौभाग्य समझते थे।

एक आलोचक का कहना था कि यद्यपि यह गुणगान काफी हद तक सच था, परन्तु इसमे अत्युक्ति से काम लिया गया था। आलोचक का विचार था कि देवता की पदवी के बदले फिरोजशाह एक नश्वर मनुष्य के स्थल पर रहना अधिक पसद करेंगे।

सन 1904 के कांग्रेस अधिवेशन म फिरोजशाह के विरुद्ध एक छोटा सा विद्रोह भी हुआ। विषय समिति म किसी प्रश्न पर बहुत जोर की बहस चल रही थी। पजाब के एक प्रतिनिधि ने बहुत कटुता से शिकायत की कि फिरोजशाह सभी विरोधो को दबा देते हैं और हर काम मे अपनी मनमानी करते है। यह प्रतिनिधि पजाब के लाला मुरलीधर थे। फिरोजशाह उठ खडे हुए और उन्हाने इन आरोपो का खण्डन किया। अत मे उन्होने बडे सरल स्वभाव से प्रतिनिधियो से पूछा कि आप लोग समिति के सामने अपन दृष्टिकोण पर क्यो जोर नही डालते हैं तथा क्यो उन्हें मानने के लिए समिति को बाध्य नही करते। लाला मुरलीधर ने फिर शिकायत की "आपका व्यक्तित्व सब पर छा जाता है और हम सब कुछ नहीं कर पाते।' फिरोजशाह ने चोट की 'सज्जनो आप ही बताए कि म अपना व्यक्तित्व कहा ले जाऊ ?" फिरोजशाह के तात्कालिक उत्तर से उनके आलोचकों का मुह बद हो गया और वादविवाद मे कटुता नहीं आ पाई।

फिरोजशाह के विरोधी उनसे रुष्ट थे और यह चुप थे। फिरोजशाह मे कुछ महान गुण थे जिनके कारण उनका प्रभुत्व निर्विवाद था। प्रतिनिधियो का बहुमत फिरोजशाह के इन गुणा का प्रशसक था परन्तु इन्हीं गुणो के कारण कुछ लोग इनसे चिढते थे। नटेसन एक पक्के कांग्रेसी थे। मद्रास के उद्यमशील प्रकाशक थे। अधिवेशन से लौटकर उन्होंने फिरोजशाह को एक पत्र लिखा —

अध्याय 20

विश्वविद्यालय सुधार

1902-1903

जब से लार्ड कर्जन ने वायसराय का पद ग्रहण किया था, तभी से उनकी इच्छा थी कि विश्वविद्यालय में सुधार किया जाए। सुधार के प्रश्न को लेकर जो वाद विवाद उठा, वह लार्ड कर्जन के शासनकाल की उल्लेखनीय घटना है। भारत सरकार का 1854 का प्रेषण (डिस्पैच) एक ऐतिहासिक दस्तावेज था। इस प्रेषण के फलस्वरूप मिली शिक्षा प्रणाली से कुछ ऐसी शक्तियों का संचार हुआ जो कई शताब्दियों से निद्राग्रस्त थी। इस प्रेषण में निर्धारित शिक्षा नीति का सरकार ने अनुसरण किया। बहुत कम ऐसे अवसर आए जब सरकार इस नीति से विमुख हुई हो। 1854 की शिक्षा नीति ने एक नए भारत का निर्माण किया था जिसके चिह्न चारों तरफ दिखाई दे रहे थे।

नए विचारों के संचार से लोगों के मन में अशान्ति पैदा हुई। जनता की धारणा हो गई थी कि राष्ट्र के रोगों का कारण दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली है। कुछ लोगों की धारणा थी कि यह शिक्षा प्रणाली नास्तिकता सिखाती है। दूसरे लोगों का विचार था कि इसमें कोरा साहित्य है और इस 'साहित्य' में जीवन और चरित्र के लिए बहुत विलक्षण शिक्षाएं भरी पड़ी हैं। विज्ञान शिक्षा में भी प्रकृति के बारे में श्रद्धापूर्ण चिंतन है। ऐसी शिक्षा की निन्दा करने की एक प्रथा सी चल पड़ी थी। इस शिक्षा के विरोधियों का कहना था कि इसका लाभ उठाने वाले हजारों नवयुवकों की बुद्धि और उनके चरित्र पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं पड़ता।

इस सुधार की ओर पहला कदम एक सम्मेलन के रूप मे उठाया गया। यह सम्मेलन शिमला म बुलाया गया और इसका अभिप्राय था भारत की शिक्षा प्रणाली पर विचार विमश करना। मद्रास क्रिश्चयन कालेज के डा० मिलर के अतिरिक्त सम्मेलन के सारे सदस्य सरकारी अफसर थे जिनमे भारतीय एक भी नहीं था। लोवेट फ्रेजर लाड कजन के प्रशसको मे थे। परन्तु सम्मेलन की सदस्यता को देखकर उन्ह कहना पडा "लाड कजन न कलकत्ते म कहा था कि मैं शिक्षा सम्बन्धी विषयो पर विशेषज्ञो की राय लेना चाहते हैं परन्तु शिमला सम्मेलन मे उन्ह केवल सरकारी अफसरो के मत का ही पता लगा।"

इस सम्मेलन के पश्चात जनवरी 1902 मे सरकार न एक कमीशन की नियुक्ति की। कमीशन से कहा गया कि वह समस्या के हर पहलू पर विचार करे और उच्च शिक्षा प्रणाली को ठीक और स्थाई ढग से स्थापित करने के लिए सरकार को सुझाव दे। टोमस रैले (जिन्ह बाद मे "सर" की उपाधि दी गई) इस कमीशन के अध्यक्ष थे।

कमीशन ने जल्दी जल्द दौरा किया और जून 1902 तक अपने सुझाव तयार कर लिए। यह सुझाव बहुत ही प्रतिक्रियात्मक थे। कमीशन की रिपोट छपने पर देश भर मे प्रतिरोध का तूफान उठा। लोगो का विचार था कि सरकार शिक्षा से सम्बन्धित सस्थाओ का सुधार नही करना चाहती, बल्कि उन्हे बिलकुल बरबाद कर देना चाहती है और एक ऐसी प्रणाली को लादना चाहती है जिसका अभिप्राय प्रचलित शिक्षा को समाप्त करना है।

केन्द्रीय सरकार ने कमीशन की रिपोट पर टीका टिप्पणी करके रिपोट को प्रादेशिक सरकारो के पास भेज दिया। यथासमय यह रिपोट बम्बई विश्वविद्यालय मे पहुची। इस पर विचार विमश करन के लिए विश्वविद्यालय ने एक समिति नियुक्त कर दी। इस समिति का मागदशन मुख्यत फिरोजशाह ने किया। समिति ने कमीशन के सुझावो पर बहुत सूक्ष्मता से विचार किया और एक रिपोट तयार की। इस रिपोट म जो सुझाव थे, वे कमीशन के सुझावो क बिलकुल प्रतिकूल थे।

विश्वविद्यालय की सीनेट ने इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया। रिपोर्ट की सीनेट द्वारा स्वीकृति फिरोजशाह की व्यक्तिगत विजय मानी जा सकती है। श्री गोखले ने इस रिपोर्ट की अग्रिम प्रति देखी और फिरोजशाह को कलकत्ता से पत्र लिखा। इस पत्र म गोखले ने फिरोजशाह की प्रशंसा की और उन्हें उल्लेखनीय श्रद्धांजलि भेंट की। गोखले ने इस पत्र मे लिखा

'समिति के एक सदस्य के अतिरिक्त सभी यूरोपीय सदस्यों को अपनी आलोचना और सुझावो से सहमत कर लेना एक असाधारण विजय है। हम सभी जानते हैं कि यह विजय मुख्यत आपकी व्यवहार-कुशलता, प्रभाव और सशक्त व्यक्तित्व के कारण सम्भव हुई है। यहां के लोगो का विचार है कि यदि बम्बई विश्वविद्यालय के सीनेट न इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया, जसा कि दिखाई दे रहा है तो कमीशन के सुझावों के प्रति विरोध और भी शक्तिशाली हो जाएगा। यहां के लोगो को कोई आशा नहीं कि कलकत्ता विश्वविद्यालय की सीनेट कमीशन के सुझावों को रद्द कर देगी। बम्बई और कलकत्ता के नेताओं के चरित्रबल और योग्यता का अन्तर यहां के लोग अब खुले आम स्वीकार कर रहे हैं।

"आप यह जानते हैं कि यहां के लोग कितने भावुक हैं और कितनी जल्दी अपना रुख बदलते हैं। य वही लोग हैं जो 1901 के कांग्रेस अधिवेशन के बाद आपकी घोर निन्दा कर रहे थे। उस निन्दा का कारण यह था कि इनके विचार में श्री नन्दी की भारतीय कांग्रेस समिति को समाप्त करने मे आप और श्री बनर्जी ने स्वेच्छाचार दिखलाया था। अब यही लोग हैं जो आपकी प्रशंसा मे आसमान सिर पर उठाए हैं। ये लोग आपको भारत का सबसे महान राजनीतिक नेता कहते हैं जो यथार्थ में आप हैं भी।"

देशभर मे कई महीनों तक कमीशन के सुझाव पर गरमा-गरम बहस चली। 12 नवम्बर, 1903 को सरकार ने लेजिस्लेटिव कौंसिल मे विश्वविद्यालय बिल पेश किया, जो मुख्य रूप से कमीशन के सुझावों पर आधारित था।

बम्बई विश्वविद्यालय की सीनेट ने बिल पर विचार करने के लिए एक

कमेटी बिठाई। थोडे ही समय मे इस कमटी ने अपनी रिपोट प्रस्तुत कर दी, जो 21 दिसम्बर 1903 को बहस के लिए रखी गई। फिरोजशाह ने प्रस्ताव रखा कि इस रिपोट को स्वीकार कर लिया जाए। उन्होंने उन परिवतनो पर काफी प्रहार किया जो पेश किए जाने वाले थे।

फिराजशाह ने कहा

"कुछ माम पहले अग्रेजो ने स्पष्ट तौर पर स्वीकार किया था कि बिल का मुख्य ध्येय यह है कि विश्वविद्यालय पर यूरोपियनो का नियत्रण हो। इसका अथ यह होगा कि इस नए कानून की मदद से विश्वविद्यालयो के सविधान मे परिवतन करके सरकार इन पर अपना प्रभुत्व जमा लेगी। बिल का वास्तविक उद्देश्य तो यही है। बिल म और जा धाराए हैं वे गौण हैं, और उनकी उपयोगिता भी स देह-जनक है। सीनेट की स्वाधीनता और सत्यनिष्ठा के कारण विश्वविद्यालय का सही विकास हुआ। यह निश्चित है कि इस बिल के द्वारा सरकार इस स्वाधीनता और सत्यनिष्ठा का बिलकुल ही समाप्त कर देना चाहती है।

भाषण के अ त म फिरोजशाह ने कहा "क्या सरकार समझती है कि सीनेट ऐस बिल का अनुमोदन करेगी? सीनेट अपनी पूरी शक्ति इस बिल के प्रतिरोध मे लगा देगा। भले ही वह शक्ति अकिंचन हा।'

भाषण पर बहुत तालिया बजी और मुरयत इसी कारण सीनेट ने लगभग सवसम्मति से रिपोट का स्वीकार कर लिया।

गाखले और फिराजशाह ने इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे इस बिल का विरोध किया। फिरोजशाह की बिल पर चोट हथौड़े की चोटो की भाति थी और गाखले के आक्रमण की तुलना तलवार के प्रहार से की जा सकती है। पर तु इन नेताओ के प्रयत्न विफल गए। यदि लोकतत्रवादी सरकार होती तो यह *बिल या तो बिलकुल* समाप्त हो गया हाता, या कम से कम इसकी अधिक आपत्तिजनक रूपरेखा हटा दी जाती। निरकुश शासन प्रणाली का अनिवाय

दुष्परिणाम यह होता है कि नीति के महत्वपूर्ण प्रश्नो पर सरकार देश के चितन शील नेताओं की सहायता या सलाह नही लेती। ऐसी अवस्था में आलोचना से कोई लाभ नही होता और आलोचना रचनात्मक न होकर खण्डनात्मक हो जाती है। जब आलोचक समझता है कि जिस कानून का वह आलोचना कर रहा है, उसके निर्माण मे उसका कोई हाथ नही है तो उसकी एक ही चेष्टा होती है, वह यह कि बिल के आपत्तिजनक पहलुओ और उसके सबसे दुबल स्थानो पर आक्रमण करे।

अध्याय 21

सरकार द्वारा उपाधि

1904-1905

दूसरे देशों की भांति भारत मे भी सम्मान सूचियो मे कोई मौलिकता अथवा प्रतिष्ठा की बात नहीं होती। एक दर्रा है जो अलग रहता है। ये उपाधियां उन लोगों को मिलती हैं जिनके सम्बन्ध में अधिकारीगण की यह धारणा होती कि इन्होंने सरकार के प्रति अपने कर्तव्य मे बड़ी वफादारी दिखाई है। ये सम्मानसूचियां अवसर, चापलूसी और अफसरशाही के दायरे मे चक्कर काटती हैं, कभी कभी इस चक्कर से निकलने की चेष्टा भी की जाती है। प्राय जनता ऐसी उपाधियो को बहुत महत्व देती है। जब भी किसी योग्य व्यक्ति को सरकारी उपाधि मिलती है जनता कृतज्ञ होकर कहती है कि सरकार ने योग्यता को मान्यता दी है।

फिरोजशाह को उपाधि मिलने की बात भी ऐसी ही थी। ब्रिटिश साम्राज्ञी के जन्मदिन के अवसर पर दी जाने वाली उपाधियो मे फिरोजशाह का नाम भी था। सरकार ने उन्हें के० सी० आई० ई० की उपाधि दी थी। फिरोजशाह लार्ड कर्जन के दुर्जय विरोधी थे। वायसराय और फिरोजशाह के बीच बहुत मतभेद थे, परन्तु वायसराय ने इन मतभेदो को फिरोजशाह के गुणो के मूल्यांकन के रास्ते मे नही आने दिया। वायसराय को श्रेय जाता है कि उन्होंने बिना किसी हिचकिचाहट के फिरोजशाह को उपाधि देने की सिफारिश की। फिरोजशाह को उपाधि मिलने से सबको बहुत हर्ष हुआ। सब लोग इस बात पर सहमत थे कि फिरोजशाह से अधिक

इस सम्मान के योग्य और कोई नहीं है। उनके विरोधी भी हृप प्रकट किए बिना न रह सके।

देश भर से फिराजशाह को बधाइ के पत्र और तारें भेजी गईं। य बधाई पत्र व्यक्तियों और सस्थाओ द्वारा भेजे गए थे। रिपन क्लब ने उनके सम्मान म सावजनिक भोज का आयोजन किया। इस समारोह के अध्यक्ष 'सर' जमशेदजी जीजीभाई थे। अमरीका के महान प्रेसीडेण्ट को श्रद्धाजलि देते हुए जिन शब्दों का प्रयोग किया गया था, वही शब्द जीजीभाई ने फिरोजशाह के लिए कहे। उन्होंने कहा—' फिरोजशाह भारत के सबसे बडे वकील, परिषद के सदस्य और अपने देश वासियो मे सबसे अधिक प्रिय नेता हैं।" एलफिन्सटन कालेज के विद्यार्थियो न उन्हें आमत्रित किया और उनका स्वागत किया। इन समारोहो म उन्होंने फिराजशाह को मेज पर रखने के लिए चादी का उपहार दिया। इस उपहार पर फिरोजशाह का बहुत गव था।

नगरपालिका के 64 सदस्यो ने एक माग पत्र पर हस्ताक्षर किए। इस माग पत्र मे यह निवेदन किया गया था कि नगरपालिका की एक असाधारण बठक बुलाई जाए जिसमे फिरोजशाह को आमत्रित करके बधाई दी जाए। उन लोगो का विचार था कि इस अवसर को असाधारण ढग से मनाना चाहिए। इसलिए नगर पालिका की असाधारण बठक के कुछ दिन पश्चात् फिरोजशाह के सम्मान म एक भोज भी दिया गया। इस भोज मे फिरोजशाह ने नगरपालिका के सरकारी और गरसरकारी सदस्यों को, जिनकी कायकुशलता के कारण नगरपालिका का काय इतने सुचारु ढग से चल रहा था, श्रद्धांजलि भेंट की। इस श्रद्धाजलि के पश्चात फिराजशाह एक और प्रसग पर बोले। यह विषय था उनके नेतत्व के बारे मे लोगो की धारणा। उन्होने कहा कि मैं एक अपराध स्वीकार करना चाहता हू। आज तक लोग यह समझ रहे थे कि मैं नगरपालिका का नेतत्व करता आ रहा हू परन्तु यथाथ यह है कि मैं कवल नगरपालिका का अनुसरण करता आ रहा हू। उनकी इस बात पर श्रोतागण को बहुत हसी आई। फिरोजशाह ने बडा गम्भीरता से कहा कि तथ्य यह है कि हर समस्या पर मैं अपने साथियो के विचारो के झुकाव

पर नजर रखता हू। यदि मैं अपने विचार प्रकट भी करता हू तो मेरा अभिप्राय दूसरो की राय जानना होता है। इस युक्ति से मुझे पता लग जाता है कि सही दृष्टिकोण क्या है। कई वर्षो से अनिवार्य रूप से मैं यही युक्ति अपनाता चला आ रहा हू और मेरा अनुभव यह रहा है कि नगरपालिका का दृष्टिकोण लगभग सभी प्रश्नो पर बुद्धिमत्तापूर्ण रहा है तथा मैं नगरपालिका के दृष्टिकोण का समर्थन किया है। लोगों की यह धारणा गलत है कि मैं नगरपालिका का मार्गदर्शन करता हू।

फिरोजशाह का तर्क तो मनोरजक था परन्तु जनता को उस पर विश्वास नही हुआ। विश्वास होता भी कैसे, जबकि लोगो की दृष्टि म फिरोजशाह और नगरपालिका समानार्थक शब्द थे। उनके नतृत्व की सफलता का भेद यह था कि कदाचित ही कोई ऐसा अवसर आया जब उनसे भूल हुई हो। उनके तर्क के पीछे तीक्ष्ण परख और सार्वजनिक विषयो पर विस्तृत जानकारी और अनुभव था। उनके तर्क वितर्क से कायल न होना असम्भव था।

x x x

एसे कुछ विद्वेषी आलोचको का अभाव नही था जो यह कह रहे थे कि सरकार न उपाधि देकर फिरोजशाह को एक तरह से घूस दी है और यह भी कि उपाधि के परिणामस्वरूप फिरोजशाह सरकार का कडा विरोध और तीव्र आलोचना करना छोड देंगे। ऐसे लोग फिरोजशाह के चरित्र से बिलकुल अनभिज्ञ थे। शीघ्र ही उन्ह पता चल गया कि उन्होने फिरोजशाह का समझन म गलती की है। वायसराय न फिरोजशाह को उनकी योग्यता के कारण उपाधि दिलाई थी, परन्तु जब वह दुबारा भारत म सरकार की बागडोर सम्भालने आए और नगरपालिका मे उन्हे मानपत्र भेंट करने का प्रस्ताव उठा, तो फिरोजशाह ने इसका विरोध किया तथा वायसराय की कडी आलोचना की। यह और बात है कि फिरोजशाह का विरोध असफल रहा।

वायसराय को मानपत्र भेंट करने का प्रस्ताव हरमुसजी चोपिया ने

चरित्रबल और स्वावलम्बन की भावना फिरोजशाह के मुख्य गुण थे। चुनाव के कुछ ही मास बाद इन गुणो के प्रयोग की आवश्यकता पड़ी। युवराज को अपोलो बंदर पर जहाज से उतरना था और वहा उनका स्वागत होना था। सरकार ने 1875 में एक विज्ञप्ति जारी की थी, जिसके अनुसार उस समय के युवराज समारोह में नगरपालिका के अध्यक्ष को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। फिरोजशाह के कहने पर नगरपालिका के सेक्रेटरी ने एक पत्र लिखा जिसमे सरकार का ध्यान 1875 की विज्ञप्ति की ओर आकर्षित किया गया। इस पत्र मे यह आशा प्रकट की गई कि अब भी नगरपालिका के अध्यक्ष को वही स्थान दिया जाएगा। सरकार ने इस पत्र की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पत्र के थोडे दिनो बाद सरकार ने एक विज्ञप्ति जारी की। युवराज के स्वागत करने वालो मे बम्बई नगरपालिका के अध्यक्ष, कमिश्नर और नगर के शरिफ का नाम नही था।

सरकार की इस घोषणा से लोगों को आश्चर्य हुआ और क्रोध भी आया। नगरपालिका ने महसूस किया कि सरकार ने जानबूझकर नगरपालिका और बम्बई नगर का अपमान किया है। नगरपालिका की एक अनौपचारिक सभा बुलाई गई जिसमें यह प्रस्ताव पास हुआ कि सरकार को एक पत्र लिखा जाए जिसमे उसके कार्य द्वारा उत्पन्न होने वाले क्षोभ को प्रकट किया जाए। नगर मे सनसनी फैल गई। और इस झगडे के परिणाम के बारे मे लोग अटकलबाजी लगाने लगे। एक मुख्य प्रश्न यह था कि यदि सरकार अपनी जिद पर अडी रही तो नगरपालिका क्या कर सकती है? नगर मे तरह तरह की अफवाहे उड रही थी। जो लोग नगरपालिका की मनोदशा से परिचित थे, उन्हे साफ दिखाई दे रहा था कि नगरपालिका अपने अधिकारो के प्रश्न का सदा के लिए निपटाने पर तुली हुई है। अपोलो बंदर पर एक सभा मे युवराज को मानपत्र भेंट करने का निर्णय हुआ था, परन्तु कार्यपालिका के कुछ सदस्य इतने नाराज थे कि वे इस सभा को स्थगित करने के लिए तैयार थे।

अधिकारीगण भयभीत हो गए। जिस अधिकारी की भूल से यह काड हुआ था, उसे आदेश मिला कि वह तुरत जाए और फिरोजशाह से मिलकर झगडे का

निर्धारण करे। 8 नवम्बर को युवराज के आने के एक दिन पहले नगरपालिका की एक अनौपचारिक सभा होनी निश्चित थी। इसलिए समय अब अधिक नहीं बचा था। दोपहर के दो बजे के बाद एडगरले ने, जो कि सरकार के मुख्य सचिव थे, गाड़ी पकड़ी और नेपियन सी रोड पर स्थित फिरोजशाह के निवासस्थान पर पहुंचे। उन दोनों की बातचीत काफी देर तक चली। फिरोजशाह ने एडगरले साहब से साफ साफ कह दिया कि यदि नगरपालिका की इच्छा का अनादर किया गया तो उसका परिणाम बुरा निकलेगा। एडगरले ने फिरोजशाह को आश्वासन दिलाया कि वह उनके विचार गवर्नर साहब तक पहुंचा देंगे। यह भी निश्चय किया गया कि सरकार का 'हां' या 'ना' जो भी उत्तर हो नगरपालिका तक सभा आरम्भ होने से पहले ही पहुंच जाएगा।

सुबह होने के थोड़ी ही देर पहले नगरपालिका के सचिव को टेलीफोन आया - टेलीफोन में सरकार के मुख्य सचिव की ओर से सन्देश था जिसमें कहा गया था कि सरकार ने नगरपालिका की मांग स्वीकार कर ली है। उसी समय फिरोजशाह को मुख्य सचिव की ओर से एक तार भी मिला जिसमें एक ही शब्द था। वह शब्द था—हां'।

9 तारीख को सभा का वातावरण ऊपर से तो शांत था, परन्तु भीतर से उत्तेजनापूर्ण था। फिरोजशाह ने इस अवसर पर बड़ी व्यवहारकुशलता से काम लिया। उन्होंने सभा को आश्वासन दिलाया कि कुछ गलतफहमी पैदा हो गई थी। सरकार का अभिप्राय नगरपालिका का अनादर करना नहीं था। सरकार ऐसा प्रबन्ध करना चाहती थी कि नगरपालिका द्वारा युवराज का स्वागत सबसे अन्त में हो और यह समारोह सबसे बढ़ चढ़कर हो। परन्तु जब सरकार को पता चला कि नगरपालिका युवराज के स्वागत समारोह में सर्वप्रथम भाग लेना चाहती है तो वह नगरपालिका की इच्छा मानने को तुरन्त तैयार हो गई। फिरोजशाह ने कहा कि सरकारी प्रतिनिधि से उनकी बात बहुत ही मैत्रीपूर्ण ढंग से हुई है तथा समस्या का समाधान हो चुका है। नगरपालिका के सदस्य गुस्से से भरे बैठे थे और किसी समय भी विस्फोट हो सकता था, परन्तु फिरोजशाह ने अपने व्यवहारकौशल से उनके क्रोध को ठंडा कर दिया।

अध्याय 22

फिरोजशाह के विरुद्ध षडयन्त्र

1906 1907

बम्बई नगर मे एक विशेषता थी—वह यह कि नगर के भिन्न भिन्न समुदायो मे परस्पर बहुत मेल मिलाप था। परन्तु कुछ लोगो ने ऐसी चाल चली कि सारा नगर हिल गया। ऐसा मालूम होता था जसे नागरिको का परस्पर सामजस्य समाप्त हो जाएगा।

हैरीसन जो बम्बई सरकार के महालेखा पाल थे। वही इस घणित आदोलन के जमदाता थे। उनके मस्तिष्क म यह विचार आ गया कि नगर पर फिरोजशाह के प्रभुत्व का अत करना चाहिए। इस उद्देश्य से उन्होने अपन साथी ढूढने शुरू किए। उन्हे तीन ऐसे व्यक्ति मिले जो उच्च आहदो पर थे तथा प्रभावशाली थे। उनके इन साथियो मे से सबसे प्रथम थे लोवट फ्रेजर। यह टाइम्स आफ इडिया के पत्रकार थे। यह समाचार पत्र बहुत शक्तिशाली था और लोवेट की कलम मे भी काफी शक्ति थी। दूसरे थे। हैच जो कि बम्बई के कलक्टर थे। तीसरे गेल्ल थे जो पुलिस कमिश्नर थे। गेल्ल का जस्टिस आफ पीस पर बहुत प्रभाव था। इन षडयन्त्रकारियो के हाथ मे सबसे बडा हथियार जस्टिस आफ पीस थे। इन तीनो की सहायता से हैरीसन ने ऐसी चालो की शृखला आरम्भ की जिसका उदाहरण इस देश मे तो क्या, दूसरे किसी देश के म्युनिस्पल चुनाव मे भी नही मिलेगा।

नगरपालिका के चुनाव फरवरी 1907 मे होने थे। जस्टिस आफ पीस को

नगरपालिका मे 16 स्थान मिले हुए थे। एक स्थान के लिए फिरोजशाह भी उम्मीदवार थे। इन जस्टिसा की सख्या केवल 600 थी और इनमे अधिकतर की नियुक्ति किसी न किसी सरकारी अफसर की कृपा से हुई थी। इसलिए इन लोगो से अपनी मनमर्जी करवा लेना कोई कठिन काम नही था। अभी तक तो इन लोगो ने अपने मतदान का सदुपयोग किया था। फिरोजशाह के लिए केवल यह कहना पर्याप्त होता कि वह नगरपालिका के चुनाव के लिए खडे हो रहे हैं। हर बार जस्टिसों ने फिरोजशाह की सहायता की और उन्हे अपना प्रतिनिधि चुनकर नगरपालिका भेजा।

सबसे पहला काम विरोधी दल ने यह किया कि नगर के भिन्न भिन्न समुदायों के 16 आदमियो की सूची तैयार की। इन लागो ने प्रतिज्ञा की कि नगरपालिका में फिरोजशाह के अधिकार को समाप्त कर देंगे। इस नाटक के सूत्रधार हैरीसन ने इन्हें 'मुक्त' उम्मीदवारो की उपाधि दी। इन बेचारो म तो फिरोजशाह का सामना करने का साहस नही था, परन्तु ये लोग हैरीसन के जाल मे फस चुके थे। फिरोजशाह विरोधी गुट ने इन लोगो की प्रशसा के पुल बाध दिए तथा जनता मे यह प्रचार करना शुरू कर दिया कि उनके द्वारा खडे किए गए ये 16 उम्मीदवार बहुत ही सुयोग्य और कर्तव्यनिष्ठ हैं। उनका कहना था कि ये 16 उम्मीदवार नगरपालिका मे किसी दल म सम्मिलित नही होग, बल्कि किसी भी समस्या पर मतदान करते समय अत करण की आवाज सुनेंगे।

इन 16 व्यक्तियो की सूची बनाकर हैरीसन और उनके साथियो न भाग दौड शुरू कर दी। ये लोग सचिवालय, रेलवे, भारतीय चिकित्सा सेवा, आयात और भूमिकर कलक्टर और सरकार मे दूसरे उच्च अधिकारियो से मिले। जस्टिसो की नियुक्ति इन अफसरो पर निभर थी इससे वे लोग इन अफसरो से डरते थे। इन लोगो पर दबाव डाला गया और भाति भाति के लालच दिए गए और इनसे कहा गया कि वे अपने मत हैरीसन द्वारा खडे किए गए 16 उम्मीदवारो को ही दें।

चुनाव का दिन, 22 फरवरी, बम्बई के इतिहास म स्मरणीय है। टाउनहाल

म जनसाधारण को आने की अनुमति थी और बहुत से लोग इकटठे हो गए थे। चुनाव का वातावरण बहुत आवेशपूर्ण था। म्युनिस्पल कमिश्नर शफड सभा के अध्यक्ष चुन गए थे। उन्ह अध्यक्ष चुनने का प्रस्ताव फिरोजशाह ने ही रखा था। फिरोजशाह को पता नही था कि शफड पर्दे के पीछे क्या चाल चल रहे हैं। चुनाव शुरू होने से पहले ही बहुत से यूरोपियन जस्टिस इकटठे हाल मे आए। इन लोगो की जेबो मे मतपत्र थे जिनमे फिरोजशाह के विरोधी दल द्वारा खडे किए हुए 16 उम्मीदवारो के नाम लिखे थे। इन मतपत्रो पर इन लोगो ने अपने हस्ताक्षर भी कर रखे थे।

फिरोजशाह के शत्रुओ ने सयोग पर कोई बात नहीं छोड रखी थी। वे नही चाहते थे कि उनके समथक डरें। म्युनिस्पल कमिश्नर और विरोधी दल के कानूनी सलाहकार उस अवसर पर उपस्थित थे। इन लोगो ने ऐसा प्रबन्ध किया था कि मतदाता आए, अपने मतपत्र इन लोगो के हवाले करें और लौट जाए। परिणाम यह हुआ कि जसे ही मत पेटिका खुली, विरोधी दल ने अपने सारे मतपत्र उसम डाल दिए।

निश्चित समय पर शफड न घोषणा कर दी कि सभा समाप्त हो चुकी है। फ्रेजर अध्यक्ष के पास ही खड़े थे, भीड म से किसी की दृष्टि उन पर पड गई और वह चिल्लाया "टाइम्स आफ इडिया!" यह पत्र तो बदनाम था ही। फ्रेजर को देखकर लोगो ने शी शी करनी शुरू कर दी। फ्रेजर इससे डर नही बल्कि बहुत आत्मविश्वास के साथ भीड के सामने डटे रहे। जाते समय उ होंने फिरोजशाह से हाथ मिलाया और उनकी विजय की कामना की।

फिरोजशाह जाने लगे तो लोगो ने तालियां बजाकर आसमान सिर पर उठा लिया। लोगो ने उन्हें 'बम्बई का बेताज बादशाह' की उपाधि द रखी थी। जनता ने उन्हे फूलो की मालाओ से लाद दिया उन पर पुष्पो की वर्षा की और गुलदस्ते भेंट किए। जब वह गाडी पर बैठकर चले तो लोग उनके पीछे पीछे भागने लगे और नारे लगान लगे। "फिरोजशाह के बिना हमे नगरपालिका नही चाहिए", "फिरोजशाह

हो नगरपालिका है और नगरपालिका फिरोजशाह है।" "एक फिरोजशाह हजार हैरीसन के बराबर है" इत्यादि नारे लगाए जा रहे थे जिन्हें भीड़ ही नारे मचाती है।

मतदान का परिणाम निकला तो पता चला कि फिरोजशाह विरोधी दल के एक उम्मीदवार को छोड़ सारे सफल हो गए हैं। केवल सर दिनशा पटिट ही ऐसे थे जो चुनाव में सफल हुए थे। इन्होंने बड़ी स्वाधीनता का परिचय दिया था तथा इस एज्जाजनक आन्दोलन में भाग लेना अस्वीकार कर दिया था। दिनशा भी हार जाते परन्तु संयोगवश हैरीसन गिरोह के उम्मीदवार को दिए गए एक वोट पर किसी ने आपत्ति कर दी। इस आपत्ति के कारण दिनशा चुने गए। फिरोजशाह को 231 वोट मिले। वह 17 वें नम्बर पर थे और चुनाव हार गए।

फिरोजशाह की हार पर देश के लोगों को बहुत दुख हुआ और क्रोध भी आया। उन्हें हराने के लिए जिन हथकंडों का प्रयोग किया गया था उन पर देश के हर क्षेत्र से सम्बन्धित पत्रों और पत्रकारों ने रोष प्रकट किया। इन लोगों का कहना था कि फिरोजशाह की हार एक ऐसे महान व्यक्ति की हार है जिसके परिश्रम के कारण बम्बई नगरपालिका कुछ त्रुटियों के होते हुए भी देश के नागरिक स्वशासन के लिए आदर्श है।

हैरीसन मैजर गिरोह का विचार था कि उन्होंने फिरोजशाह की ख्याति पर ऐसा करारा वार किया है जिससे वह सम्भल न पाएंगे। परन्तु यह केवल उनका भ्रममात्र ही था। पराजय की इस घड़ी में उनकी सर्वप्रियता पहले से भी अधिक बढ़ गई। अनुदारवादी लोग फिरोजशाह पर विश्वास नहीं रखते थे और उन्हें नहीं चाहते थे। राष्ट्रवादी उनसे डरते थे और द्वेष रखते थे परन्तु इस समय उन्होंने फिरोजशाह के कार्य की प्रशंसा की, उनसे सहानुभूति प्रकट की। कुछ लोगों ने उन्हें सम्मान देने के लिए, उनकी मूर्ति की स्थापना के लिए चन्दा इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया परन्तु फिरोजशाह की यह इच्छा कतई नहीं थी।

चुनाव में फिरोजशाह की हार अस्थायी थी। विरोधी पार्टी के एक उम्मीद-

वार सुलमान अब्दुल वहीद नगरपालिका के ठेके लिया करत थे। इस कारण वह नगरपालिका की सदस्यता के अयोग्य ठहराए गए। फिरोजशाह 17वें नम्बर पर थे। इसलिए वहीद की जगह पर फिरोजशाह सदस्य निर्वाचित हुए। दीक्षित फिरोजशाह के भक्त थे। इनका चुनाव गिरगाव के इलाके स हुआ था। जब इन्होने देखा कि फिरोजशाह चुनाव हार गए हैं तो इन्होने सदस्यता ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। इनके स्थान पर फिरोजशाह सदस्य बन गए। वहीद के चुनाव के रद्द होन पर, फिरोजशाह ने *गिरगाव निर्वाचन क्षेत्र की सीट से त्याग* पत्र दे दिया जिससे दीक्षित को फिर स नगरपालिका का सदस्य बनने का अवसर मिल गया।

फिरोजशाह के निर्वाचित हो जाने पर भी जनता का रोष कम नही हुआ। 7 अप्रल सायकाल के समय माधव बाग म एक बडी भारी सावजनिक सभा का आयोजन हुआ। लोगो का कहना था कि चुनाव की स्वाधीनता की पवित्रता में हस्त क्षेप करके सरकार ने अवधानिक काय किया है। वे चाहत थे वह सरकार के इस काय की नि दा की जाए तथा वाइसराय से निवेदन किया जाए कि वे इस काड की जाच करवाए। सभा आरम्भ होन से पहले ही हजारो व्यक्ति इकट्ठे हो गए। हाल म और उसके बाहर एक इच भी जगह नही बची थी। सभा के अध्यक्ष गोखले थे जो कलकत्ता से इसमे भाग लेने आए थे। जब गोखले पहुचे तो भीड इतनी अधिक थी कि उन्ह सभामच तक पहुचना भी कठिन हो गया। लोगो न जोर जोर से तालिया बजाकर उनका स्वागत किया।

फिरोजशाह पर अक्सर यह आरोप लगाया जाता था कि उनका ढर्रा तानाशाही जसा है। गोखले ने अपने भाषण म इस आरोप का जो उत्तर दिया वह उल्लेखनीय है। उन्होने कहा

यदि किसी व्यक्ति मे फिरोजशाह जसे महान लोकोत्तर गुण हो और वह उन गुणो का पूणत 40 वर्षों तक नगर सेवा के लिए अर्पित कर दे, तो चाहे नगर पालिका हो कोई देश, ऐसे व्यक्ति के प्रभुत्व का मुकाबला कोई नही कर

सकता। इन सेवाओं के कारण उसकी सर्वश्रेष्ठता स्वाभाविक ही है। जो लोग ऐसे व्यक्ति की श्रेष्ठता की शिकायत करते हैं, वह मनोवृत्ति से लड़ाई करते हैं। जब एक महान व्यक्ति अपना सारा जीवन जनता की सेवा मे लगा देता है तो जनता का उसकी बुद्धिमत्ता और परख पर अथाह विश्वास होता है और कृतज्ञता उत्पन्न होती है। ऐसे व्यक्ति के प्रभुत्व का कारण जनता की कृतज्ञता है।

'बम्बई नगरपालिका मे फिरोजशाह की जो प्रतिष्ठा है, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। बम्बई में उनका प्रभाव वैसा ही है जैसा कि चेम्बरलेन का बर्मिंघम मे है अथवा लार्ड पामर्स्ट का व्हिग पार्टी मे और उनके पश्चात महान ग्लैडस्टोन का इंगलैंड के उदार दल म था।"

सभा ने वाइसराय को एक आवेदनपत्र भेजना निश्चित किया। सरकार ने इस आवेदनपत्र का जो उत्तर दिया वह विचित्र तर्कों पर आधारित था। सरकार ने अपने उत्तर मे लिखा कि इस मामले मे अदालतो ने पूरी जांच की है और वे इस निष्कर्ष पर पहुचा है कि चुनाव कराने वाले अधिकारियो ने अपने प्रभाव का गर कानूनी प्रयोग नहीं किया। इसस सरकार आवेदनपत्र पर कोई आदेश जारी नही कर रही।

सभा से यह परिणाम जरूर निकला कि लोगो का आवेश कम होने लगा और नगर के वातावरण मे पहले जसी शान्ति आ गई। नई नगरपालिका की पहली सभा हुई। यह सभा निर्विघ्न और शान्तिमय रूप से हुई, जो लोग तनाव के इच्छुक थे उन्हे बहुत निराशा हुई। फिरोजशाह विरोधी दल ने अपने उम्मीदवारो के सम्बन्ध म बहुत डींगें मारी थी तथा कहा था कि य लाग नगर प्रशासन मे सुधार करेंगे और उसे दोषमुक्त करेंगे। परन्तु ये लोग बहुत ही दब्बू और निष्क्रिय निकले। नगरपालिका पर फिरोजशाह का अधिकार बना रहा। उनके समर्थक बहुत कम रह गए थे और विरोधियो की सख्या अधिक हो गई थी। पर तु उनके व्यक्तित्व और बुद्धिबल के कारण नगरपालिका पर उनका प्रभुत्व बना रहा। फिरोजशाह विरोधी दल की विजय भी हुई और पराजय भी।

अध्याय 23

सूरत कांग्रेस

1907

कांग्रेस रूपी नन्हा शिशु जिसने बम्बई में जन्म लिया था, स्वस्थ बचपन के बाद अब युवा हो गया था। कांग्रेस की शक्ति हर वर्ष बढ़ती जा रही थी। राष्ट्रीय महत्वाकांक्षा की बड़े साहस और निष्ठा से अभिव्यक्ति करती। इसके वार्षिक अधिवेशनों में देश भर के बुद्धिजीवी, हर प्रदेश के नेता और प्रबुद्ध व्यक्ति इकट्ठे होते। इन अधिवेशनों में भारतीय शासन की समस्याओं पर लोकमत केंद्रित किया जाता।

कांग्रेस एक प्रकार से जनता की गैरसरकारी संसद थी। जैसा कि ऐसी संस्थाओं में अक्सर होता है इसमें वादविवाद होता, भाषण दिए जाते और हर वर्ष ढेरों प्रस्ताव पास किए जाते। कांग्रेसियों को भाषणबाजी की आदत थी और य कुछ आडम्बरप्रिय भी थे परन्तु यह सब होते हुए भी इससे एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति होती थी और देश के राजनीतिक जीवन में इस संस्था का एक सुस्पष्ट स्थान था। लोकमत की अभिव्यक्ति कई माध्यमों द्वारा हो रही थी परन्तु कांग्रेस द्वारा यह अभिव्यक्ति और भी स्पष्ट हो जाती। राष्ट्रीय प्रगति के लिए इस संस्था ने जितने उत्साह का संचार किया, उतना दूसरी कोई भी संस्था करने की आशा नहीं रख सकती थी।

अभी तक कांग्रेस ने वैधानिक आन्दोलन का रास्ता अपनाया था। कांग्रेस

के साथ राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रदीप्त कार्यकर्ताओं मे यह धारणा पैदा हो गई कि जिस ढग से अब तक राष्ट्रीय आन्दोलन चलाया गया है उससे कोई परिणाम नही निकलेगा। सरकार ने काग्रेस की आवाज को नही सुना। हर वर्ष काग्रेस भारी भर कम प्रस्ताव पास करता परन्तु सरकार इन मागो को ठुकरा देती। वह समझती कि काग्रेस मे शोर मचाने वाले उपद्रवी या असहिष्णु आदर्शवादी भरे पडे है। वह इन्हे घृणा की दृष्टि से देखती। देश में एक नए दल का जन्म हुआ। इस दल ने निश्चय कर लिया था कि वह काग्रेस की 'भीख मागने वाली' नीति को नही अपनाएगा। इस दल मे युवा और लडाके नेताओ का बोलबाला था। बगाल और दक्षिण इस नए आन्दोलन के मुख्य केन्द्र थे। इस नए दल का नेतृत्व विपिन चन्द्र पाल, अरविन्द घोष और भारत के महान लडाकू नेता बालगगाधर तिलक कर रहे थे। नए दल ने पत्रो और सभामच द्वारा अपने सिद्धान्त का प्रचार आरम्भ कर दिया।

इस नई भावना का प्रकटीकरण 1905 मे बनारस मे होने वाले काग्रेस के अधिवेशन मे हुआ। गोखले अधिवेशन के सभापति थे। उन्हें पहले ही आभास हो गया था कि अधिवेशन मे झगडा होगा। उन्होंने चिमनलाल सीतलवाद को तार दिया और उसमे आग्रह किया कि फिरोजशाह अधिवेशन मे अवश्य आए। गोखले को डर था कि यदि फिरोजशाह ने उग्रवादियो को नही रोका तो काग्रेस असम्भव और उच्छृखल कार्यवाही करने पर वचनबद्ध हो जाएगी। उन्हें विश्वास था कि यदि फिरोजशाह अधिवेशन मे उपस्थित हुए तो सभा का भारी बहुमत उनका अनुसरण करेगा और सभा की कारवाई शान्तिपूर्ण ढग से समाप्त होगी। फिरोजशाह अधिवेशन मे भाग न ले सके। उनके न आने से काग्रेस आन्दोलन को अधिक हानि नही पहुची परन्तु उग्रवादी दल काग्रेस को अपने पीछे घसीटने मे कुछ हद तक सफल हो ही गया।

इसके अगले वर्ष कलकत्ता अधिवेशन मे काग्रेस के उग्रवादी और मध्यमार्गी पक्ष मे मतभेद और अधिक बढ गए। फिरोजशाह, गोखले और एक दो मध्यमार्गी

नेताओ ने बडी सूझबूझ से काम लिया और दादाभाई नौरोजी को सभा का सभापति बनाया। यह युक्ति सफल हुई और कांग्रेस मे फूट पडने से बच गई। लोगो ने जब यह देखा कि राष्ट्रवाद के सम्मानित पुजारी, जिनके बाल देशसेवा मे सफेद हो गए हैं, अपन प्रिय ब धुओ की अंतिम सेवा के लिए इतनी दूर से पधारे हैं तो वे नत मस्तक हो गए। अधिक शोर मचाने वाले उग्रवादियो को भी इनकी अवहेलना का साहस नही हुआ। कांग्रेस मे फूट पडने से बच गई। इतना होते हुए भी कांग्रेस की नौका तूफानी समुद्र मे जा पहुची यह भीषण तूफान इस नौका को डुबाना चाहता था।

कलकत्ता अधिवेशन के समाप्त होते ही नए मत के पुजारियो ने देश भर मे जोरदार प्रचार आरम्भ कर दिया। जनवरी 1907 मे तिलक ने इलाहाबाद मे अपना आदोलन आरम्भ किया। थोडे समय बाद नागपुर मे इनके चेले खापर्डे ने प्रचार करना शुरू कर दिया। नागपुर मे कांग्रेस अधिवेशन होने वाला था। अधिवशन का प्रबध हो रहा था। इस काम मे रोडा अटकाने के लिए लज्जा जनक षडयत्र रचे गए जो देश के राजनैतिक इतिहास को कलुषित करते हैं। उग्रवादी पत्रकारो और वक्ताओ ने बिना किसी सकोच के मध्यमार्गी नेताओ की निन्दा करनी शुरू कर दी।

यह देखकर कि नागपुर वाले कांग्रेस अधिवेशन को नष्ट करने पर तुले हुए है, फिरोजशाह और उनका दल अधिवेशन के स्थान को बदलने के लिए विवश हो गया। फिरोजशाह के निवासस्थान पर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की सभा हुई जिसमे यह निणय किया गया कि कांग्रेस अधिवेशन सूरत म बुलाया जाए। सूरत नगर म कांग्रेस अधिवेशन के प्रबध का भार फिरोजशाह ने बडी निर्भीकता स अपने ऊपर लेने का प्रस्ताव किया। जब उग्रवादियो का इस निणय का पता चला तो उनके क्रोध का ठिकाना न रहा। उग्रवादी पत्रो और नेताओ ने मध्यमार्गी नेताओ, विशेषत फिरोजशाह को जी भरकर गालिया दी। फिरोजशाह पर उनका क्रोध अधिक था, क्योकि व समझत थे कि अधिवेशन का सूरत म करन का निणय इन्ही के कारण हुआ है। उन्हें लगता था कि उनकी चालबाजी के कारन म सबसे बडा

रुकावट फिरोजशाह का दृढ़सकल्प तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व ही है। उग्रवादियो ने सूरत पर भी ताने मारे और कहा कि यह नगर नही बल्कि एक निद्राग्रस्त गुफा है। अधिवेशन के प्रबन्धको को हर प्रकार की धमकियां दी गई।

उग्रवादी दल अधिवेशन आरम्भ होने के कुछ दिन पहले ही सूरत पहुच गया। इन लोगो ने अपना अड्डा अलग बना । इस दल के सदस्य अधिकतर दक्षिण बरार और बगाल से आए थे। आर० एन० मधोलकर सबसे पुराने और सम्मानित काग्रेसियो मे से थे। आगे चलकर यह मध्यप्रदेश लेजिस्लेटिव कौंसिल के सबसे प्रथम उपाध्यक्ष निर्वाचित हुए। इनका कहना था कि बरार से आने वाले उग्रदल के प्रतिनिधियो मे शारीरिक शिक्षा (जिमनास्टिक) के अध्यापक, दलाल, कारखानो मे काम करने वाले मजदूर इत्यादि थे। कहा जाता है कि इन लोगो मे नागपुर के कुछ नाई भी थे। अत मे 27 दिसम्बर का साघातिक दिवस भी आया। पण्डाल का निर्माण पुराने ऐतिहासिक फ्रेंच गार्डन मे किया गया था। जिसे इस अधिवेशन के लिए एक शिविर म परिवर्तित कर दिया गया था। अधिवेशन मे 1600 से अधिक प्रतिनिधि उपस्थित थे और लगभग 5,000 श्रोतागण एकत्रित थे। अधिवेशन का वातावरण बहुत ही उत्तेजनापूर्ण था।

ढाई बजे के कुछ बाद, मनोनीत अध्यक्ष रासबिहारी घोष सभा म आए। इनके साथ फिरोजशाह गोखले, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और त्रिभुवनदास मालवी थे जो स्वागत समिति के अध्यक्ष थे । मालवी सूरत के प्रतिष्ठित नागरिक थे और बम्बई मे वकालत करते थे। डा० घोष का जोरदार स्वागत हुआ। मध्यमार्गी (नरम दल) दल हतोत्साहित था । परन्तु डा० घोष के स्वागत को देख इसमे भी आशा का सचार हुआ। नेता लोग सभामच पर विराजमान हो गए, इनमे हर प्रदेश के प्रबद्ध और प्रमुख व्यक्ति थे। रुदरफोर्ड इगलैंड की पार्लियामेंट क सदस्य थे और इनकी गणना भारत के मित्रो मे की जाती थी। मि० नेविनसन विख्यात पत्र 'डेली न्यूज' से सम्बन्धित थे। ये दोनो महानुभाव भी मच पर बैठे थे। सभा की कार्यवाही देशभक्ति के गीतो से आरम्भ हुई। इसके पश्चात मि० मालवीय ने स्वागत पत्र

पढ़ना आरम्भ किया। इनके भाषण को लोग चुपचाप सुनते रहे। परन्तु जब इन्होंने अपने भाषण में सभा से यह निवेदन किया कि उन्हें अपने काम में संयम और शांति से काम लेना चाहिए, तो कुछ लोगों ने चिल्लाकर विरोध प्रकट किया।

जैसे ही मालवी का भाषण समाप्त हुआ, दीवान बहादुर अम्बालाल साकरलाल उठे और उन्होंने छोटा सा भाषण दिया तथा अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए डा० घोष के नाम का प्रस्ताव रखा। कांग्रेस के अनुभवी नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी इस प्रस्ताव का समर्थन करने के लिए उठे। इनकी वाग्मिता से देश के लोग मुग्ध हो जाते थे। अभी उन्होंने बोलने के लिए मुंह खोला ही था कि सभा के एक भाग ने शोर मचाना और गड़बड़ करना आरम्भ कर दिया। इस हुल्लड़ ने शीघ्र ही भीषण रूप धारण कर लिया। उपद्रवकारी बनर्जी को बोलने का अवसर नहीं दे रहे थे। उनकी मांग थी कि वह तिलक और लाला लाजपतराय को सुनना चाहते हैं। बंगाल के इस प्रसिद्ध नेता के अपमान पर बहुत से प्रतिनिधियों को क्रोध आया। वे अपनी कुर्सियों पर खड़े हो गए और इन्होंने उपद्रवकारियों पर चीखना चिल्लाना आरम्भ कर दिया।

स्वागत समिति के अध्यक्ष अवसर पाकर मेज पर खड़े हो गए। उन्होंने लोगों को चेतावनी दी कि यदि हंगामा बंद न हुआ तो वे सभा को स्थगित करने पर विवश हो जाएंगे। वह मेज से नीचे उतरे तो सुरेन्द्रनाथ बनर्जी उनकी जगह मेज पर खड़े हो गए। उन्होंने अपना भाषण पढ़ने की चेष्टा की परन्तु उपद्रवकारियों ने फिर शोर मचाया। अब तो श्रोतागण बिलकुल बेकाबू हो गए और कुर्सियां फांदते हुए सभामंच की ओर बढ़े। उनका आशय था कि उपद्रवियों को धक्के मारकर सभा से निकाल दें। साढ़े तीन बजे सभा स्थगित कर दी गई।

तिलक के पीछे पीछे क्रोधोन्मत्त प्रतिनिधियों की भीड़ चल रही थी। ये लोग तिलक का नाम लेकर 'गद्दार गद्दार' के नारे लगा रहे थे। चारों तरफ उत्तेजना और क्रोध का बोलबाला था। सूरत जैसे शांतिप्रिय नगर में भी बड़ी गर्मी देखने को मिल रही थी।

28 दिसम्बर दोपहर को एक बजे फिर कांग्रेस का अधिवेशन होना निश्चित हुआ। जब मनोनीत अध्यक्ष मंच की तरफ बढ़े तो भारी बहुमत ने उनका जोरदार से स्वागत किया। इस स्वागत को देखकर अध्यक्ष महोदय और उनके समर्थकों को प्रोत्साहन मिला। जब ये लोग अन्दर आ रहे थे तो स्वागत समिति के अध्यक्ष मालवी के हाथ में किसी ने कागज का टुकड़ा थमा दिया। मालवी ने उस पर्ची को पढ़ा। उसमें लिखा था

महोदय, मेरा एक निवेदन है। अध्यक्ष के चुनाव के प्रस्ताव के समर्थन के पश्चात मैं प्रतिनिधियों को सम्बोधित करना चाहता हूं। इस प्रश्न पर मेरा एक रचनात्मक सुझाव है और मैं स्थगन प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहता हूं। बोलने के लिए मेरा नाम पुकारें।

भवदीय

बाल गंगाधर तिलक

दक्षिण प्रतिनिधि (पूना)

मालवी ने जल्दी से यह अनिष्टसूचक संदेश पढ़ा और पर्ची जेब में रख ली। सभा की कारवाई आगे बढ़ी। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने अपना भाषण देना प्रारम्भ किया। पूना और नागपुर का उग्रवादी गुट भीतर से क्रोध में सुलग रहा था परन्तु ये लोग कुछ बोले नहीं। भाषण के खत्म होने पर मोतीलाल नेहरू ने डा० घोष की अध्यक्षता के प्रस्ताव का समर्थन किया। स्वागत समिति अध्यक्ष ने मतदान करवाया तो प्रतिनिधियों के भारी बहुमत ने ऊंची आवाज से इस प्रस्ताव का समर्थन किया। स्वागत समिति के अध्यक्ष ने घोषणा कर दी। डा० घोष कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए हैं।

डाक्टर घोष ने सभापति का आसन ग्रहण किया। पंडाल के हर कोने से उनके समर्थकों ने तालियां बजाई। जब वह अपना भाषण देने लगे तो तिलक सभा

मच पर जाकर उनके सामने खडे हो गए। तिलक का कहना था कि उन्होंने सशोधन प्रस्ताव प्रस्तुत करने की सूचना दी थी और माग की थी कि उन्हे बोलने का अवसर दिया जाए। स्वागत समिति के अध्यक्ष का कहना था कि तिलक को चाहिए था कि उसी समय सभा के स्थगन की माग करते अथवा फिर अध्यक्ष के चुनाव के प्रस्ताव म सशोधन प्रस्तुत करते। परन्तु अब कुछ नही हो सकता क्योंकि अब समय निकल गया है। तिलक ने डा० घोष से झगडना शुरू कर दिया। डा० घोष ने तिलक को समझाने की कोशिश की और कहा कि वह नियमविरुद्ध काय कर रहे हैं। परन्तु तिलक ने उनकी एक न सुनी। उन्होंने अध्यक्ष के निणय को मानने से इकार कर दिया और कहा कि वह प्रतिनिधियो को सम्बोधित किए बिना नही हिलेंगे।

इधर मच पर झगडा चल रहा था, उधर सभा म हुल्लड मच गया था। उग्रवादी दल के कायकर्ता पिछले दिन वाली करतूतो पर उतर आए। उन्होंने फिर से गडबड शुरू कर दी। बाकी लोगो ने उन्हे और उनके नेताओ को गालियां देनी शुरू कर दी। स्थिति बहुत ही गम्भीर हो गई थी। पूना और नागपुर का गिरोह झगडे पर उतारू था। ये लोग लाठियां लेकर आए थे। ये सभामच की ओर दौडे। अध्यक्ष महोदय को पता चल गया कि स्थिति बहुत ही बिगड चुकी है। उन्होने तिलक से हाथ जोडकर विनती की कि वह सभा मे बोलने का आग्रह न करें परन्तु तिलक टस से मस न हुए। उन्होंने अध्यक्ष की एक बात न सुनी। किसी ने सभामच की ओर दक्षिणी जूता फेंका। यह जूता पहले सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को छूता हुआ फिरोजशाह के मुह पर जा पडा। अब तो हुल्ला पूरे जोर से शुरू हो गया। उपद्रवियो ने सभामच की ओर कुर्सियां फेंकी लाठियो का निस्सकोच प्रयोग किया और सभामच पर बैठे कई व्यक्तियो को पीट डाला। उपद्रवी कहने को तो पढे लिखे व्यक्ति थे, परन्तु वास्तव म गुडे थे। ये फिरोजशाह पर विशेषत क्रुद्ध थे। नागपुर के कुछ मुस्टडे फिरोजशाह की ओर लपके तथा चिल्लाने लगे, "हम इस बदमाश पारसियों को मजा चखाना चाहते है।" 'डेली न्यूज' पत्र के पत्रकार नेविनसन ने इस काड का वृतान्त निम्नलिखित शब्दो म दिया

' अचानक कोई वस्तु आती दिखाई दी। यह एक जूता था जैसा कि मराठे पहनते हैं। यह लाल रंग के चमड़े से बना था। इसका पंजा नुकीला था और इसमें सितारा भरा हुआ था। यह सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के गाल पर पड़ा। फिर वहां से सर फिरोजशाह को जा कर लगा। जूते का गिरना एक प्रकार से आक्रमण की सूचना था। उग्रवादी लोगों ने पगड़ियां बांध रखी थीं। संकेत मिलते ही इनका भीड़ सभामंच की ओर दौड़ा। कूदते फांदते हाथ में पगड़ी और लाठियां घुमाते हुए, ये उपद्रवी सभामंच पर चढ़ गए। जो भी व्यक्ति उन्हें मध्यमार्गी लगा, उसी के सिर पर उन्होंने लाठियां दे मारी। मंच के ऊपर कई व्यक्ति चढ़ गए। मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस को उस समय अव्यवस्था की आंधी में लुप्त होते देखा था।"

सभा में इतनी अव्यवस्था थी कि उसका वृत्तान्त देना बहुत ही कठिन है। अध्यक्ष के सामने सभा को अनिश्चित काल के लिए स्थगित करने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था। महिलाओं को शीघ्र ही सुरक्षित स्थान पर ले जाया गया। तिलक को उनके अनुयायी अपने साथ ले गए। कुछ लोगों ने फिरोजशाह, गोखले और दूसरे नेताओं को बचाने के लिए घेरा डाल लिया। यह लोग इन नेताओं को पिछले द्वार से बाहर ले गए। पण्डाल में दोनों दलों के बीच जमकर लड़ाई हुई। अंत में पुलिस ने आकर पण्डाल खाली कराया।

यह एक ऐसा अनुभव था जिसे भुलाना असम्भव था। बहुत से पुराने नेता सहम गए। पण्डाल के बाहर एक शामियाने में ये लोग इकट्ठे हो गए। ये लोग क्रोध से तमतमाए हुए थे और स्थिति के सम्बन्ध में सोचने में असमर्थ थे। गोखले जो कि बहुत ही भावुक थे, क्रोध और उत्तेजना से कांप रहे थे। पुराने नेताओं में केवल फिरोजशाह ही ऐसे थे जो इस दंगे से प्रभावित नहीं हुए और बिल्कुल शान्त रहे। कई महीनों से इन पर घृणा और निन्दा की बौछार हो रही थी परन्तु इनके आत्मविश्वास, दूरदर्शिता और राजनीतिक विवेक में कमी नहीं आई। इस घटना के थोड़ी ही देर बाद किसी व्यक्ति ने उनसे भेंट की और इस काण्ड के बारे में पूछा। फिरोजशाह मुस्कराए। उन्होंने कहा कि वे जानते थे कि झगड़ा होने वाला है। परन्तु उनका विचार था कि यह घटना अप्रत्यक्ष रूप से कृपा

दान है। काग्रेस सयम और सूझबूझ की नीति के लिए प्रसिद्ध है। अब इस घटना का परिणाम यह होगा कि आग उगलने वाले नेता इसे अपने पीछे नही घसीट सकेंगे। फिरोजशाह को विश्वास था कि काग्रेस इस अग्निपरीक्षा से अधिक स्वस्थ और बलवान होकर निकलेगी। यदि काग्रेस उग्रवाद के सामने घुटन नही टेक देना चाहती ता फूट अनिवाय है। फिरोजशाह इस बात पर प्रस न थे कि मध्यमार्गी दल ने तिलक के विरुद्ध शक्ति का प्रयोग नही किया नही तो इस फूट का उत्तरदायित्व उन लोगों पर आता।

उस स्मरणीय दिन, जब यह सब काड हुआ, शाम के समय बहुत से प्रमुख प्रतिनिधि उस जगह इकटठे हुए जहा फिरोजशाह ठहरे हुए थे। वे सब लोग काग्रेस के काय को आगे बढाने के लिए विचार विमश करने के लिए इकट्ठे हुए थे। इन लोगो ने यह प्रस्ताव पास किया कि अगले दिन काग्रेस प्रतिनिधियो का सम्मेलन बुलाया जाय। इस सम्मेलन मे उन सब लोगो को आमन्त्रित किया जाए, जो इस सिद्धान्त म विश्वास रखते हैं कि भारतीय महत्वाकाक्षाओ का लक्ष्य ब्रिटिश साम्राज्य के स्वशासी देशो जसा दर्जा प्राप्त करना है और इस ध्येय की पूर्ति केवल वैधानिक उपायों द्वारा की जा सकती है। प्रस्ताव म यह भी कहा गया था कि इन लक्ष्यो की पूर्ति के लिए जो सभाए बुलाई जाए उनमे शान्तिपूवक विचार विमश किया जाए तथा जिन लोगो के हाथ मे इन सभाओ की कारवाई का सचालन हो, उनकी आज्ञा का पालन किया जाए।

28 दिसम्बर को यह सम्मेलन बुलाया गया। यह सम्मेलन उसी पण्डाल में हुआ, जहा एक दिन पहले लाठिया, टूटी कुसिया और जूते चले थे। सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों को प्रतिज्ञा लेनी पडती थी जिसका साराश पिछले दिन का प्रस्ताव था। इस प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने पर ही अन्दर जाने दिया जाता था। कुछ स्वयसेवक भी द्वारो पर तनात कर दिए गए थे। जिन उपद्रवी लोगों को यह पहचानते थे उन्हे प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने का अवसर ही नहीं देते थे। पूना और नागपुर उग्रवादी गिरोह के द्वारा की जाने वाली अचानक शरारत से निपटने के लिए बहुत सख्या मे पुलिस भी खडी थी।

फिरोजशाह ने अध्यक्ष पद के लिए डा० घोष के नाम का प्रस्ताव रखा तथा उन्होंने कहा कि उन्हें पहले भी एक बार अनौपचारिक सम्मेलन के मंच से बोलने का अवसर मिला था। उस सम्मेलन का प्रयोजन देश के हितों का प्रोत्साहन देना था। उन्हें यह आशा नहीं थी कि ऐसा समय भी आएगा कि सभी प्रदेशों के सहयोग से जो काम 23 साल से चल रहा है उसे पुनर्जीवित करने के लिए एक सम्मेलन बनाना पड़ेगा। सर्वश्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और लाला लाजपतराय ने फिरोजशाह के प्रस्ताव का समर्थन किया तथा डा० घोष सम्मेलन के अध्यक्ष चुन गए। कार्यसूची पर एक ही प्रस्ताव था जिसे गोखले ने प्रस्तुत किया। इस प्रस्ताव में घोषणा की गई थी कि सम्मेलन का लक्ष्य उस प्रतिज्ञापत्र की पहली दो धाराओं में दिया हुआ है, जिस पर प्रतिनिधि पहले ही हस्ताक्षर कर चुके हैं। सम्मेलन का प्रयोजन उस प्रतिज्ञापत्र में दिए सिद्धान्तों के अनुसार, कांग्रेस को पुनर्जीवित करना है।

कांग्रेस के संविधान का मसौदा बनाने के लिए एक कमेटी बैठाई गई। अप्रैल 1908 में इलाहाबाद में इस कमेटी की बैठक हुई। कांग्रेस संविधान का निर्माण हुआ और कांग्रेस की सभाओं का संचालन करने हेतु नियम बनाए गए। हर एक प्रतिनिधि को बिना शर्त इन सिद्धान्तों का पालन करना पड़ता था।

कांग्रेस के इतिहास के पहले परिच्छेद का अंत इस प्रकार हुआ। यदि हम इस विषय से सम्बन्धित तथ्यों और तर्कों पर निष्पक्ष रूप से विचार करें तो यह निष्कर्ष अनिवार्य होगा कि कांग्रेस के सूरत अधिवेशन को निष्फल बनाने के लिए, बड़ी सावधानी से तैयारी की गई थी और यह काम जानबूझकर किया गया था। उपद्रवियों का गढ़ कलकत्ता था। वहां से एक तार आया था जिसमें लिखा हुआ था "यदि सब युक्तियां असफल हो जाती हैं तो अधिवेशन को भी समाप्त कर दो।"

सूरत अधिवेशन में चली चालों से पता चलता है कि उग्रवादियों ने इस आदेश का पूरा पूरा पालन किया था। यह सच है कि उग्रवादी और मध्यमार्गी

दलो के दृष्टिकोण और कार्यपद्धति में बहुत अन्तर था। इस मतभेद को देखते हुए इन लोगों में फूट पड़ना अनिवार्य ही था। उग्रवादियों ने अपना मार्ग निर्धारित कर लिया था और वे इस दिशा में चलने के लिए दृढ़निश्चित थे। दूसरी ओर मध्य-मार्गी भी उन सिद्धान्तों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे जिनका पालन वह बहुत समय से करते आ रहे थे। मध्यमार्गी दल का नेतृत्व फिरोजशाह कर रहे थे। गोखले और कुछ योग्य निष्ठावान व्यक्ति फिरोजशाह की सहायता कर रहे थे। फिरोजशाह नेतत्व के काम में बहुत निपुण थे और सिद्धान्तों के मामले में बहुत दृढ़-सकल्पशील थे। ऐसे प्रतिद्वन्द्वी के सिद्धान्त में परिवर्तन कराना अथवा उसे कुचल देना असम्भव था। यह आशा करना व्यर्थ था कि यह दोनों दल कोई साझा कार्य-क्रम बनाएंगे या अधिक देर तक एक ही सभामंच पर कार्य करेंगे। सूरत में जो कांड हुआ उसका कारण सिद्धान्तों का मतभेद नहीं था। यह तो एक आयोजित गुंडागर्दी थी। इस कांड ने राष्ट्रीय आन्दोलन के मुह पर कालिख पोत दी और यह कलक बहुत समय तक आन्दोलन से चिपटा रहा। सूरत कांड ने राजनतिक जीवन में कटुता ला दी। भविष्य के घटनाचक्र पर भी इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ा।

सूरत कांड के दूसरे दिन उग्रवादी दल ने जब अपनी करतूत पर दृष्टि डाली तो उन्हें पता चला कि उनसे भारी भूल हो गई है। खापर्डे ने मृदुभाषी शब्दों में कहा "उन घटनाओं का कारण चाहे कुछ भी हो परन्तु उनके ऊपर सबको क्षोभ है तथा सब लोगों की इच्छा है कि दोनों दलों में सुलह सफाई हो जाए, जिससे कांग्रेस आन्दोलन आगे बढ़ाया जा सके।' उग्रवादी दल का यह भलीभांति पता चल गया कि अधिवेशन को नष्ट करके, उन्होंने एक ऐसे शक्तिशाली शस्त्र को खो दिया है जिसके द्वारा उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता मिल सकती थी। उग्रवादी दल इस बात के लिए बहुत चिन्तित था कि इस भूल से जो हानि हुई है उसकी क्षतिपूर्ति की जाए। इन लोगों ने संयुक्त कांग्रेस बनाने के लिए, जोरशोर से प्रचार करना आरम्भ कर दिया। इस दल ने यह प्रमाणित करने का भरसक प्रयत्न किया कि कांग्रेस के दो दलों के बीच परस्पर मतभेद ऐसे नहीं है जो असाध्य हों।

इस प्रकार से भूपेन्द्रनाथ वसु जैसे समझदार और गम्भीर व्यक्ति भी, जो उग्रवादियों को कांग्रेस से बाहर रखने का निश्चय किए हुए थे, दुविधा में पड़ गए। इनके कदम डगमगाने लगे। इन्होंने फिरोजशाह को पत्र लिखा और उनसे पूछा कि कांग्रेस के दोनों दलों के बीच पुनर्मिलन के प्रस्ताव के बारे में उनकी क्या राय है। फिरोजशाह ने जो उत्तर दिया उसकी किसी को भी आशा नहीं थी। यह पत्र उग्रवादी शिविर में बम की तरह फटा। फिरोजशाह ने अपने पत्र में लिखा "मैं यह कहने के लिए विवश हूं कि आजकल दोनों दलों के बीच, किसी भी मूल्य पर मेलमिलाप के जो भावपूर्ण अनुरोध किए जा रहे हैं उनके पीछे ऐसी भावुकता है जिससे मिचली आती है। मेरा निजी विचार तो यह है कि जिन लोगों के सिद्धान्त पृथक हैं उनकी अपनी पृथक संस्था होनी चाहिए। इन दोनों दलों को एक जगह ठूंस देने से कोई लाभ नहीं निकलेगा। इससे हानि यह होगी कि किसी भी प्रश्न पर मतभेदों की गहराई की थाह लेना सम्भव न होगा। इसलिए ठीक यही रहेगा कि जिन व्यक्तियों के एक जैसे मत और सिद्धान्त हैं वे अपनी अलग संस्था बना लें। इस प्रकार वे व्यक्ति सुस्पष्ट और सुसंगत रूप से जनता के सामने अपने विचार रख सकेंगे और अपने सिद्धान्तों का प्रचार कर सकेंगे। जनता के सामने किसी भी प्रश्न पर, उस राजनीतिक संस्था के विचार होंगे तथा जनता सोचविचार कर, समझकर निर्णय करेगी, यदि वह उस राजनीतिक संस्था से सहमत होगी तभी उसका समर्थन करेगा।

"ईश्वर के लिए एकता के निरर्थक और भावुकतापूर्ण विलाप को बंद करो क्योंकि एकता कहीं है ही नहीं। हरएक दल जिसका अपना पृथक दृष्टिकोण और सिद्धान्त है अपनी अपनी संस्था बनाए। यही एक सीधा और ईमानदारी का रास्ता है। हममें से कौन सही रास्ते पर है और कौन पथभ्रष्ट है, इसका निर्णय परमात्मा अर्थात सत्य और बुद्धिमत्ता करेगी।"

यह पत्र बहुत विस्तृत रूप में छपा तथा देशभर में इसकी चर्चा हुई। देश के गम्भीर राजनीतिज्ञों ने इस पत्र के पुरुषोचित स्वर और सहज बुद्धि की प्रशंसा की। उग्रवादी नेताओं ने इस पत्र की उतनी ही अधिक निन्दा की। इन लोगों को इस बात पर क्रोध था कि इस पत्र ने एक ही प्रहार में इनके एकता आन्दोलन को

जिससे काग्रेस मे खलबली मच गई। मनानीत अध्यक्ष मिश्र देश की नरसिंह मूर्ति की भाति मौन और रहस्यमय थे। भाति भाति की अफवाह फलने लगी तथा लोगो न तरह तरह की अटकलें लगानी शुरू कर दी। कुछ लोगा का कहना था कि उन्हें अपने साथिया और अनुयायियो पर विश्वास नही रहा और वह दोबारा अपना अपमान नहीं कराना चाहते तथा मारपीट की जोखिम नही उठाना चाहते। दूसरे व्यक्तियो का अनुमान था कि लाहौर का अधिवेशन या तो बिलकुल निर्जीव होगा या वहा दगा फसाद होगा जिस कारण फिरोजशाह ऐसे अधिवेशन की अध्यक्षता करने के इच्छुक नही हैं। कुछ अन्य लोग यह भी कहत थे कि बहुत से क्षेत्र फिरोजशाह के विरुद्ध है, उन्होंने अध्यक्षता इसलिए स्वीकार की थी कि उनके निर्वाचित होने पर कदाचित यह विरोध धीरे धीरे समाप्त हो जाएगा परन्तु ऐसा नहीं हुआ। कुछ दिन पहले उनकी तीव्र आलोचना की गई। यह देखकर कि अध्यक्ष पद के लिए उनकी उपयुक्तता पर सब दलो को विश्वास नही रहा है, उन्होंने स्वाभाविक आवेश म आकर त्याग दे दिया है। लोग इस प्रकार के अनुमान लगा रहे थे।

फिरोजशाह एक उत्साही और निर्भीक लड़ाके थे। उनके समस्त जीवन का इतिहास दखते हुए, उनका त्यागपत्र सामजस्यहीन लगता था। जिस दिन उन्होंने निर्भीकता से बम्बई के म्युनिसपल कमिश्नर के प्रशासन का समथन किया, उस समय वह एक नवयुवक थे तथा बहुत से व्यक्ति उनके शत्रु थे और उनकी आलोचना किया करते थे परन्तु वह इस आलोचना से कभी नही डरे। उस दिन से ही उन्होने कभी भी अपने सिद्धा तो का सौदा नहीं किया न ही शत्रु को अधिक शक्तिशाली समझकर उन्होंने कभी भी पीठ ही दिखाई। यह देखते हुए हम निश्चय से कह सकते हैं कि उनके त्यागपत्र का कारण भय नही था। फिरोजशाह के त्यागपत्र देने का कारण चाहे कुछ भी हो, यह कहना पड़ेगा कि उनका यह निणय विवेकपूण न होकर खेद-जनक रहा। देश म गडबड और अशान्ति थी। असन्तोष की लहर सारे देश मे फल गई थी। अराजकता ने फिर अपना घिनौना सिर उठाया था और इसके रक्तरंजित हाथ बराबर बढत जा रहे थे। तक और नरमाई की आवाज सुनाई नही पडती थी। सरकार भी प्रतिक्रियात्मक नाति अपना रही थी। अशान्ति और अराजकता की शक्तियो क साथ साथ दमन भी बढता जा रहा था। राजद्रोह और अराजकता को

रोकने के लिए सरकार दमनकारी कानून पास करती परन्तु यह सब व्यर्थ था। अराजकता और राजद्रोह की लहर को सुधार योजनाएं भी न रोक सकीं।

ऐसी स्थिति में यह सहज ही समझा जा सकता है कि देश फिरोजशाह के नेतृत्व की अपेक्षा कर रहा था। लोग इस बात की प्रतीक्षा कर रहे थे कि सरकार और जनता के रवैये के बारे में फिरोजशाह कोई महत्वपूर्ण घोषणा करेंगे। लोगों की यह प्रतीक्षा व्यर्थ ही गई। देश को सच्ची राजनीति सिखाने और उन्हें प्रबल आशावाद से प्रभावित कराने में फिरोजशाह के समान दूसरा कोई नहीं था। फिरोजशाह ही ऐसे व्यक्ति थे जो लोगों को शान्तिपूर्ण उन्नति के विश्वास से प्रेरित कर सकते थे। अकस्मात ही फिरोजशाह पीछे हट गए, और इनके अनुयायी विस्मित और असहाय खड़े देखते रह गए।

———

अध्याय 24

मार्ले-मिण्टो सुधार योजना

1907-1909

1905 के अन्त मे इगलैंड मे उदारवाद का बहाव आया। उसी समय लार्ड कर्जन ने भारत से प्रस्थान किया। लोग आशा करने लगे कि भारत के प्रशासन म सुधार किया जाएगा। फिरोजशाह का विश्वास था कि भारत का उद्धार इगलैंड के उदार दल क हाथो होगा और वह यह बात कहते कभी नही थकते थे।

लार्ड कर्जन के पश्चात लार्ड मिण्टो वायसराय बनकर आए। अपने आगमन के थोडे ही दिनो बाद उन्होने अगस्त 1906 मे, अपनी कौंसिल की एक छोटी सी कमेटी बनाई। इस कमेटी का काम था कि केन्द्रीय और प्रादेशिक लेजिस्लेटिव कौंसिलो मे निर्वाचित सदस्यो की सख्या बढाने पर विचार करें। ससार म जो भारी परिवतन आ रहे थे, वायसराय उन्हें समझते थे

"रूस के ऊपर जापान की विजय से सारा एशिया आश्चर्यचकित हो गया था, इस विजय के बहुत ही व्यापक परिणाम निकले। ससार भर के देशो के सामने नए अवसर विद्यमान हुए। एसा प्रतीत होता था कि फारस, मिस्र और तुर्की मे सावजनिक आन्दोलन चलेंगे। पूव के देश जागृत हो चुके थे। भारत म कोई प्रचड राजनतिक आन्दोलन नही चल रहा था। इससे, बाहर से ऐसा प्रतीत होता था कि यहा शान्ति है परन्तु अधिक समय तक देश का इस सवव्यापी आन्दोलन स प्रभावित न होना असम्भव था।"

लाड मिण्टो चाहत थे कि जो भी सुधार वह करें उनके बार म एसा न लग कि य सुधार उन्होने राजनैतिक आन्दोलन स डरकर अथवा इगलैंड की सरकार के दबाव म आकर किए हैं। वह सुधार के काय म बडी सदभावना और उत्साह स जुट गए। यथासम्य सरकार का सुधार योजना प्रकाशित हुई। लागा न देखा कि इस सुधार याजना की रचना बहुत हा सकीण मनोवत्ति स की गई है इस सुधार याजना के निमाता जान मार्ले थ परन्तु इस याजना म उस उदार राजनीतिज्ञता का आभास नही दिखाई दता था जिसक लिए जान मार्ले प्रसिद्ध थे। भारत म स्थिति विकट हाती जा रही थी अशान्ति और अराजकता की शक्तिया बलवान हो रही थी और प्रचड रूप धारण कर रही थी। इन्ह दबान के लिए सरकार ऐसे दमनात्मक कानून लागू कर रही थी जस कि दख न कभी न दख थे। प्रेस एक्ट एक एसा ही कानून था। इस कानून को लजिस्लटिव कौसिल म सर एस० पी० सिन्हा ने प्रस्तुत किया। सर एस० पी० सिन्हा केन्द्रीय लजिस्लटिव कौसिल क कानून सदस्य थे। यह अभी अपन राजनतिक जीवन क शिखर पर नही पहुच थे। गोखल और गरसरकारी सदस्यो न बहुमत स इस बिल का हार्दिक समथन किया और यह बिल पास होकर कानून बन गया।

इस समय यह बात उल्लेखनीय है कि अधिवशन की समाप्ति पर जब गोखले लौट ता फिरोजशाह न बिल क प्रति उनके रवय पर अपना तीव्र विरोध प्रकट किया। गोखले न अपनी सफाइ म कहा कि वह बिल का समथन करन का विवश हो गए थ क्योकि सरकार न यह प्रमाणित कर दिया था कि भारतीय पत्रो म बहुत से लेख राजद्रोह का प्रचार करत हैं। फिरोजशाह इस उत्तर से सन्तुष्ट नही हुए। उन्होन क्रोध स कहा कि आवश्यकता के नाम पर भी गरसरकारी सदस्यो का यह उचित नही था कि वह इस बिल का समथन करत। फिरोजशाह ने कहा कि सरकार न नीति क प्रश्नो पर जनता के नेताओ की बात कभी नही मानी परन्तु दमनात्मक कानून बनात समय सरकार यह चाहती है कि जनता के नेता दायित्व और कलक के भागी बने। उनका कहना था कि प्रस बिल का समथन करना लेजिस्लेटिव कौंसिल के भारतीय सदस्यो की भारी भूल है। उन्हे चाहिए था कि सरकार से माग करते कि भारतीय पत्रो मे होने वाले हिंसात्मक प्रचार के मूल

कारणा की जाच कराए। गोखले चुपचाप सुनते रहे, कदाचित उनका विचार था कि फिरोजशाह उग्र रवया अपना रह हैं।

सच तो यह है कि गोखले ने वास्तव में बिल का समर्थन नहीं किया। भारतीय पत्रों में उन दिनों प्रकाशित होने वाले उग्रता भरे लेखों को देखते हुए, उनके अन्तःकरण ने यह अनुमति नहीं दी कि इस बिल के सिद्धान्त का विरोध कर सकें।

सुधार योजनाओं से सम्बन्धित घटनाओं का वृत्तान्त हम पुनः आरम्भ करते हैं। लोगों का जान मार्ले से विश्वास उठ गया। जान मार्ले ने अपने राजनैतिक सिद्धान्त उस समय के महान विचारकों से ग्रहण किए थे परन्तु इनकी कार्यपद्धति नीरस अफसरशाही से भिन्न न थी।

मूल सुधार प्रस्तावों पर जो आलोचना हुई वह बुद्धिमत्तापूर्ण और उपयोगी थी। फरवरी 1909 में बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन ने सरकार को एक शिष्ट और प्रभावशाली आवेदनपत्र भेजा। इस आवेदनपत्र को स्वयं फिरोजशाह ने तैयार किया था। इसमें सुधार योजना की प्रतिगामी रूपरेखा, जैसे कि सलाहकार परिषदों का निर्माण, लेजिस्लेटिव कौंसिलों में मताधिकार की संकीर्णता, सरकारी सदस्यों के बहुमत का अनुरक्षण तथा जनता को देश के प्रशासन में भाग देने से इन्कार इत्यादि का विश्लेषण किया गया था।

यदि सरकार यथार्थ में लोगों की राय लेना चाहती थी तो इस आवेदनपत्र से उसे काफी सामग्री मिल सकती थी। ऐसे ही और भी आवेदनपत्र देश के हर भाग से सरकार को आए थे। इसके अतिरिक्त इंगलैंड के भारत मंत्री का भारतीय दृष्टिकोण के प्रतिपादकों से बराबर सम्पर्क बना हुआ था। यह थे अथक परिश्रमी गोखले, दूरदर्शी वेडरबर्न और लार्ड रिपन जैसे महान और आदरणीय राजनीतिज्ञ जिन्होंने सबसे पहले भारत में स्वतंत्रता की भावना का संचार किया था। ये महानुभाव भारत मंत्री को अपनी राय देने के लिए हर समय तत्पर थे। मि० मार्ले यद्यपि फूंक फूंककर कदम रखते फिर भी कभी कभी रूढ़िवादी बन जाते। यह

बहुत दृढप्रतिज्ञ और दयालु थे। कुछ महान सिद्धान्तों में इनकी पूर्ण निष्ठा थी जिसके कारण इनकी गणना उस समय के उन राजनीतिज्ञों में थी जिनसे लोगों को प्रेरणा मिलती थी।

उपरोक्त व्यक्तियों के कारण मिण्टो मार्ले की योजना एक ऐसी रूपरेखा धारण कर चुकी थी जो भारत के जिम्मेवार राजनेताओं को संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त थी। इस योजना के प्रसिद्ध रचयिता यह चाहते थे कि मध्यमार्गी दल सरकार का समर्थन करे। उनकी यह इच्छा पूरी हुई।

समाचार पत्र 'टाइम्स आफ इण्डिया' के एक प्रतिनिधि ने 15 दिसम्बर 1908 को फिरोजशाह से भेंट की और सुधार प्रस्तावों के बारे में उनके विचार पूछे। फिरोजशाह ने कहा कि यह योजना सरकार द्वारा सुधार की एक निष्कपट चेष्टा है और वह इससे संतुष्ट हैं। उन्होंने कहा कि इस योजना ने उनकी उक्ति को सत्य प्रमाणित किया है। फिरोजशाह कहा करते थे कि भारत सरकार के वैधानिक संगठन को सुधारने के लिए ठोस कदम केवल इंग्लैंड का उदार दल ही उठाएगा। उनका निश्चय था कि कोई अनुदार दलीय सरकार ऐसी सुधार योजना का निर्माण नहीं कर सकती।

समाचार पत्र 'कैपिटल' के बम्बई संवाददाता ने उत्साह की उमंग में आकर कहा कि मार्ले मिण्टो सुधार फिरोजशाह की व्यक्तिगत विजय है।

मार्ले मिण्टो सुधार योजना के अन्तर्गत बनाए गए नियम विनियमों की रूपरेखा प्रतिगामी थी। इसके कारण योजना का मूल्य और उद्देश्य काफी हद तक कम हो गए। जनता ने मांग करनी शुरू की कि देश के प्रशासन में उन्हें भी भाग मिलना चाहिए। यह मांग 1909 के कानून और उसके अन्तर्गत बनाए नियमों से बहुत भिन्न थी, जिनके अन्तर्गत जनता को सरकार की नीतियों को प्रभावित करने का अवसर तो मिलना परन्तु उन्हें देश के शासन में भाग लेने का अधिकार नहीं था।

अध्याय 25

लार्ड साइडन्हैम और बंबई विश्वविद्यालय

1909 1912

लार्ड कर्जन का दावा था कि भारत में उच्च शिक्षा के जन्म का श्रेय उनके विश्वविद्यालय कानून को जाता है परन्तु उनकी अवकाशप्राप्ति के बाद उनकी कई दूसरी महत्वाकांक्षी योजनाओं की तरह उच्च शिक्षा सम्बन्धी योजनाएं भी खटाई में पड़ी रहीं कार्यान्वित न हो सकीं। इन योजनाओं से सम्बन्धित कई ऐसी विकट समस्याएं थीं जिनका समाधान नहीं हो सका था। सर जार्ज क्लार्क बम्बई के गवर्नर नियुक्त हुए और उन्होंने लार्ड कर्जन के कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। सर जार्ज का यह निश्चय वादविवाद का कारण बन गया।

नए गवर्नर आते ही अपने कार्य में जुट गए। 18 दिसम्बर 1908 को सरकार ने विश्वविद्यालय को पत्र लिखा। इससे इन दोनों के बीच युद्ध छिड़ गया। यह पत्र विश्वविद्यालय के उस पत्र के उत्तर में था जिसमें सीनेट की ओर से पाठ्यक्रम में संशोधन के सुझाव दिए गए थे और इस विषय पर कुलपति की सलाह मांगी गई थी। सरकार ने अपने पत्र में लिखा था कि विज्ञान और उच्च शिक्षा को आधुनिक ढंग से चलाने के लिए, उच्च शिक्षा प्रणाली में मौलिक सुधारों की आवश्यकता है।

सरकार के सुझाव संक्षिप्त में ये थे—मैट्रिकुलेशन और प्रीवियस परीक्षा को समाप्त कर दिया जाए और उसके स्थान पर कालेज की परीक्षा हो, अनिवार्य विषयों को कम कर दिया जाए और ऐच्छिक विषयों की संख्या बढ़ाई जाए। विज्ञान

और आम शिक्षा को मजबूत किया जाए और विश्वविद्यालय की भिन्न भिन्न परीक्षाओं के विषयों और पाठ्यक्रमों में संशोधन किया जाए।

सरकार के इन सुझावों पर विचार करने के लिए सीनेट ने मार्च 1909 में एक समिति नियुक्त की। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट उसी साल अक्तूबर में प्रस्तुत कर दी परन्तु इस पर विचार अगले वर्ष ही हो सका। सीनेट में इस रिपोर्ट पर 15 जनवरी 1910 को बहस हुई। इस सभा के अध्यक्ष सर नारायणचन्द्र वरकर थे जो उस समय उपकुलपति थे। यह रिपोर्ट निराले ढंग की ही थी। इसके ऊपर कमेटी के 6 सदस्यों ने हस्ताक्षर किए थे और 7 सदस्य ऐसे थे जो इस रिपोर्ट से असहमत थे।

जब यह रिपोर्ट सीनेट के सामने रखी गई तो फिरोजशाह ने प्रस्ताव रखा कि सरकार के पत्र और कमेटी की सिफारिशों को रिकार्ड किया जाए। कमेटी ने सरकार द्वारा दिए गए सब सुझावों को रद्द कर दिया और इन विषयों पर बहुत विस्तार से वादविवाद हुआ। फिरोजशाह ने एक भाषण दिया और इस प्रश्न पर सरकार के रवये की घोर निन्दा की। फिरोजशाह इस विषय पर डेढ़ घण्टे बोलते रहे फिर भी उनका भाषण समाप्त नहीं हुआ। उनके एक आलोचक ने व्यंग किया कि यह लम्बा भाषण फिरोजशाह के बल का ही नहीं बल्कि श्रोतागणों की सहनशक्ति का भी प्रमाण है। फिरोजशाह ने अपने भाषण में कहा कि सीनेट के कार्य में सरकार का हस्तक्षेप बहुत ही अनुचित मूर्खतापूर्ण और नीतिविरुद्ध है। उनका कहना था कि सीनेट के संविधान को देखते हुए हर सदस्य का विचार है कि विश्वविद्यालय की स्वाधीनता और स्वत्व को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा सुधार सम्बन्धी सुझाव पहले शिक्षा शास्त्रियों द्वारा दिए जाएं और बाद में उन्हें गवर्नर की मंजूरी के लिए भेजा जाए। शिक्षा प्रणाली के सिद्धान्तों और योजना बनाने का काम सीनेट के विवेक और सामूहिक बुद्धिमानी पर छोड़ देना चाहिए। इस क्षेत्र में सरकार द्वारा हस्तक्षेप अवधानिक, अनुचित और मूर्खतापूर्ण होगा।

इस विषय पर बहुत लम्बी बहस चली और सीनेट की तीन बैठकों में इस

विषय पर वादविवाद चलता रहा। फिराजशाह के प्रस्ताव का पहला भाग, जिसम सरकार के पत्र और कमेटी की रिपाट को रिकाड करने का सुझाव था, स्वाकृत कर लिया गया। इसके वाद उनके द्वारा प्रस्तुत दूसरे प्रस्तावा के ऊपर, विशेपत उस प्रस्ताव पर जो मट्रिक की परीक्षा म सम्बधित था झगडा हुआ। फिराजशाह चाहत थे कि यह परीक्षा वनी रह जबकि सरकार और सीनेट म उसक समथक इस परीक्षा को समाप्त करना चाहत थे। फिरोजशाह ने इस प्रश्न पर वादविवाद की तुलना विवाह का समाप्त करन के विपय पर होने वाले एक काल्पनिक वादविवाद से की। उन्होन कहा कि विवाह प्रथा मे भी बहुत सी त्रुटिया और असुविधाए हैं। पर तु इसके कारण इस प्रथा का ही समाप्त कर दना, कहा तक ठीक होगा? उनके इस सीधे सीधे तक न कितने वोट जीत, यह कहना तो सम्भव नही पर तु उनके प्रस्ताव को भारी बहुमत प्राप्त हुआ। इस अभागी परीक्षा का दशा दो घोडा के बीच फुटवाल की तरह थी। फिरोजशाह के प्रयत्न के कारण कम से कम उस समय तो यह परीक्षा तथाकथित सुधारका के विनाशकारी उत्साह स बच गई।

इसके थोडे ही समय वाद फिराजशाह ने यूरोप के लिए प्रस्थान किया और वह आगामी वप के आरम्भ मे भारत लौट। उनकी अनुपस्थिति म सरकार का अच्छा अवसर मिला। मि० शाप जनशिक्षा के निदेशक थे और सीनट म सरकार क प्रवक्ता थे। इ होने मैट्रिक परीक्षा की समाप्ति को छोडकर सरकार के सब सुझाव फिर से सीनेट के सामने रखे। अक्तूबर 1910 म सीनेट ने यह सुझाव मान लिए। इन सुझावा मे कुछ सशोधन ऐसे जरूर कर दिए गए थे, जिनका अभिप्राय था कि सक्रा ति काल मे कोई कठिनाई न आए और शिक्षा का नरतय बना रहे।

कला पाठयक्रम के विस्तत नियम बनाने के लिए एक कमेटी नियुक्त की गई। अभागी प्रीवियस परीक्षा कुछ समय के लिए तो छोड ही दी गई पर तु यह ज्यादा दर जीवित न रही। 25 जनवरी, 1913 का सरकार ने इस परीक्षा का मृत्यु-आदेश भी जारी कर दिया।

उपरोक्त कमेटी ने यथासमय अपनी रिपोर्ट सीनेट को प्रस्तुत की। 17 जुलाई, 1911 को सीनेट ने इस रिपोर्ट पर विचार किया। इस कमेटी ने सिफारिश की थी कि बी० ए० की परीक्षा के आवश्यक विषयों में से इंगलैंड के इतिहास को हटा दिया जाए। यह एक प्रतिक्रियात्मक सुझाव था और इस पर बहुत गर्मागर्मी हुई। इस प्रस्ताव का मि० नटराजन ने प्रस्तुत किया जो समाचारपत्र इंडियन सोशल रिफार्मर के प्रतिभाशाली सम्पादक थे। इस प्रस्ताव के पीछे सरकार की सारी शक्ति लगी हुई थी। सरकार की ओर से इस बिल का समर्थन प्राप्त करने के लिए एक सचेतक जारी किया गया था। प्रतिक्रियात्मक सरकार के आदेश का पालन करने के लिए एक कृत्रिम बहुमत तैयार हो गया था। कारण यह था कि नौकरशाही डरती थी। सरकार नहीं चाहती थी कि देश के अपरिपक्व युवकों को अंग्रेजी इतिहास पढ़ने का अवसर मिले जो कि स्वतन्त्रता के संघर्ष की वीरगाथा है। सरकार चाहती थी कि विशेषज्ञता के पवित्र नाम की आड़ लेकर ऐसे साहित्य को पाठ्यचर्या से निकाल दिया जाए।

फिरोजशाह ने इस परिवर्तन का जोरदार विरोध किया। सरकार इस परिवर्तन को ऐसे ढंग से लागू करना चाहती थी कि सीनेट को इस परिवर्तन के गुण अथवा दोष पर विचार करने का अवसर ही न मिले। गोखले ने सरकार द्वारा सचेतक जारी करने की ओर संकेत किया था। मि० शार्प, जो जनशिक्षा के निदेशक थे, ने उत्तर में यह कहा कि क्या फिरोजशाह ने कभी सचेतक जारी नहीं किया। फिरोजशाह को इस आक्षेप पर बहुत क्रोध आया। उन्होंने इसका खंडन करते हुए कहा

मि० शार्प को यह जानकर अचम्भा होगा कि मैंने अपने चालीस साल के राजनैतिक जीवन में कभी कोई सचेतक जारी नहीं किया। इस चालीस साल के समय में केवल नगरपालिका में ही नहीं बल्कि प्रान्तीय और केन्द्रीय कौंसिलों में भी काम करने का मुझे सौभाग्य मिला है। सचेतक जारी न करने का भी एक कारण है। वह यह कि मेरा भरण पोषण उन महान व्यक्तियों की ऐतिहासिक परम्पराओं में हुआ है जिन्होंने इस प्रान्त की शिक्षा नीति का निर्माण किया था। मुझ जैसे लोगों के मन में इन महान व्यक्तियों की परम्परा और चरित्र के प्रति बहुत आदर है।

इनसे हम लोगो ने यह सीखा है कि विश्वविद्यालय की सीनेट जैसी सस्था म सचेतक जारी करना बहुत ही अनतिक, अनुचित और आपत्तिजनक होगा।"

फिरोजशाह का दृढ विश्वास था कि यदि सीनेट सरकार के आगे झुक गई तो इसका परिणाम यह होगा कि इस शिक्षा प्रणाली से विद्यार्थियो की सस्कृति और विकास निष्प्रभ हो जाएगे। उनका निश्चय था कि इगलिश इतिहास का अध्ययन लोगो के लिए विशेषत नए शिक्षित वग के लिए अति आवश्यक है। फिरोजशाह की वाग्मिता और पैनी तकपटुता बहुधा पराजय का जीत म बदल देती थी। इस अवसर पर कुलपति के सचेतक के कारण बहुमत सरकारी पक्ष के साथ था और फिरोजशाह अपने प्रयास में असफल रहे। सीनेट न नटराजन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

उपरोक्त घटना के कुछ मास पश्चात विश्वविद्यालय की सिण्डीकेट ने बी०ए० की परीक्षा के नियमो म सशोधन किए और इस नियमावली को सीनेट के सामने अनुमोदनाथ रखा। इस अवसर पर फिरोजशाह न अग्रेजी इतिहास को अनिवाय विषयो की सूची मे रखन का सशोधन प्रस्ताव पश किया। उपकुलपति का निणय था कि फिरोजशाह का प्रस्ताव नियमविरुद्ध है। फिरोजशाह की इच्छा थी कि इस प्रश्न का निणय करने स पहले उन्हे बोलन का अवसर दिया जाए। उन्होंने बोलन की चेष्टा भी की परन्तु उपकुलपति महोदय के दुराग्रह के सामन उनकी नही चली। उन्हे बोलन की अनुमति नही दी गई।

लाड साइडनहैम न ऐसे ही कुछ और सुधार करन की ठानी थी। बाद म होन वाली सीनेट की बठकों म इन सुधारो का अनुमोदन कर दिया गया। यह सघष बहुत लम्बा था। इसम विजय तो सरकार की हुई परन्तु सम्मान विरोधी दल को मिला।

समारोह म भाग लेन म असमय होने के कारण खेद प्रकट किया । उन्होंने इस सदश म कहा कि मुझे विश्वास है कि यह समारोह सफल होगा क्योंकि सब लोग बम्बई नगर के प्रति फिरोजशाह की उच्च सवाओं की प्रशसा करते थे । भारत के श्रेष्ठ नेता दादाभाई नौरोजी ने भी एक पत्र भेजा । उन्होंने लिखा कि फिरोजशाह न बम्बई नगर और सारे देश की जो महान सेवाए की हैं उन्हे ध्यान म रखते हुए, वह जनता की कृतज्ञता के सुपात्र है ।

फिरोजशाह को ऐसे अवसरों पर कृतज्ञता प्रकट करना अच्छी तरह आता था । उन्होंने इस सम्मान के लिए सभा को धन्यवाद दिया । भाषण म उन्होंने लोगो को अपने प्रारम्भिक जीवन का एक घटना के बारे म बताया । उन्होंने कहा

मुझे स्मरण है कि जब मैंने राजनतिक जीवन म कदम रखा तो मेरे सामने दो रास्ते थे । एक रास्ता था जनसेवा का जिसका अर्थ है सरकारी नौकरी । दूसरा रास्ता था जनता की सेवा का । मेरे बहुत से घनिष्ठ मित्रों को भी यह पता नहीं कि इंगलैंड मे वकालत की परीक्षा पास करने के थोड़े ही समय पश्चात एक उच्च सरकारी अधिकारी ने बुला भेजा । वह बहुत उदार और सुसस्कृत पुरुष थे । उन्होंने मेरे सामने प्रस्ताव रखा कि मैं प्रथम श्रेणी के सब जज का ओहदा स्वीकार कर लू ।

यह एक ऐसी समस्या थी जिसका समाधान मुझे ही करना था । मैं वकील बन गया था परन्तु उन दिनों मेरे कुछ मित्र मुझे ताना दिया करते थे कि मेरी आमदनी इतनी ही है कि मैं आइसक्रीम की दुकान पर जा सकू । फिर भी मन बिना किसी हिचकिचाहट के जनता की सेवा का मार्ग चुना । मैं आप लोगो के सत्कार का धन्यवाद करता हू । इस सत्कार का अर्थ है कि आप लोग यह समझते हैं कि मैं पिछले चालीस साल मे जनता का थोड़ा-बहुत स्थायी कल्याण करने म समर्थ हुआ हू और अपने जीवन के यह चालीस वर्ष मैंने व्यर्थ नहीं खोए ।

23 अप्रैल को फिरोजशाह ने इंगलैंड की ओर प्रस्थान किया । इनकी दूसरी धर्मपत्नी भी थी । इनका पहला विवाह उस समय हुआ था जब यह वकालत पढने इंगलैंड जा रहे थे । इन्हे जहाज म मतली के कारण बहुत तकलीफ हुई थी । परन्तु

इस बार इन्हें ऐसा कोई कष्ट नहीं हुआ। नेपल्ज, रोम, फ्लोरेंस और दूसरे नगरों में ठहरते हुए इनकी मंडली एक जून को पेरिस पहुंची।

जहां भी यह गए समाचार पत्रों में इनके आगमन की चर्चा हुई। अपने व्यक्तित्व और वेशभूषा के कारण यह हजारों लोगों की भीड़ में भी पहचान जाते। इनके ठाठ बाट और तुर्की टोपी को देखकर होटल के मैनेजर को यह भ्रम हो गया कि शायद यह फारस के सम्राट हैं।

यूरोप में ये अधिक दिन नहीं रहे। इनकी रुचि और आदतें ऐसी थीं कि सरसपाटे से शीघ्र ही ऊब गए। यह चाहते थे कि जितनी जल्दी हो सके लन्दन पहुंच जाएं, जहां इनके दोस्त इंगलैंड के मुख्य नेताओं से इनकी भेंट कराने के लिए उत्सुक थे। लंदन और इंगलैंड के प्रादेशिक समाचार पत्रों में इनके आगमन की चर्चा हुई। जिन क्षेत्रों में भारतीय हितों के प्रति सहानुभूति थी उन्होंने फिरोजशाह के आगमन में बहुत दिलचस्पी ली।

सर विलियम वेडरबर्न भारत के पुराने मित्र थे। वह बंगाल के बटवारे की समस्या का समाधान करने के लिए फिरोजशाह का सहयोग चाहते थे। इस सम्बन्ध में उन दिनों इंगलैंड में बंगाल का एक प्रतिनिधिमंडल आया हुआ था, जिसका नेतृत्व सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और भूपेन्द्रनाथ बसु कर रहे थे। यह प्रतिनिधिमंडल बंगाल प्रान्त के बटवारे को समाप्त करने के लिए लार्ड मार्ले से निवेदन करने आया था। सर विलियम को डर था कि इस औपचारिक और सार्वजनिक प्रतिनिधिमंडल का परिणाम विपरीत ही निकलेगा और भारत की प्रगति के शत्रु समाचारपत्रों और संसद में नागरत शुरू कर देंगे। सर विलियम चाहते थे कि बंगाल प्रान्त की ओर से वकालत का कार्यभार फिरोजशाह सम्भालें।

फिरोजशाह लार्ड मार्ले और उनके उत्तराधिकारी लार्ड क्रयू से मिले और उनसे बहुत समय तक विचार विमर्श किया। उन्होंने नए वाइसराय लार्ड हार्डिंग से भी भेंट की। लार्ड हार्डिंग भारत की राजनैतिक स्थिति के सम्बन्ध में फिरोजशाह जैसे विख्यात नेता के विचार जानने के विशेष इच्छुक थे। बंगाल के नेता उस प्रदेश के बटवारे को घोर अन्याय समझते थे और सर विलियम वेडरबर्न उस अन्याय को

समाप्त करने का प्रयास कर रहे थे। फिराजशाह के प्रयत्न से सर विलियम वडरबन को अपने काय मे बहुत सहायता मिली।

फिराजशाह का दूसरा काय था हिन्दुओ और मुसलमानो के बीच चले आ रहे मतभेदा का निपटारा करना। शिक्षा के अभाव के कारण मुसलमान समुदाय की स्थिति कमजोर थी। यह समुदाय अभी तक राष्ट्रीय जीवन के प्रवाह से लगभग पृथक ही रहा था और उ हाने अभी तक एक अनुवर नीति का अनुसरण किया था। अब समय आ गया था कि इन दोना समुदायो के परस्पर मतभेदो का दूर किया जाए और इनम मेल मिलाप बढाया जाए। सर विलियम वडरबन काग्रस के आगामी अधिवशन की अध्यक्षता करने भारत जा रहे थे। इन लोगो का अभिप्राय यह था कि बम्बई म एक सम्मेलन बुलाया जाए जिसमे दोनो समुदायो के बीच उन मतभेदो को दूर करने का प्रारम्भिक काय किया जाए। काग्रेस के मनोनीत अध्यक्ष सर विलियम वडरबन को, लदन मे एक भोज दिया गया। इस अवसर पर मि० अमीर अली और फिरोजशाह न औपचारिक रूप से हिन्दू मुसलमान काग्रेस का प्रस्ताव रखा। आगा खा न भी इस प्रस्ताव का समथन किया। स्थिति आशाजनक दिखाई द रही थी। फिरोजशाह को विश्वास था कि इस सम्मेलन से दोनो समुदायो के बीच मत्रीभाव बढेगा। उन्ह यह आशा नही थी कि वह इस सम्मेलन में भाग ले सकेंग। सर विलियम की यह इच्छा थी कि यह सम्मेलन फिरोजशाह की छत्रछाया म ही हो। काग्रेस अधिवेशन के पश्चात सर विलियम बम्बई से अपने प्रस्थान को कुछ समय के लिए स्थगित करने को तयार थे यदि फिरोजशाह इगलैंड से कुछ समय पहल बम्बई पहुच जाते परन्तु यह फिरोजशाह के लिए सम्भव नही था।

फिराजशाह का यह अवकाश बहुत आनन्दमय और फलदायक रहा। उनकी उपस्थिति के कारण अग्रेज राजनीतिज्ञा का भारतीय राजनीतिक स्थिति के बारे म ज्ञान हुआ। उनके व्यक्तित्व ने राजनीतिक आ दोनो को बहुत बल प्रदान किया और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई।

अध्याय 27

अन्तिम वर्ष

1911 1915

फिराजनाह के राजनैतिक जीवन के अतिम वप कुछ अश तक उनके जीवन का बहुत ही कठिन समय था। वह दुवल हो गए थे तथा वृद्धावस्था ने उन्हें आ घेरा था। फिर भी बम्बई क स्वच्छाचारी गवनर लाड साइडनहम के आक्रमणो से उन्हें अपना बचाव करना पडता था। बम्बई के गवनर की नीति प्रतिक्रियात्मक थी और फिरोजशाह इसका कड़ा विरोध किया करते थे जिसके कारण गवनर ने इनका नाम फिरोशस (क्रूर) मेहता रख दिया था। एक ओर गवनर थे जो बहुत ही प्रतिभा शाली व्यक्ति थे तो दूसरी ओर फिरोजशाह थे, जिन्होंने इतने समय तक नगर-पालिका, विश्वविद्यालय की सीनेट और प्रादेशिक लेजिस्लेटिव कौंसल पर प्रभुत्व जमाए रखा था। प्रश्न यह था कि हुकूमत किसकी चलेगी, फिरोजशाह की या गवनर की, जिसका दृष्टिकोण एव युद्धनीतिज्ञ के समान था। कहा जाता है कि किसी समय ब्रेकफास्ट में दो राजा थ परन्तु बम्बई म ऐसा होना सम्भव नही था।

शीघ्र ही ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई कि इन दोनो व्यक्तियो के दृष्टिकोण म गहरा सघष पदा हो गया। यह द्वन्द्व विश्वविद्यालय क सुधार के विषय पर शुरू हुआ और वहा से फैलकर कौंसिल तक पहुचा। कौंसिल के वातावरण म अक्सर गर्मागर्मी रहती थी। स्थिति और भी गम्भीर हो गई जब एक उल्लेखनीय अवसर पर गवनर महोदय ने अपने विरोधी दल का मुह बद करने के लिए 'सीमित समय' नियम का सहारा लिया। यह घटना 25 जुलाई, 1911 को पूना में होने वाली लेजिस्लेटिव कौंसिल की बैठक मे हुई।

वार्षिक बजट परिषद के विचाराधीन था। प्रादेशिक कौंसिलो के कर लगाने के अधिकारो के विषय पर बहस चल रही थी। एक वर्ष पहले परिषद् के वित्त सदस्य जान म्योर मकन्जी ने इस प्रस्ताव पर बहुत जोर दिया था कि परिषद को कर लगाने के यथेष्ट अधिकार दे दिए जाएँ, जिससे प्रादेशिक सरकार को अपने खर्च के लिए केन्द्रीय सरकार पर निर्भर न रहना पडे। वित्त सदस्य का कहना था कि जनता और कौंसिल को उनके प्रशासक और वित्तीय उत्तरदायित्व को समझने का यही एक रास्ता है। सैद्धातिक रूप से यह सुझाव बहुत ही प्रशसनीय था और एक वर्ष बाद फजलभाई करीमभाई ने (जिन्हें आगे चलकर सर की उपाधि दी गई) इस प्रस्ताव का समर्थन किया। परन्तु फिरोजशाह इस सुझाव के बिल्कुल विरुद्ध थे। उनका कहना था कि जब तक कौंसिल के सविधान मे परिवर्तन नही होता और जनता को प्रत्यक्ष रूप से इसके सदस्यो के निर्वाचन का अधिकार नही मिलता, उस समय तक कौंसिल को कर लगाने की शक्ति प्रदान करना अनर्थकारी होगा। फिरोजशाह को कौंसिल के गैरसरकारी सदस्यो से कोई लगाव नही था क्योंकि कभी कभी इन लोगो का दृष्टिकोण सरकारी अफसरो से बढकर अनुदार होता था।

फिरोजशाह ने कुछ और कटु सत्य भी सुनाए जिनके कारण लार्ड साइडहम अपना धैर्य खो बैठे। उन्होंने फिरोजशाह की बात काटते हुए कहा

सर फिरोजशाह आपको केवल दो मिनट और बोलने की अनुमति है।' फिरोजशाह क्रोध से बोले

'केवल दो मिनट ! अच्छा तब तो इस बहुमूल्य समय का उपयोग इसी मे है कि मैं नियमो मे दिए गए लार्ड साहब के स्वनिर्णय के अधिकार का विरोध करूं। बजट के पूर्ण प्रस्तावो पर आम बहस मे एक सदस्य को केवल बीस मिनट देने का अर्थ उसका मुह बद करना है।

इस प्रतिरोध के बाद फिरोजशाह ने इस सम्बन्ध मे समाचारपत्रो को एक लम्बा पत्र भेजा। स्वेच्छाचारी गवर्नर ने अवसर मिलते ही फिरोजशाह के इस कार्य की निन्दा की।

ऐसा ही दूसरा अवसर था सुधार न्यास कानून मे सशोधन का बिल। यह बिल कौंसिल के विचाराधीन था। इस सबध म फिराजशाह ने एक सशोधित प्रस्ताव पश किया, जिसे लाड साइड हम ने नियमविरुद्ध ठहराया। इस घटना पर आलोचना करते हुए एक समाचारपत्र न लिखा कि सारी बम्बई सरकार एक तरफ हो जाए और फिराजशाह दूसरी तरफ हो, फिर भी वधानिक कायप्रणाली के ज्ञान म वह उनका मुकाबला नही कर सकती।

इन निरन्तर मतभेदा और झगडा के होते हुए भी फिरोजशाह और गवनर के बीच आदर की भावना बनी रही। फिरोजशाह म यह गुण था कि यदि उनका विरोधी प्रशसा-योग्य हो तो उसकी प्रशसा करने मे वे पीछे नही रहत थ। जब सरकार न बम्बई के गवनर को अवकाश प्राप्ति स पूव लाड की उपाधि देकर सम्मानित किया तो फिरोजशाह न इन्हे एक भावपूण श्रद्धाजलि अर्पित की। फिरोजशाह न कहा कि गवनर को श्रद्धाजलि भेंट कर वह अपन निजी और विरोधी दल क नेता का कत य पालन कर रहे हैं। राजनतिक जीवन की परम्पराओ का दुबल व्यक्ति प्राय पाखड का नाम दिया करते हैं। राजनतिक वादविवाद की गर्मी और कीचड उछालन म लोग शिष्टाचार को भूल जाते है परन्तु फिरोजशाह न शिष्टाचार को कभी हाथ से नही जाने दिया।

लाड साइड हम रिटायर हो गए और उनके स्थान पर लाड विलिंगडन गवनर नियुक्त होकर आए। यह एक उदार प्रवत्ति के यक्ति थे। फिराजशाह की शक्ति और प्रभाव फिर बढ़न लगा। देश की राजनीति म उनका स्थान पुन ताना शाह क समान हो गया जसा कई वर्षों से चला आ रहा था। जनता मे तो कभी भी उनकी सवप्रियता और प्रतिष्ठा म कमी नही रही थी। नीति क मुख्य प्रश्नो पर कौंसिल और सीनेट म उन्हे हार माननी पडती परन्तु उनक प्रभुत्व को किसी न चुनौती नही दी। कई बार फिराजशाह के विराधियो न मूखतावश यह समझा कि उनका प्रभाव समाप्त हो चुका है पर तु उन्ह शीघ्र ही पता चल जाता कि यह सोचना भ्रममात्र हा था।

नए गवनर लाड विलिगडन का भाषण पापण हाउस आफ कामन्स के सजीव

वातावरण म हुआ था। यह बहुत बुद्धिमान थे। यह जानते थे कि फिरोजशाह सरकार के दुर्जय विरोधी हैं फिर भी वह सरकार के लिए अमूल्य सहायक सिद्ध हो सकते हैं। हर अवसर पर गवनर फिरोजशाह के सहयोग की इच्छा प्रकट करते। गवनर द्वारा उनके मूल्यांकन का परिणाम यह हुआ कि अपने दीर्घ राजनतिक जीवन के अंतिम दो वर्षों म बुद्धिजीवियों के ऊपर उनका इतना ही प्रभाव था जितना कि उत्कर्ष काल म रहा था।

इन अंतिम दो वर्षों म फिरोजशाह म असाधारण तन्मयता थी। अंत समय तक इनकी बुद्धि निरभ्र रही। सार्वजनिक सभाओं म वह पहले की ही तरह ओजस्वी ढंग से भाषण देते। लेजिस्लेटिव कौंसिल म उनके समान सतक आलोचक और कोई न था।

उनकी अंतिम दो राजनतिक सभाएं स्मरणीय हैं परन्तु इन दोनों के कारण भिन्न भिन्न है। पहली सभा 13 अगस्त 1914 को बम्बई के टाउनहाल म हुई। प्रथम महायुद्ध छिड़ गया था और लोगों के मन म सरकार के प्रति निष्ठा और स्वामि-भक्ति की भावना का उदय हुआ था। यह सभा इन भावनाओं की अभिव्यक्ति करने के हेतु बुलाई गई थी। फिरोजशाह इस सभा के सभापति थ। जब वह बोलने के लिए उठे तो लोगों ने हर्षध्वनि करके आकाश सिर पर उठा लिया। उनकी आवाज क्षीण थी तथा वह बोले भी कम परन्तु यह उनका एक बहुत ही स्मरणीय भाषण था।

इनका दूसरा भाषण भी बहुत महत्वपूर्ण था परन्तु इसका कारण कुछ और ही था। टाउनहाल के मंच पर उनका यह अंतिम भाषण था। यह अवसर गोखले के देहान्त का था। गोखले उनके सम्मानित मित्र और साथी थे। फिरोजशाह ने बोलना चाहा तो दुःख से उनका गला भर आया। कई वर्षों स गोखले बड़ी वीरता से दारुण रोग से संघर्ष करते चले आ रहे थे। देश को उनकी अत्यधिक आवश्यकता थी पर तु रोग के कारण जीवन के उत्कर्ष काल म ही उनकी मृत्यु हो गई। उस समय देश अपने इतिहास के संक्रान्ति काल मे था। देश के सामने कुछ ऐसी महत्वपूर्ण समस्याएं थीं कि जिनका समाधान करने मे गोखले तत्पर थे, परन्तु उसी समय उनकी मृत्यु हो गई।

जब फिरोजशाह बोलने उठे तो वह बीमार और निराश दिखाई दे रहे थे। कुछ लोगों को मौत की छाया उन पर पड़ती दिखाई दे रही थी। उन्हें देख सभा को स्थिति के कारुण्य का आभास हुआ। वह बोलने लगे तो दुःख से उनकी वाणी उखड़ गई। सभा को सम्बोधित करने का पुराना ढंग और स्वर की तीव्रता लुप्त हो चुकी थी। उनके भाषण में एक ऐसा व्यक्तिगत दुःख और संताप था जिससे सभा बहुत द्रवित हुई। उन्होंने कहा कि भारत के जिस महान सेवक की मृत्यु पर शोक प्रकट करने को यह सभा हुई है, उनके गुण बखान करने में मैं असमर्थ हूं। फिरोजशाह ने कहा

"यदि मैंने लम्बा भाषण देने की चेष्टा की तो मुझे डर है कि मैं सुसम्बद्ध और सुसंगत ढंग से अपने विचार प्रकट न कर पाऊंगा। मैं वृद्ध हो चुका हूं, ज्यों ज्यों मेरी उमर बढ़ती है त्यों त्यों मैं अपने प्रिय और सम्मानित साथियों को बिछुड़ते देखता हूं, जिसके कारण मैं बहुत दुःखी और विषादग्रस्त हूं। मैं यह अनुभव करता हूं कि मेरा परित्याग हो चुका है। श्री तैल्ग अपने पूर्वजों को प्यारे हो चुके हैं। रानडे हमसे बिछुड़ गए हैं। बदरुद्दीन का स्वर्गवास हो चुका है। अब हमारे प्रिय गोखले ने भी सदा के लिए आंखें बंद कर ली हैं। ऐसे और भी कई महान व्यक्ति हमारे बीच से उठ गए हैं। मुझे संसार एक बीहड़ लगता है। देश के हित के लिए अभी भारी श्रम की आवश्यकता है और इस कार्य के लिए मैं अकेला ही बचा हूं।"

फिरोजशाह ने कहा "गोखले ने देश के विकास और प्रगति के लिए बहुत योजनाएं बनाई थी और उनके मन में बहुत आशाएं थीं। जब इन्हें याद करता हूं तो मुझे बहुत ही दुःख होता है। मुझे समझ में नहीं आता कि उनकी सहायता, सहयोग और निर्देशन के बिना हम यह कठिन कार्य कैसे कर पाएंगे।"

उस समय जनसेवा आयोग की रिपोर्ट पर बहस चल रही थी। कांग्रेस के दोनों दलों के बीच मेलमिलाप पर भी विचार हो रहा था। 1914 की शरद् ऋतु में जब गोखले लंदन में थे तो उन्हें सूझा कि आगाखां और फिरोजशाह से सलाह करके एक सुधार योजना बनाई जाए। गोखले का विचार था कि यदि कांग्रेस और मुस्लिम लीग इस योजना को स्वीकार कर लें तो फिर उसे सरकार के सामने प्रस्तुत किया

जाए। इस प्रश्न से सम्बन्धित बहुत से विषयो पर फिरोजशाह और गोखले पूर्णत सहमत थे। बम्बई मे फिरोजशाह के निवासस्थान पर इन दोनो नेताओ के बीच होने वाली भेंट बहुत मैत्रीपूर्ण थी। पुस्तक का लेखक उस भेंट के समय उपस्थित था और उसने देखा कि इन दोनो नेताओं ने एक दूसरे का बहुत मैत्रीपूर्ण अभिनदन किया। सुधारों के महत्वपूर्ण प्रश्न पर आगाखा से विचार विमर्श करने के अवसर पर इन दोनो नेताओ म फिर भेंट हुई।

गोखले ने फिरोजशाह को एक ऐसी योजना के सम्बन्ध म पत्र लिखा जो गोखले के मन म बराबर बनी रहती थी। कदाचित फिरोजशाह के नाम गोखले का यह अन्तिम पत्र था। इस योजना के मौलिक पहलू पर इन दोनो नेताओ मे मतभेद था। गोखले भारत के लिए एक ऐसा सविधान चाहते थे जिसम जमनी, आस्ट्रिया और अमेरिका की भाति एक शक्तिशाली कार्यकारिणी की व्यवस्था हो, जो विधायिका के उत्तरदायी न हो। विधायिका का निर्माण जनता द्वारा सीधे निर्वाचन से हो और यह विधायिका अपने क्षेत्र मे पूर्णत स्वतन्त्र हो। फिरोजशाह इस पक्ष मे थे कि भारत के शासन का विकास ब्रिटिश सविधान के ढग पर हो और कार्यकारिणी विधायिका के प्रति उत्तरदायी हो।

आगाखां, फिरोजशाह और गोखले का इरादा था कि इन विपरीत दृष्टिकोणों पर विचार करने और मतभेदो को सुलझाने के लिए एक सभा बुलाई जाए। जब आगाखा गोखले से पूना मे मिले, उन दिनो गोखले को अपनी मृत्यु दिखाई दे रही थी। उन्होने आगाखा से कहा कि वह एक योजना बनाएगे और मरते समय उसे छोड जाएगे। गोखले की इच्छा थी कि इस योजना को उनकी वसीयत और अन्तिम इच्छापत्र समझा जाए। कुछ दिनो बाद आगाखा और फिरोजशाह को गोखले की योजना की एक एक प्रति मिली। यह योजना मरणासन्न नेता को बहुत प्रिय थी परन्तु इसका कोई फल नही निकला और वह आगे न बढ सकी। फिरोजशाह को इस योजना के मुख्य सिद्धात पर जो आपत्ति थी उसका निवारण नही हो सका। पहला महायुद्ध छिड चुका था। लोगो को आशा थी कि 1915 के अत तक युद्ध समाप्त हो जाएगा, परन्तु युद्ध के बादल और भी घने होते गए तथा सारे ससार पर छा गए।

आगाखां ने जब अपने मित्र का अन्तिम राजनैतिक इच्छापत्र प्रकाशित किया तब स्थितियों मे बहुत परिवर्तन आ गया था। इस योजना को प्रकाशित करने का कारण यह था कि जनता के मन मे ऊटपटांग विचार घर कर रहे थे और इनका खण्डन करना आवश्यक था। राष्ट्रवादी आंदोलन बहुत आगे बढ चुका था। सम्भव था कि गोखले की योजना से जनता सन्तुष्ट हो जाती तथा एक पीढी तक के लोग इसे पर्याप्त मानते परन्तु अब लोगो के दृष्टिकोण मे बहुत परिवर्तन आ चुका था। संसार मे अनोखी आशाएं और महत्वाकांक्षाएं जन्म ले चुकी थी। इसलिए गोखले के विचारो मे लोगों को भीरुता और हिचकिचाहट दिखाई देती थी तथा यह धारणा थी कि परिवर्तित स्थितियो मे इस योजना का कोई स्थान नही है।

फिरोजशाह का काम सभामंच और परिषद् तक ही सीमित नही रहा। जीवन के अंतकाल में उन्हे अपने और दो प्रिय ध्येयो की पूर्ति का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनका एक लक्ष्य तो यह था कि एक ऐसे दैनिक समाचारपत्र की नीव डालें जो उनके दल की नीति को कार्यान्वित करने में सहायक हो। ऐसे समाचारपत्र के लिए पिछली चौथाई शताब्दी से एक या दूसरे रूप मे प्रयत्न हो रहे थे। अब जाकर यह प्रयत्न सफल हुए।

इस पत्र का नाम था 'बाम्बे क्रानिकल'। इसका जन्म अप्रैल 1913 मे हुआ था। इसके सम्पादक असाधारण तौर पर योग्य लेखक थे। पत्र शीघ्र ही देश का शक्तिशाली पत्र बन गया। इस पत्र के बोर्ड के अध्यक्ष फिरोजशाह थे और उनका पत्र की नीति पर कड़ा नियंत्रण था। फिरोजशाह के कारण इस पत्र की आवाज मे शक्ति थी तथा लोग इस पत्र की राय को महत्व देते थे। फिरोजशाह के नियंत्रण के कारण ही यह पत्र पथभ्रष्ट नही हो पाया। थोड़े ही समय मे इस पत्र ने राजनैतिक क्षेत्र मे बहुत प्रभाव डालना शुरू कर दिया। इस पत्र को इतनी सफलता मिली, जितनी कि इसके निर्माताओं को भी आशा नही थी। फिरोजशाह के लिए यह पत्र लाडले बालक के समान था। इसकी व्यवस्था और नीति पर नियंत्रण का काम दुर्गम था जिसके कारण उन्हे चिन्ता बनी रहती, इससे इनका स्वास्थ्य गिर गया। इतना होते हुए भी उन्होने हृदय से यह उत्तरदायित्व निभाया। उन्हे सन्तोष था कि उन्होने बम्बई को ऐसा पत्र प्रदान किया है जो अन्याय, पाखंड और आडंबर पर हर समय

आक्रमण करने के लिए तयार रहता है और जिसके कारण अधिकारियो मे आतक फैला हुआ है।

पत्र से सम्बधित झझट तो उन्हें घेरे ही रहते थे, इनके अतिरिक्त फिरोज शाह के ऊपर एक और चिता आ पडी। बम्बई म एक भारी आर्थिक सकट आ गया जिसके कारण फिरोजशाह को बहुत बेचैनी का सामना करना पडा। क्रेडिट एड इडियन स्पेसि बैंकस का दिवाला पिट गया। इसका कारण जुएबाजी थी जो बहुत बडे पैमाने पर चल रही थी। लेन-देन के व्यापार मे खलबली मच गई और भयफल गया। ऐसा प्रतीत होता था कि यह गडबडी अच्छे सुव्यवस्थित बैंको को भी ले डूबेगी।

सन्ट्रल बैंक आफ इडिया का निर्माण 1911 के अन्त मे हुआ। फिरोजशाह ने इस बैंक के निर्माण मे सहायता की थी। दूसरे बैंको की तरह इस बैंक को भी क्षति पहुची। श्री एस० एन० पोचखनवाला जो कि एक नौजवान बैंकर थे, इस बैंक का काय बहुत कुशलता से चला रहे थे। लोगों ने धडाधड बैंक से पसा निकलवाना शुरू किया जिससे बैंक शीघ्रता से खाली होने लगा। फिराजशाह बैंक के बोड के अध्यक्ष थे, इसस उन्हे बहुत चिता हुई। जनता को उन पर विश्वास था, जिसके कारण बैंक चलने म बहुत सफलता मिली थी। उन्ही के आग्रह से बैंक के नियमा म परिवतन करके प्रबन्धक के ऊपर निर्देशको को कडे नियत्रण का अधिकार दिया गया था। इस नियत्रण का आशय था कि बैंक के हिस्सेदारो के हितो की रक्षा की जा सके। अत फिरोजशाह बैंक की स्थिरता के लिए बहुत चिन्तित थे।

भगन्ड की लहर बम्बई के लेन-देन के कारोबार को डुबो देना चाहती थी। फिरोजशाह बैंक को इस भगदड से बचाने के बहुत इच्छुक थे। वह अपनी जायदाद को रेहन रखकर बैंक के लिए पसा जुटाने के लिए तयार हो गए। उनके इस त्याग के सकेत से बैंक के प्रति लोगो के हृदय म फिर विश्वास उत्पन्न हो गया और बक का आर्थिक सकट टल गया। आगे चलकर इस बैंक ने बहुत प्रगति की। फिरोजशाह बैंक के प्रथम अध्यक्ष थे बैंक के भविष्य मे होने वाले विस्तार से उन्हे निश्चय ही प्रसन्नता होती क्योकि जसे वह 'स्वराज्य' के समथक थे उसी प्रकार वह 'स्वदेशी उद्योग' के भी पक्के समथक थे।

इस समय फिरोजशाह के जीवन मे एक और महत्वपूण घटना घटी। यह

घटना थी भाज 1915 मे विश्वविद्यालय के उपकुलपति के पद पर उनकी नियुक्ति। शिक्षा के सम्बन्ध मे उनका दृष्टिकोण कुछ रूढिवादी था फिर भी यह कहने की आवश्यकता नही कि उन्होने कई वर्षों तक विश्वविद्यालय की असाधारण सेवा की। फिरोजशाह को इन सेवाओ के प्रति वास्तविक मान्यता, उनके लम्बे सार्वजनिक जीवन के अन्तिम भाग मे ही मिली। लार्ड विलिंगडन को यह श्रेय है कि सर्व-प्रथम अवसर हाथ लगते ही उन्होने फिरोजशाह को विश्वविद्यालय के प्रशासन के प्रधान पद पर नियुक्त किया। यद्यपि फिरोजशाह शिक्षा विशारद नही थे फिर भी वह विश्वविद्यालय की सीनेट के श्रेष्ठ सदस्य थे परन्तु लोगो के भाग्य मे घोर निराशा लिखी हुई थी। फिरोजशाह स्वय भी बहुत निराश हुए। इस निराशा का कारण था कि उनका स्वास्थ्य तेजी से बिगडता जा रहा था। फिरोजशाह को बहुत दुःख हुआ कि वह अपने ओहदे के कार्यपालन मे असमर्थ हैं। अस्वस्थता के कारण वह सीनेट की सभाओ मे भाग नही ले सकते थे। लोग यह जानने के लिए बहुत इच्छुक थे कि उच्च शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओ पर उपकुलपति की हैसियत से फिरोजशाह के क्या विचार हैं परन्तु फिरोजशाह लोगो की इच्छा पूरी करने मे असमर्थ थे। उनका दीक्षात समारोह भाषण निश्चय ही बहुत असाधारण सिद्ध होता क्योकि वह अपने समकालीन तथा पूर्ववर्ती उपकुलपतियो से बहुत भिन्न थे।

भाग्य मे कुछ और ही लिखा था। अपनी असहाय अवस्था से वह बहुत ही चिन्तित रहने लगे। एक बार उन्होने इस पुस्तक के लेखक से बात करते हुए कहा कि मुझे बहुत खेद है कि इतनी देर के बाद जब मुझे विश्वविद्यालय के प्रशासन का सचालन प्राप्त हुआ है तो इस अद्वितीय अवसर का सदुपयोग करने मे असमर्थ हू। असहायता उनके स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल रही है और उन्हे निरुत्साहित कर रही है।

फिरोजशाह की असमर्थता केवल शारीरिक ही थी। उनकी पुरानी गुर्दे की बीमारी उभर आई थी तथा उन्हे हृदय का रोग भी हो चला था। उनके हृदय के रोग से उनके मित्रो को बहुत चिन्ता हुई। एक बार नगरपालिका मे भाषण देते हुए एकाएक रुक गए। लोगो ने देखा कि वह बहुत कठिनाई से सांस ले रहे थे।

चिकित्सा का प्रबन्ध तो था परन्तु इसकी आवश्यकता नहीं पड़ी। उनकी जेब में ऐसी औषधि थी जो ऐसे ही आकस्मिक संकट के लिए रखी हुई थी। उन्होंने वह दवाई निगल ली और थोड़े ही समय के पश्चात उनकी तबीयत सुधरने लगी और लोगों की जान में जान आई। जैसे जैसे समय बीतता गया रोग के आक्रमण जल्दी जल्दी होने लगे जिसके कारण उनके मित्रों को बहुत चिन्ता हुई। फिरोजशाह का स्वास्थ्य बिगड़ चुका था परन्तु उनका मस्तिष्क अन्त समय तक निरभ्र रहा। उनका बोध पहले जैसा ही तीव्र था और अन्त समय तक अदम्य जीवट ने उनका साथ नहीं छोड़ा।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि फिरोजशाह के सार्वजनिक जीवन का अन्तिम भाग बहुत सफल रहा। वह निरंतर द्वन्द्व से तंग आ चुके थे और सहयोग के इच्छुक थे। राजनैतिक स्थिति में बहुत परिवर्तन आ चुका था, प्रान्त के गवर्नर उदार दृष्टिकोण के व्यक्ति थे। उस समय एक राजनैतिक कार्यकर्ता के सामने ऐसे अवसर थे जो फिरोजशाह को नहीं मिले थे।

1915 के मार्च और जुलाई में दो और ऐसी घटनाएं हुईं, जिनके कारण फिरोजशाह का दीर्घ और प्रांजल जीवन और भी प्रदीप्त हो उठा। नगरपालिका, जिसके निर्माण का श्रेय अधिकतर फिरोजशाह को ही जाता है, 2 मार्च 1915 को अपनी स्वर्ण जयन्ती मना रही थी। फिरोजशाह को इस बात की बहुत प्रसन्नता थी कि उन्हें अपने जीवन में यह दिन देखने का अवसर मिला। भोज समारोह में उन्हें आमंत्रित किया गया था। नगरपालिका के अध्यक्ष फज़लभाई करीमभाई ने अपने भाषण में फिरोजशाह की सेवाओं का बहुत ही सुन्दर शब्दों में वर्णन किया। उन्होंने कहा —

"नगरपालिका संघर्ष के इतिहास के महान योद्धाओं में से एक आज हमारे बीच विराजमान हैं। मेरा संकेत सर फिरोजशाह की ओर है। इस अवस्था में भी इनमें बहुत शक्ति और उत्साह है और वह संग्राम के लिए तत्पर हैं। इनके जीवन से हमें यह शिक्षा मिलती है कि अपने नगर की सेवा से बढ़कर प्रतिष्ठापूर्ण अन्य कोई काम नहीं है।"

सभा मे बहुत से प्रतिभाशाली व्यक्ति एकत्रित थे। सभापति के इन सुन्दर शब्दो पर उन्होंने बहुत हर्ष प्रकट किया। फिरोजशाह की शुभकामना का जाम प्रस्तुत करने पर सभा मे जो करतल ध्वनि हुई, उससे वह प्रभावित हुए बिना न रह सके। यही स्थान था जहा उन्होंने अपने सार्वजनिक जीवन की दुर्गम लडाइया लडी थी और विजय पाई थी। इस द्वन्द्व के कारण बहुत से लोग उनके शत्रु बन गए थे और कुछ मित्र भी उनसे नाराज हो गए थे। उस समय जो व्यक्ति वहा उपस्थित थे उनके मन मे केवल यही भावना थी कि बम्बई नगर व नगरपालिका फिरोजशाह की आभारी है।

भोज समारोह के उपरान्त फिरोजशाह का भाषण बहुत ही सुन्दर था। गवर्नर महोदय उस समय उपस्थित थे। उन्होंने अपने भाषण मे कहा कि नगरपालिका के सदस्यो ने कई बार कार्यकारिणी की प्रगतिशील नीति के रास्ते मे रोडे अटकाए। फिरोजशाह ने तुरत इस आक्षेप का उत्तर दिया। उन्होंने हँसी हँसी मे कहा कि कार्यकारिणी की उदारता का कारण यह था कि उनके हाथ जनता की जेबो मे थे। बेचारी नगरपालिका को तो अपने साधनो पर ही निर्भर होना पडता था। फिरोजशाह ने कहा कि गवर्नर महोदय ने बहुत ही काल्पनिक चित्र खीचा है। बम्बई नगर के विकास और प्रगति का कारण कमिश्नरो और नगरपालिका के सदस्यो के बीच सहयोग है। यद्यपि उन्होंने अपने साथियो और कार्यकारिणी की प्रशसा की, फिर भी श्रोतागणो से यह बात छुपी हुई न थी कि बम्बई के नगर प्रशासन को देश का एक आदर्श प्रशासन बनाने मे फिरोजशाह का सबसे अधिक हाथ है। कमिश्नरो और नगरपालिका के सदस्यो का मिश्रित कार्य इतना नही था जितना कि अकेले फिरोजशाह का था।

प्रसिद्ध अग्रेज लेखक कार्लाइल का कथन है कि इतिहास महान व्यक्तियो की जीवनी है। यह कथन अर्द्ध-सत्य है परन्तु इसमे कोई सदेह नही कि बम्बई नगरपालिका के प्रथम पचास वर्ष के घटनात्मक काल का इतिहास अधिकाश रूप से फिरोजशाह की जीवन कथा ही है।

बम्बई विश्वविद्यालय ने जुलाई में फिरोजशाह को 'डाक्टर आफ लाज' की

उपाधि देने का निश्चय किया। यह सम्मान बहुत कम व्यक्तियों को दिया जाता था। सीनेट म इस प्रस्ताव को सर नारायण चन्दावरकर ने प्रस्तुत किया सर नारायण के प्रस्ताव मे फिरोजशाह के पाण्डित्य का वणन था। उस प्रस्ताव म यह भी कहा गया था कि फिरोजशाह ने पिछले 50 वर्षों मे नागरिक स्वशासन, सफाई और शिक्षा के क्षेत्र म, जनता की उत्कृष्ट सेवा की है। फिरोजशाह को इस प्रस्ताव का समाचार देवलाली मे मिला। उन्होन सीनेट को पत्र लिखा, जिसम कहा था कि वह सम्मान को स्वीकार करत हैं तथा सीनेट को धन्यवाद देते हैं। ऐसा ही एक सम्मान उनके आदरणीय राजनैतिक गुरु दादाभाई नौरोजी को भी मिलना निश्चित हुआ था। शिक्षा के क्षेत्र म फिरोजशाह के आजीवन परिश्रम का यह एक मनोहर परन्तु बहुत ही विलम्बित सम्मान था। फिरोजशाह को पारगत विद्वान कहना तो उचित नही परन्तु इसमे सदेह नही कि उन्होंने विश्वविद्यालय की प्रशस नीय सेवा की।

फिरोजशाह को सम्मान प्रदान करने का अवसर आ ही नही पाया। जब सीनेट मे यह प्रस्ताव पास किया जा रहा था तब मौत उनके सिर पर मडरा रही थी। इससे पहले कि उन्हे यह सम्मान (डिग्री) दिया जाता उनका स्वगवास हो गया।

उनका अतकाल इतना दु खदाई नही था इसके लिए हम ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए। उन दिनो एक ऐसा प्रश्न था जो देश के लिए बहुत ही महत्वपूण था और जिसके सम्बन्ध मे फिरोजशाह अक्सर सोचा करते थे। यदि वह कुछ समय और जीवित रहते तो नि स्स देह इस समस्या के समाधान के प्रयत्नो मे उल्लेखनीय भाग लेते। यह प्रश्न था काग्रेस के दो दलो के बीच समझौता। कुछ समय से दोनो पक्षो के कुछ नेता बडी सरगर्मी से दोनो दलो के बीच समझौते का प्रयास कर रहे थे। सात वष तक राजनीतिक बीहड मे भटकने के बाद, गम दल फिर काग्रेस मे आने के लिए उत्सुक था। फिरोजशाह जसे ही कुछ दूरदर्शी नेताओ ने देख लिया था कि *काग्रेस से बाहर रहकर इनका प्रभावक्षेत्र बहुत ही सीमित रह जाएगा।* इस तथ्य का ज्ञान नम दल वालो को भी हो गया था। गम दल वालो ने काग्रेस स पुनर्मिलन के लिए कई बार चेष्टा की और समझौते के लिए बहुत ही विचक्षण

प्रस्ताव रखे, परन्तु काग्रेस मे नेता विशेषत फिरोजशाह और दिनशा बहुत चतुर थे तथा अपनी बात के पक्के थे। उन्होंने गर्म दल की चलन नही दी और उन्हे काग्रेस से दूर ही रखा।

कुछ समय स लोग इच्छुक थे कि मतभेदा को दूर किया जाए तथा काग्रेस सस्था मे एकता लाई जाए। गोखले, मदनमोहन मालवीय और दूसरे कई नेता अपने विरोधियो को दोबारा काग्रेस म लाने के इच्छुक थे। वे यह भी चाहते थे कि सस्था म दोबारा दाखिले की शर्तें ऐसी हो जो उग्र दल (गम दल) को भी स्वीकार हो तथा साथ ही जिसस काग्रेस की अखण्डता बनी रहे।

काग्रेस सविधान की बीसवी धारा के अनुसार प्रतिनिधि चुनने का अधिकार कुछ गिनीचुनी स्वीकृत सभाओ और सावजनिक सस्थाओ को ही दिया गया था। काग्रेस अधिवेशन म वही व्यक्ति प्रतिनिधि के रूप मे भाग ले सकता था जो इन सस्थाओं के सिद्धाता का समर्थन करता हो और इनके द्वारा बुलाई गई साव जनिक सभा मे चुना गया हो। गाखले ने समझौते का एक प्रस्ताव रखा था। उनका सुझाव था कि कोई भी सस्था, यदि वह काग्रेस के सिद्धान्ता का समथन करती है, चाह वह काग्रेस मे सम्बद्ध हो या न हो, अपनी सभा मे या अपन द्वारा आयोजित सावजनिक सभा म काग्रेस क लिए प्रतिनिधि चुनने की अधिकारी होगी। गोखले का विचार था कि अब उग्रवादी दल का दृष्टिकोण बदल गया है तथा उनके साथ सच्चा समझौता सम्भव है। 1914 म काग्रेस के मद्रास अधिवशन से पहले श्रीमती एनी बेसेंट और दूसरे काग्रेस नेता गोखले से विचार-विमर्श करने के लिए आए। उसी समय तिलक के दल के साथ भी बातचीत चल रही थी। कुछ लोगो का सुझाव था कि उग्रवादी (गरम दल) और मध्यमार्गी (नरम दल) दलो के बीच, एक गोलमेज सम्मेलन हो। फिरोजशाह इस बातचीत से पृथक ही रहे। फिरोज-शाह को गाखले द्वारा दूसरे दल के नेताओ से किया जान वाला विचार विमश पसद नही था। फिरोजशाह की धारणा थी कि ऐसे दल से नाता जोडना, जिसकी नीति की वह निन्दा करते हैं और जिसके साधनो पर उन्ह अविश्वास है, उचित न होगा। फिरोजशाह की यह धारणा उचित ही थी और इसका प्रमाण आगे चलकर गाखले से ही मिला। काग्रेस के मद्रास अधिवेशन के चौदह दिन पहले गोखले ने

भूपेन्द्रनाथ बसु को काग्रेस मे एकता लाने के अपने प्रयास का कारण बताया। इस पत्र के अन्त म गोखले ने यह भी स्वीकार किया कि उनके प्रयत्न निष्फल रहे हैं और उन्हे घोर निराशा हुई है।

गोखले ने लिखा था —

'मेरा विचार था कि सम्बन्ध विच्छेदक दल को यह पता लग गया है कि किसी और ढग से राजनतिक काय करना असम्भव है। मुझे आशा थी कि यदि काग्रेस के नियमो मे छूट देने से इन लोगो को दोबारा सस्था मे आने का अवसर मिला तो वह हमे सहयोग देंगे और नियमित उपायो से काग्रेस के कायक्रम को बढाने मे हमारी सहायता करेंगे। परन्तु अब हमारी आशा टूट चुकी है। श्री तिलक ने मि० सुब्बाराव को असदिग्ध शब्दो मे कह दिया है कि यद्यपि काग्रेस का सिद्धान्त उन्हे स्वीकार है, अर्थात् दूसरे शब्दो मे वह मानते है कि काग्रेस का लक्ष्य वधानिक उपायो द्वारा, ब्रिटिश साम्राज्य मे, भारत के लिए स्वशासन प्राप्त करना है परन्तु काग्रेस की वतमान नीति से वे लोग सहमत नहीं, जिसका आधार है सरकार को यथासम्भव सहयोग देना तथा आवश्यकतानुसार उसका विरोध करना।

'श्री तिलक चाहते हैं कि काग्रेस इस नीति को त्याग दे। काग्रेस वधानिक उपायो से सरकार के पूर्ण विरोध की नीति को अपनाए जसी कि आयरलैंड वालों ने अपनाई है। हमारा पक्ष तो आन्दोलन कर रहा है कि भारत के नागरिको को लेजिस्लेटिव कौंसिला, नगर निगम, लोकल बोर्डों, जन सेवाओं इत्यादि में अधिक भाग दिया जाए। श्री तिलक चाहते है कि सरकार से और ब्रिटिश जनता से एक ही माग की जाए, वह यह कि भारत का स्वराज्य मिलना चाहिए। जब तक सरकार यह माग स्वीकार नही कर लेती तब तक भारत के लोगो को विधान परिषदो, जन सेवाओ और नागरिक अथवा म्युनिस्पिल प्रशासनो से कोई सरोकार नही रखना चाहिए। उन्हें आशा है कि यदि जनता देश मे कानूनो की सीमा मे रहकर, हर प्रकार से सरकार के विरोध का आयोजन करे तो सरकार घुटने टेकने के लिए बाध्य हो जाएगी। यह श्री तिलक का कायक्रम है। उनका कहना है कि यदि उन्हे और उनके अनुयायियो को काग्रेस मे दोबारा भरती होने का अवसर दिया गया तो वह अपनी योजना को काग्रेस द्वारा कार्यान्वित कराने की चेष्टा करेंगे। यदि उन्हें काग्रेस में

दावारा नही आने दिया गया तो इस कार्य के लिए 'नेशनल लीग' नाम की एक अलग सस्था का निर्माण करेंगे ।

"अपनी इस स्पष्ट नीति की घोषणा की पुष्टि करते हुए श्री तिलक ने कहा कि काग्रेस म दोबारा प्रवेश करने के प्रयास से उनका अभिप्राय यह है कि काग्रेस के नियमो मे वह ऐसे परिवर्तन लाने की चेष्टा करेंगे जिससे लगभग हर व्यक्ति को प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिल जाए जसा कि 1907 के पहले था । यदि ऐसा हो गया तो अधिवेशन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियो का बहुमत उनके विचारो का समर्थक होगा । काग्रेस उनके कार्यक्रम का समर्थन करने पर विवश हो जाएगी ।"

फिरोजशाह को उग्रवादी नेताओ की इस नीति-व्याख्या पर बिल्कुल आश्चर्य नही हुआ । एकता की दुहाई सुनकर वह भावुकता के चक्कर मे नही पडे और उन्होंने उग्रवादियो को दूर ही रखा । उन्होंने यह निश्चय किया था कि जब तक उनका वश चलता है वह विरोधी दल को काग्रेस हथियाने नही देंगे ।

भारत के इतिहास मे यह एक सकटपूर्ण काल था । पहले महायुद्ध म भारत के सपूतो ने फ्रास की धरती को अपने रक्त से सीच दिया था । इस बलिदान से भारत ने मित्रराष्ट्रो के साथ साझेदारी प्राप्त कर ली थी । इस बलि से भारत ने यह सिद्ध कर दिया था कि ब्रिटिश राष्ट्रमडल मे उसका भी एक स्थान है । इस युद्ध से पहले भारत स्वप्न मे भी इस अधिकार की कल्पना नही कर सकता था । इससे भारत की मागो को पुष्टि मिली और भारत की जनता की स्वराज्य की माग व्यावहारिक मानी जाने लगी । ऐसे समय म यह अत्यावश्यक था कि काग्रेस का नेतृत्व ऐसे व्यक्ति के हाथ म हो जो दूरदर्शी तथा दृढ हो । इस बात को ध्यान में रखकर फिरोजशाह ने अपने दो-तीन मित्रो को आदेश दिया कि काग्रेस के 1915 में होने वाले अधिवेशन का प्रबध बम्बई मे किया जाए, जिससे आन्दोलन के हर पहलू पर फिरोजशाह नियत्रण कर सकें ।

काग्रेस अधिवेशन के कुछ सप्ताह पहले ही फिरोजशाह की मृत्यु हो गई । उनकी मृत्यु से काग्रेस सविधान मे सशोधन का मार्ग साफ हो गया । उग्रवादी दल काग्रेस मे आ गया । शीघ्र ही इस दल ने मध्यमार्गी दल को पूर्णत पराजित कर

दिया। जब आगे चलकर दोबारा कांग्रेस में फूट पड़ी तो मध्यमार्गी दल को यह रास्ता छोड़ना पड़ा।

यदि यह बूढ़ा सिंह जीवित रहता तो कदाचित इस समय का इतिहास भिन्न होता परन्तु इस बारे में अटकलबाजी करना व्यर्थ ही है। मुख्य बात तो यह थी कि कांग्रेस के दोनों दलों में उस समय मेल हुआ जब फिरोजशाह नहीं रहे। जब तक वह जीवित रहे, उनकी दृढ़ प्रतिभा, दूरदर्शिता और अटल आग्रह इन दोनों दलों के बीच दीवार की तरह खड़ा रहा। फिरोजशाह की मृत्यु के साथ ही यह दल, जिसका उन्होंने इतने दिनों तक नेतृत्व किया था, राजनैतिक तौर पर समाप्त हो गया। लड़ाकू राष्ट्रवाद की लहर सारे देश पर छा गई, मिताचार और विवेक इस लहर में डूबकर रह गए।

जिस समय फिरोजशाह की मृत्यु हुई, वह भारत के इतिहास में एक महत्वपूर्ण काल था। मरते समय तक उनका हाथ देश के राजनैतिक तथा नागरिक जीवन की नाड़ी पर था। उनका सौभाग्य था कि जब तक वह जीवित रहे देश के रंगमंच पर उन्होंने प्रमुख भाग लिया और मरते समय वह अपनी शक्ति के शिखर पर थे।

फिरोजशाह के स्वास्थ्यभंग के स्पष्ट लक्षण जून 1914 में प्रकट हुए जब उनके हृदय ने उन्हें कष्ट देना आरम्भ किया। उनके ऊपर तो पहले ही काफी बोझ था। आर्थिक संकट के कारण सेण्ट्रल बैंक डांवाडोल था। बैंक को इस मंझधार से निकालने के लिए उन्हें बड़ा परिश्रम करना पड़ा। इसके अतिरिक्त 'बाम्बे क्रानिकल' पत्र से, जिसकी स्थापना को वह अपने जीवन की अन्तिम उपलब्धि समझते थे तथा जिसका नियंत्रण वह स्वयं करते थे, बोझ और भी बढ़ गया जिसका उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ा।

फिरोजशाह शारीरिक तौर पर जल्दी घबरा जाने वाले व्यक्ति थे। विशेषज्ञ द्वारा शारीरिक जांच से वह बहुत ही घबराते थे तथा अपने रोग की चिकित्सा इधर उधर की दवाइयों से करते थे। उनके किसी मित्र ने सुझाव दिया कि ओरिटियल बाम' लाभकारी होता है। फिर क्या था, उन्होंने यही लगाना आरम्भ कर दिया। ग्लैडस्टोन ने ब्राइट के बारे में एक बार कहा था कि वह अपने स्वास्थ्य को

अधिवेशन की वह बडी उत्सुकता से राह देख रहे थे, उन्ह आशा थी कि जिन सिद्धान्तों का उन्होंने आजीवन समर्थन किया है उन्ह दृढ रूप से सदा के लिए स्थापित कर देंगे।

दुर्भाग्यवश उनका स्वास्थ्य तेजी से बिगडने लगा। 24 अक्तूबर को वह पूना स बम्बई आ गए। अपने आगमन के बाद रविवार को उन्होंने अपना दरबार लगाया जसा कि वह अक्सर लगाया करते थे। उन्होंने अपने कुछ मित्रो से भेंट की। यह उनके अन्तिम दशन थे। उनकी शक्ति शीघ्रता से घटने लगी, घर के भीतर ही थोडा बहुत चलफिर लेते। लोगो से मिलना-जुलना उन्होंने बिलकुल ही छोड दिया था।

वह अपने रोग के बारे म किसी को भी नही बताते थे। उनकी पत्नी बहुत ही निष्ठावान थी और उन्होने निरन्तर उनकी देखभाल की, परन्तु उनसे भी इन्होंने अपने रोग की बात नहीं कही। यद्यपि वह उदास थे फिर भी चुप रहते। दुख अथवा निराशा की बात उनके मुह से नही निकलती। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे उन्होंने इतना धय दिखाया, जिसे देखकर विख्यात सजन, जो इनका इलाज कर रहे थे, उनकी प्रशसा किए बिना न रह सके।

5 नवम्बर की सुबह फिरोजशाह हमेशा की तरह उठे, उन्होंने काफी पी तथा पत्र इत्यादि पढे। लगभग दस बजे डाक्टर आए और उन्होने फिरोजशाह की जाच की। जाच मे कोई असाधारण बात प्रकट नहीं हुई। डाक्टरो के जाने के थोडी देर पश्चात उन्हे दिल का दौरा हुआ। वह अपने पलग के समीप खडे थे। घर वाले भागकर इनकी सहायता को पहुचे। फिरोजशाह कुछ नहीं बोले। लोगो ने इन्हे चारपाई पर लिटा दिया और तुरन्त डाक्टर मसीना को बुला भेजा जो इनका इलाज कर रहे थे। कुछ मिनटो मे ही डाक्टर मसीना आ पहुचे। डा० मसीना ने फिरोजशाह स बात की, तो बडी कठिनाई से वह उत्तर दे पाए। डाक्टर ने उन्हें ब्रान्डी दी परन्तु उसस भी कुछ लाभ न हुआ। कुछ क्षण बाद, बिना हाथ पर मारे, उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए।

उनकी मृत्यु का समाचार नगर मे जगल की आग की तरह फैल गया। उनका अत अप्रत्याशित नहीं था, फिर भी उनकी मृत्यु के समाचार से लोगो को

बहुत ही धक्का पहुंचा। यह विश्वास नहीं होता था कि एक पीढ़ी से अधिक जिस महान व्यक्ति का प्रभुत्व राजनीति के ऊपर छाया हुआ था, वह अब नहीं रहा।

जनता शोक मे डूब गई। उनकी मृत्यु का समाचार मिलते ही नगरपालिका और विश्वविद्यालय के दफ्तर और कई सस्थाए बद हो गई। नेपियन सी रोड स्थित इनके निवासस्थान पर आने वाले लोगो का तांता लग गया। लोग उनकी धर्मपत्नी और परिवार के सदस्यो से शोक प्रकट करने और इनके अतिम दर्शन करने आ रहे थे। इनमे अधिकाश लोग ऐसे थे जिन्होने आजीवन बडी निष्ठा से इनका अनुसरण किया था। उनकी मृत्यु से उन लोगो को बहुत दुख हुआ। उनके जीवन भर के मित्र और साथी श्री दिनशा वाचा सबसे पहले आने वालो मे से थे। श्री वाचा इन्हे देख रो पडे, लोगो ने उन्हे पकडकर सीढिया से नीचे उतारा।

फिरोजशाह की अतिम यात्रा बहुत प्रभावशाली था। महान और विविधतापूर्ण बम्बई नगर के हर समुदाय के लोग शवयात्रा मे थे। लार्ड विलिंगडन की ओर से सरकार के एक सचिव आए। भीड के सभी लोग गम्भीर थे और ऐसे सहमे हुए थे जसे कि बहुत बडी विपत्ति आ पडी हो। घर से जसे ही अर्थी बाहर निकली, बाहर इकट्ठे हुए लोग श्रद्धा से नतमस्तक हो गए। अर्थी धीरे धीरे चल रही थी और उसके पीछे बहुत भारी भीड थी। 'टावर आफ सायलेंस' के पास पहुँचकर जलूस ऐसे स्थान पर रुक गया जिसके आगे पारसियो के अतिरिक्त और किसी को नही जाने दिया जाता। चदावरकर ने फिरोजशाह को बहुत स्नेहशील और भावपूर्ण अतिम श्रद्धाजलि भेंट की। दिनशा वाचा ने भी कुछ कहने की चेष्टा की परन्तु उनका गला भर आया और वह एक शब्द भी न बोल सके। बम्बई के नागरिको के हृदयो मे फिरोजशाह के लिए जितना प्रेम था उसी के अनुसार उन्हे श्रद्धाजलिया भी भेंट की गई।

फिरोजशाह की मृत्यु से देश को जो हानि हुई उसके प्रति दुख प्रकट करने के लिए देश भर म शोक सभाए हुई। हर दृष्टिकोण के लेखको और राजनीतिज्ञो ने फिरोजशाह के व्यक्तिगत और बौद्धिक गुणों की प्रशसा की, जिनके कारण दीर्घ काल तक देश पर उनका प्रभुत्व बना रहा था। जो समाचार पत्र फिरोजशाह के

दृष्टिकोण के समर्थक थे उनके द्वारा फिरोजशाह का मूल्यांकन तो स्वाभाविक ही था परन्तु 'स्टेट्समन' 'अमृतबाजार पत्रिका' और 'इंग्लिशमन' भी पीछे नहीं रहे। समाचारपत्र 'बंगाली' फिरोजशाह का समर्थक तो अवश्य था परन्तु कभी कभी इनकी आलोचना भी किया करता था। इस समाचारपत्र ने लिखा कि एक महान पुरुष और एक राजा का स्वर्गवास हुआ है, इससे सारा राष्ट्र शोक मना रहा है।

फिरोजशाह तिलक को अपना सबसे बड़ा राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वी मानते थे। इसे देखते हुए तिलक द्वारा दी गई श्रद्धांजलि विशेषतः उल्लेखनीय है।

तिलक ने कहा, "श्री फिरोजशाह का प्रधान गुण उनकी निर्भीकता थी। यदि एक बार किसी सार्वजनिक प्रश्न पर वह अपनी राय कायम कर लेते और अपनी नीति निर्धारित कर देते तो फिर उस पर डटे रहते, संसार की कोई शक्ति उन्हें इस स्थान से टस से मस नहीं कर सकती थी। हिचकिचाहट क्या होती है, वे नहीं जानते थे तथा न ही कभी झूठ बोलते थे और न ही गोलमटोल बात ही करते थे। उनकी बौद्धिक श्रेष्ठता, कानूनदानी, वैधानिक विदग्धता और राजनैतिक विवेक असाधारण रूप से प्रशंसनीय थे क्योंकि इन गुणों का आधार था फिरोजशाह का अचल साहस।"

दस दिसम्बर को लंदन में कैक्स्टन हाल में फिरोजशाह की पुण्य स्मृति में एक शोकसभा हुई। इस सभा में लार्ड हेरिस, अमीर अली, भानुगिरि और लोवेट फ्रेजर जैसे फिरोजशाह के प्रतिद्वंद्वी एकत्रित हुए। श्री आगाखां इस सभा के सभापति थे। मुख्य शोक प्रस्ताव लार्ड हेरिस ने प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा, "श्री फिरोजशाह बहुत दृढ़प्रतिज्ञ योद्धा थे। उनके तर्क बहुत पैने थे और वह अपने सिद्धांतों के पक्के थे। मैंने उन जैसा निष्कपट प्रतिद्वंद्वी इंगलैंड और भारत में नहीं देखा।"

बम्बई नगर की राजनैतिक सरगर्मी में फिरोजशाह का पूर्णतः एक पीढ़ी से अधिक प्रभाव छाया रहा था। उनकी मृत्यु से सारे देश को हानि पहुंची थी परन्तु बम्बई नगर को उनकी मृत्यु से सबसे अधिक शोक हुआ था। बम्बई के नागरिकों की स्मृति में कदाचित ही कोई आन्दोलन ऐसा हुआ हो जिसे फिरोजशाह ने

न चलाया हो या जिसका नेतृत्व अथवा पथप्रदर्शन न किया हो। बम्बई प्रदेश के लोगों को इस बात पर गर्व था कि देश के 'बेताज बादशाह' बम्बई प्रान्त के निवासी हैं। अपने महान व्यक्तित्व और महान कार्य से उन्होंने बम्बई नगर का महत्व बढ़ा दिया था और उसकी प्रतिष्ठा को चार चाँद लगा दिए थे। फिरोजशाह की महानता के कारण देश में बम्बई एक महत्वपूर्ण स्थान बन गया था। लोग उन्हें तानाशाह समझते थे; परन्तु उन्होंने अपनी सत्ता के प्रयोग में सदैव संयम और विवेक से काम लिया। उनकी मृत्यु से बम्बई प्रान्त हतबुद्ध होकर रह गया। लोगों को विश्वास ही नहीं था कि फिरोजशाह उन लोगों के बीच नहीं रहे।

समाचारपत्र 'बाम्बे क्रानिकल' ने लिखा —

"अभी वह समय नहीं आया जबकि उनके अभाव को हम पूरी तरह समझ सकें। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाएगा हमें उनके मार्गदर्शन, जनता के हितों के प्रति सतर्कता, राजनतिक या नागरिक क्षेत्र में निर्भीकता, प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा स्वस्थ और उदारवादी दृष्टिकोण का अभाव खलेगा। उस समय हमें उन दिनों की याद आएगी जबकि वह हमारे बीच थे। अपने नगर के लिए, देश के लिए और साम्राज्य के लिए उन्होंने जो महान कार्य किया है, उसका मूल्यांकन हम तब कर सकेंगे।"

मनुष्य के मरने के बाद प्रायः उसके गुणों का बढ़-चढ़कर बखान किया जाता है परन्तु जहाँ तक फिरोजशाह का सम्बन्ध है उनके बहुमुखी व्यक्तित्व और राजनतिक जीवन का वर्णन करने के लिए उपयुक्त शब्द मिलने कठिन हैं।

समाचार पत्र 'टाइम्स आफ इण्डिया' द्वारा फिरोजशाह को दी गई श्रद्धांजलि लगभग पर्याप्त समझी जाएगी। इस पत्र ने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फिरोजशाह द्वारा की गई जनता की महान सेवा का वर्णन किया है। पत्र ने लिखा है कि सूरत काण्ड के पश्चात् आनेवाले संकटपूर्ण काल में उन्होंने देश के राजनतिक आन्दोलन को बहुत साहस और कार्यकुशलता से चलाया। पत्र ने लिखा कि जिस भावना से उन्होंने संघर्ष किया, उसे देखते हुए इंगलैंड के राजनतिक जीवन के उच्चतम गुणों का स्मरण हो आता है। जिस समय बहुत से लोग निराशा से हाथ मल रहे थे, फिरोजशाह को

दृढ़ विश्वास था कि ब्रिटेन के साथ सम्पर्क बनाए रखने से भारत को लाभ होगा। पत्र ने अन्त मे यह लिखा कि फिरोजशाह को स्मरण करने का सबसे बडा कारण यह है कि वह बम्बई के महान नागरिक थे।

"जहाँ तक बम्बई नगर के प्रति निष्ठा का सम्बन्ध है, हम बिना किसी अत्युक्ति के कह सकते हैं कि फिरोजशाह से बढकर सेवानिष्ठ नागरिक को किसी और नगर ने जन्म नही दिया। चालीस वर्ष से अधिक समय तक फिरोजशाह ने नगर पर तन मन धन बलिदान कर दिया। इस समय भारत प्रचारवादियो के सामने बहुत से क्षेत्र खुले हैं और फिर भौतिकवाद की भावना भी बढ रही है। क्या ऐसे मे भी उनका उत्तराधिकारी मिलना सम्भव है? प्राय कहा जाता है कि ससार मे कोई भी व्यक्ति अपरिहार्य नही है। परन्तु जब प्रतिष्ठित व्यक्तियो का स्थान भी शीघ्रता से भरा जाता है तो हम दुख होता है। यह सब कुछ होते हुए भी हमे यह कहना पडेगा कि बम्बई नगर के जीवन म फिरोजशाह के अभाव की पूर्ति कभी नही हो पाएगी—उनकी मृत्यु से हम सब महसूस करते हैं कि हमे बहुत हानि पहुची है।"

उनकी मृत्यु के कुछ दिन पश्चात बम्बई के नागरिको की एक सभा हुई। यह सभा फिरोजशाह की मृत्यु पर जनता के शोकप्रदर्शन की उपयुक्त परिणति थी। यह सभा 10 दिसम्बर 1915 को हुई। सभा का स्थान कांग्रेस के होने वाले अधिवेशन के लिए खडा किया गया शामियाना था। इस सभा के प्रबन्धको का विचार था कि इस अवसर पर हजारों लोग आएगे और टाउन हाल म इतने लोगो के लिए जगह नहीं होगी।

बम्बई नगर ने जनता द्वारा किसी नेता के सम्मान का ऐसा भव्य प्रदर्शन कभी नही देखा था। समय से पहले ही शामियाना भर गया। दस हजार से अधिक व्यक्ति एकत्रित हुए। बम्बई नगर के हर समुदाय ने इस सभा मे भाग लिया। लार्ड विलिंगडन सभापति थे। मच पर इनके साथ ही लेडी विलिंगडन भी बैठी हुई थी। सभामच पर बडौदा के महाराजा गायकवाड और बम्बई प्रदेश के प्रतिष्ठित और मुख्य नागरिक भी थे।

सभा के आरम्भ मे सभापति महोदय ने लार्ड हार्डिंग द्वारा भेजा हुआ तार पढकर सुनाया। लार्ड हार्डिंग ने इस तार मे लिखा था कि वे इस अवसर पर बम्बई के नागरिकों के शोक मे सम्मिलित होना चाहते हैं। इस सदेश म लिखा था कि फिरोजशाह पारसी समुदाय क महान सदस्य, एक महान नागरिक, महान देशभक्त और महान भारतीय थे। जिस सकट काल से देश गुजर रहा है उसे देखत हुए भारत उनकी हानि को सहने मे असमर्थ था। लार्ड विलिंगडन के भाषण म फिरोजशाह के प्रति बहुत ही मनोहर शब्दो का प्रयोग किया गया था और इस भाषण की स्वर शैली बहुत ही उदार थी।

जहा तक किसी नेता के प्रति श्रद्धा तथा प्रेम का सम्बन्ध है, यह सभा अद्वितीय थी। बम्बई नगर म आज तक ऐसी सार्वजनिक सभा नही हुई थी। यह श्रद्धाजलि प्रदान करना बम्बई नगर के लिए उपयुक्त ही था। जिस महान पुरुष ने चालीस साल से अधिक नगर की सेवा की थी और अपना सब कुछ अर्पण करके नगर के राजनैतिक जीवन को अलकृत और उन्नत किया था तथा इस नगर को भारत का प्रथम नगर और ब्रिटिश साम्राज्य में दूसरे नम्बर का नगर बना दिया था, उसके प्रति यह सभा एक उपयुक्त श्रद्धाजलि थी।

उपसहार

फिरोजशाह के सावजनिक जीवन का मूल्याकन करते समय यह याद रखना आवश्यक है कि उनके बहुत से सिद्धाता की नीव उनके आरम्भिक जीवन की शिक्षा और वातावरण मे पडी। उन्हें एक ऐसे गुरु से शिक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य मिला जो बहुत विद्वान थे तथा जिनका दृष्टिकोण बहुत ही उदार था। जब वह इगलण्ड गए तो उनका मन पश्चिमी सभ्यता के विचारों और प्रभावो को ग्रहण करने के लिए पूण रूप से तयार था।

जिस समय वह वकालत की पढाई कर रहे थे तो वह दादाभाई नौरोजी के प्रभाव मे आए। दादाभाई नौरोजी के देशप्रेम तथा देश की स्वतन्त्रता और प्रगति की लगन से फिरोजशाह प्रेरित हुए। ससार मे क्या हो रहा है तथा कौनसी सामाजिक तथा राजनतिक शक्तिया काम कर रही हैं, यह जानने के लिए फिरोजशाह बहुत इच्छुक थे।

उस समय की उदारवादी विचारधारा ने उन पर बहुत प्रभाव डाला। यद्यपि उनके जीवन म कई निराशाजनक स्थितिया आइ फिर भी उदारवाद के सिद्धात पर उनकी निष्ठा म कमी नही आई। मि० ग्लैडस्टन के शब्दो मे यह काल आन्दोलन और प्रत्याशा का था। इस विचारधारा ने फिरोजशाह के युवा मन पर गहरी छाप डाली। प्रारम्भिक प्रशिक्षण के साथ साथ फिरोजशाह का स्वभाव भी उनके लिए एक भारी देन था। वह एक दृढ आशावादी थे और समस्याओ का सामना बहुत शान्ति धैय और विश्वास के साथ करते थ। उन्ह अपने सिद्धात और कायप्रणाली पर पूरा विश्वास था। वह जानते थे कि अत में उन्हें सफलता अवश्य ही मिलेगी। शत्रुओ का द्वेष, मित्रो की उदासीनता, अधिकारीगणा का डर उनके विश्वास को डांवाडोल नहीं कर सका।

अपनी पीढ़ी के बहुत से और व्यक्तियों की तरह उन्हें भी पूर्ण विश्वास था कि ब्रिटेन के साथ सम्बन्ध बनाए रखने से भारत को लाभ होगा। भारत के ऊपर ब्रिटिश राज्य की त्रुटियों, दोषों और शासन के अन्यायों की उन्होंने बहुत निर्भीकता से आलोचना की। जनता के अधिकारों के विस्तार के लिए बड़े उत्साह से संघर्ष करने वाला व्यक्ति उनके समान दूसरा नहीं था। इतना होते हुए भी वह ब्रिटेन से सम्बन्ध बनाए रखने के भारी समर्थक थे, क्योंकि वह समझते थे कि देश की स्थिति दुर्बल है। उन्हें विश्वास था कि यद्यपि अंग्रेजी राज्य में बहुत सी त्रुटियां हैं फिर भी इस शासन का मुख्य आधार न्याय और मानवता है। इसके साथ उनके मन में वैधानिक सत्ता के प्रति गहरी श्रद्धा थी। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा ने उनके मन में वैधानिक सत्ता के प्रति आदर बढ़ा दिया था। फिरोजशाह की प्रभावशाली निष्ठा का उदाहरण उनका नागरिक जीवन है। प्रशासन जितना फिरोजशाह से डरता था,

कदाचित ही इतना किसी दूसरे आलोचक से डरता हो। फिर भी ये प्रशासकों के अधिकार और उनकी प्रतिष्ठा के प्रति सम्मान के गहरे समर्थक थे।

फिरोजशाह के वादविवाद के ढग मे मुख्य गुण यह था कि वह निर्भीक थे, औचित्य से काम लेते थे तथा उन्हे सावजनिक जीवन मे शिष्टाचार का सदव ध्यान रहता था। वह अपने विरोधियो पर करार प्रहार करने मे न चूकते, परन्तु उनकी आलोचना मे कभी भी आक्रमणकारी भावना अथवा घटिया वाकपटुता नही आई। उनकी शक्ति का कारण यह था कि जब वह किसी विषय पर बोलते तो बिना लाग-लपेट के अनन्य स्वतन्त्रता के साथ अपने विचार प्रकट करते थे। बम्बई के गवनर सर जेम्स वेस्टलैंड एक बार फिरोजशाह की आलोचना सुन आपे से बाहर हो गये थे। उन्होने कहा था कि फिरोजशाह ने लेजिस्लेटिव कौंसिल म एक 'नई भावना' को जन्म दिया है। उस घटना के पश्चात कौंसिल के सरकारी सदस्य फिरोजशाह का बहुत आदर करने लगे। कभी कभी ये लोग चिढ जाते और उत्तेजना मे आकर व्यक्तिगत आक्षेपो पर उतर आते। बम्बई कौंसिल मे सर फ्रेड्रिक लेली और मि० लोगन ने कई बार फिरोजशाह पर ऐसे आक्रमण किए। परन्तु फिरोजशाह ने भी इन महाशयो को ऐसा लताडा कि जो लोग वहा उपस्थित थे, बहुत समय तक इस मुठभेड को नही भूल पाए। दोबारा उन्होने ऐसा प्रयोग करने की हिम्मत नहीं की। फिरोजशाह ने अपना सारा जीवन सग्राम मे बिता दिया। यदि इन्होने दूसरो पर आक्रमण किए तो इन्हे भी अपने विरोधियो से चोटें खानी पडी। फिर भी इन्होने यायव्यवहार को तिलाजलि नही दी। अपने विरोधियो के साथ वह कभी दल का प्रयोग न करते। विरले ही अवसर ऐसे आए होगे जब कि इन्होने जल्दी मे अपने विरोधियो के प्रति अनुचित बात कही हो परन्तु जसे ही उन्हे अपनी गलती का आभास होता वह अपने कहे को वापस ले लेते।

सावजनिक जीवन की श्रेष्ठ परम्पराओ का फिरोजशाह ने बडी ईमानदारी के साथ पालन किया। अवसर पडने पर वह अपने विरोधियो की दिल खोलकर प्रशसा करने म पीछे न रहते। उस समय का राजनतिक वातावरण बहुत ही विषम था परन्तु फिरोजशाह अपने प्रतिद्वन्द्वियो की नेक नीयत को स्वीकार करने के लिए

हमेशा तैयार रहते थे तथा उनके द्वारा सहयोग और समझौते की चेष्टा का सदव स्वागत करते थे।

छोटी अवस्था म ही फिरोजशाह ने ऐसी प्रौढ चिन्तन शक्ति का प्रदशन किया जो प्राय असाधारण थी। शिक्षा सम्बन्धी विपयो पर जो विचार उन्होंने युवावस्था म स्थिर किए थे उनसे असहमत होने का अवसर उन्ह अपने सारे राजनीतिक जीवन मे नही आया। उन विचारा की तुलना फिरोजशाह के अन्तिम चिन्तन से हो सकती है और दोना मे अन्तर नही पाया जाता।

नगर प्रशासन सुधार के विषय म फिरोजशाह के विचार, जब वह केवल 25 ही साल के थे, उनकी प्रौढता का परिचय देते हैं। उनके ये विचार नगरपालिक के सविधान म सम्मिलित कर लिए गये थे और इस सविधान की मुख्य रूपरेखा 50 साल पहले से ही चली आ रही है। सिविल सर्विस मे सुधार और दलीय राजनीति म भारत क भाग लेने के प्रश्न पर उनके विचार जानने पर हम कह सकत हैं कि उनक विचार समकालीन विचारधाराओ से कही अधिक प्रगतिशील थे। उसी कारण उन्हें ऐसे लोगों से भी टक्कर लेनी पडी जो अवस्था म इनसे बडे थे तथा अधिक अनुभवी थे।

जिन गुणो के कारण सावजनिक क्षेत्र मे फिरोजशाह का प्रभुत्व था, वह थे उनका अन्तर्ज्ञानी विवेक और सिद्धान्तो पर उनकी पूण आस्था। इस तथ्य के बहुत से उदाहरण उनके राजनतिक जीवन से मिलते हैं। उदाहरण के रूप म हम प्रस कानून सम्बन्धी उनके विचारा को ले सकते हैं। जहा तक राजनतिक बुद्धिमत्ता का सम्बन्ध है वह अपने समकालीन नेताओ म सबसे अधिक दूरदर्शी थे। यही कारण है कि यह समझते हुए भी कि फिरोजशाह गल्ती पर हैं साथी उनके सामने झुक जाते थे उनके साथियो ने देखा कि फिरोजशाह का अनुमान सदा ठीक निकलता है तथा उनका सहजबोध अचूक होता है।

जिन लोगो के कधो पर राजनतिक समय मे जनता के नेतत्व का भार होता है, उनम वाक्पटुता का गुण अत्यावश्यक है यह गुण फिरोजशाह मे प्रर्याप्त मात्रा में था। फिरोजशाह के भाषणो मे विविधता काफी मात्रा में थी। इनके भाषण

शब्दाडम्बरपूर्ण होते और उनमें सम्राज्ञी विक्टोरिया के समय के राजनैतिक भाषणों का सा स्वर होता। यह भाषण टाउन हाल में हो अथवा कांग्रेस के मंच पर लोग इनके एक एक शब्द को सुनते और आनंदविभोर हो उठते। फिरोजशाह की शक्ति का कारण उनकी वाक्पटुता नहीं थी क्योंकि श्री सुरेंद्रनाथ बनर्जी, लालमोहन घोष इत्यादि दूसरे नेता वाग्मिता में फिरोजशाह से काफी बढ़े चढ़े थे परन्तु जहां तक वादविवाद की शक्ति का सम्बन्ध है फिरोजशाह की बराबरी कोई नहीं कर पाता था। फिरोजशाह अपने प्रतिद्वंद्वी को कौशलपूर्ण ढंग से चुटकियों में चित्त कर देते थे। अपने प्रतिद्वंद्वी के तर्क के मर्मस्थल वह बहुत जल्दी देख लेते और उन्हीं स्थानों पर अपनी पैनी बुद्धि के द्वारा प्रहार करते। तर्क से जो काम बच जाता उसे पूरा करने के लिए, वह हंसी मजाक और व्यंग्य का सहारा लेते जो कम ही निष्फल जाता था।

लोग इनका भाषण सुनते तो इनकी बात मानने पर विवश हो जाते। यद्यपि कई बार उनका विवेक फिरोजशाह के तर्क का कायल नहीं होता था। सीनेट में, नगरपालिका में और कांग्रेस की विषय समिति में इन्हें देश के बहुत मेधावी व्यक्तियों से टक्कर लेनी पड़ती। परन्तु ये विरोधियों को परास्त कर देते। लोग इन्हें तानाशाह कहा करते थे। कदाचित यह सच हो परन्तु जब हम देखते हैं उनसे नीचे दर्जे के मनुष्य दूसरों पर अपनी इच्छा लादना चाहते हैं तब हम समझ सकते हैं कि फिरोजशाह ने अपनी असीम शक्ति के प्रयोग में बहुत संयम से काम लिया था। फिरोजशाह स्वतंत्रता और प्रगति के प्रबुद्ध उपासक थे परन्तु कुछ समस्याओं पर उनका दृष्टिकोण रूढ़िवादी था। उनका मन बहुत ही संतुलित था और आरम्भ से ही उन्हें क्रमिक प्रगति से लगाव था। इस कारण उन्हें हिंसापूर्ण तथा आकस्मिक परिवर्तन से घृणा थी। इंग्लिश इतिहास से उन्होंने बहुत शिक्षा पाई थी। वैधानिक संस्थाओं में उनकी गहरी श्रद्धा थी। उन्हें पक्का विश्वास था कि क्रमिक और शांतिपूर्ण विकास से बहुत से लाभ हैं। एक एक कदम करके स्वतंत्रता की ओर बढ़ा जाता है।

यदि वह सरकार से कोई मांग मनवाने में सफल हो जाते, तो सरकार द्वारा दी गई रियायत से पूरा पूरा लाभ उठाते। चाहे यह रियायत अपर्याप्त ही हो। एक प्रश्न पर अपनी विजय के बाद तुरंत ही अगले संघर्ष के लिए साधन जुटाना आरम्भ

कर देते। फिरोजशाह को अन्तिम लक्ष्य की चिन्ता कभी न सताती क्योंकि वह पूर्ण विश्वास था कि समय आने पर देश को स्वतन्त्रता अवश्य ही मिलेगी। उनकी यही चेष्टा थी कि जहां तक बन पड़े देश का अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने को अग्रसर किया जाए।

फिरोजशाह से पहले उनसे बढकर देश म कोई महान नेता पदा नही हुआ। जनता तो उनसे इतनी प्रभावित नही हुई जितनी कि दादाभाई नौरोजी और श्री तिलक से थी। फिरोजशाह का प्रभाव मुख्यत शिक्षित तथा बुद्धिजीवी समुदाय पर था। जिन लोगो ने उनके साथ काम किया अथवा उनका अनुसरण किया उन पर फिरोजशाह का प्रभावशाली व्यक्तित्व और मानसिक बल छा गया था। ब्रिटन के प्रसिद्ध मन्त्री ग्लैडस्टन के बारे म किसी ने कहा था "उनकी वाग्मिता की शक्ति का यह हाल था कि जब वह भाषण देते तो घटिया वादविवाद भी ऊँचे स्तर पर आ जाता और जब वह चुपचाप बठे होते तो उनकी उपस्थिति से ही ससद मे गव और नतिक बल की भावना का सचार होता। जिसका आभास तो हो जाता परन्तु जिसका शब्दो मे वणन करना कठिन है।" फिरोजशाह पर भी यह उक्ति लागू होती है।

राजनतिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रो म फिरोजशाह के सम्पक म बहुत से प्रभावशाली व्यक्ति आए। इन व्यक्तियो ने अपनी कल्पना शक्ति और विवेक को फिरोजशाह के अधीन कर दिया जिसे देख आश्चय होता है। जो लोग इनसे मतभेद रखते, वह भी उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व के सामने अपने आप को असहाय पाते। पजाब के प्रतिनिधि की शिकायत थी कि फिरोजशाह का व्यक्तित्व सब पर छाया रहता है। यह इस बात का उदाहरण है।

जब हम उन व्यक्तियो की ओर देखते हैं जिनके ऊपर फिरोजशाह [illegible] तो हम और भी आश्चय होता है। इनम से कई एसे थे जो विचारशक्ति म फिरोज-शाह से किसी भी प्रकार कम नही थे। दूसरे एस थे जिनकी भाषण शक्ति [illegible] फिरोजशाह के बराबर थी चरित्र की स्वाधीनता म इनसे कम नहीं थे। [illegible] उनम कोई भी ऐसा व्यक्ति नही था जिसम फिरोजशाह के समान सभी गुण हो। इन

गुणो के कारण फिरोजशाह के साथी उनके प्रति श्रद्धा रखते और उनका अनुसरण करने के लिए विवश हो जाते। फिरोजशाह के सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियो पर उनके प्रभुत्व का कारण था फिरोजशाह के उपयुक्त गुण तथा उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व। यही वह रहस्य था जिसके कारण वह अपने सम्पर्क में आने वालो पर छाए रहते।

कुछ लोग ऐसे भी थे, जिन्होने फिरोजशाह के अन्तिम वर्षों की तुलना श्री गोखले से करनी चाही। इससे अधिक मूर्खता की बात और नही। सच यह है कि इन दोनो नेताओ का काय परस्पर पूरक था। गोखले ने वह काय किया जो शायद फिरोजशाह नही कर सकते थे। इसी तरह जो काय फिरोजशाह ने किए, उन्हें करने की सामथ्य श्री गोखले म न था। देश के बुद्धिजीवी वग को जागृत करने का जो काय श्री फिरोजशाह ने किया, वह श्री गोखले कदापि न कर पाते, बुद्धिजीवी वग राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति न केवल उदासीन ही था बल्कि उसका अधिकाश भाग इसका विरोधी भी था। इसी प्रकार फिरोजशाह ने निरकुशता, अन्याय तथा अत्याचार का जिस दृढता और साहस से सामना किया, वह गोखले के बश की बात न थी। इसके विपरीत गोखले ने राष्ट्रीय आन्दोलन के बारे म लोगो को शिक्षित करने और भारत तथा इगलैंड म इसका रात दिन प्रचार करने का जो काय किया फिरोजशाह स्वभावत उसके अयोग्य थे। गोखले के इस काय की सफलता का कारण, उनकी योग्यता और उनका उच्च चरित्र था। इन दोनो महान नेताओ की तुलना करना निरथक है। अपने अपने क्षेत्र म यह दोनो महान थे। जिस नवभारत की नीव दादाभाई नौरोजी ने डाली, उसके निर्माण म इन दोनो नेताओ ने उल्लेखनीय सहयोग दिया।